नवमां शतक

1. जम्बूद्वीप का सम्पूर्ण वर्णन जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के अनुसार है।

2. ज्यातिषियों (चंद्रादि) का वर्णन जीवाभिगम सूत्रानुसार है।

3. अंतर्द्वीपों का वर्णन जीवाभिगम सूत्रानुसार है।

पहले उद्देशक में जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के 6वक्षस्कार (अध्याय) का अतिदेश किया गया है। दूसरे उद्देशक में सूर्य चन्द्रादि के वर्णन के लिये सातवें वक्षस्कार का अतिदेश नहीं दिया किन्तु जीवाभिगम सूत्र का अतिदेश किया है।

इकतीसवां उद्देशक

1. असोच्चा केवली-

1. धर्म का बोध	=	ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से
2. धर्म की श्रद्धा	=	दर्शन मोह के क्षयोपशम से
3. प्रव्रज्या	=	चारित्र मोह एवं वीर्यांतराय के क्षयोपशम से
4. ब्रह्मचर्य वास	=	चारित्र मोह एवं वीर्यांतराय के क्षयोपशम से
5. संयम यतना	=	चारित्र मोह एवं वीर्यांतराय के क्षयोपशम से
6. संवर	=	चारित्र मोह एवं वीर्यांतराय के क्षयोपशम से
7-10. चार ज्ञान	=	ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम से
11. केवल ज्ञान	=	ज्ञानावरणीय के क्षय से।

केवलज्ञान प्राप्ति- निरंतर बेले-बेले पारणा करे, दोनों हाथ ऊंचे करके सूर्य के सामने आतापना लेवें, स्वभाव से भद्र हो, विनीत हो, उसे अध्यवसायों से, ज्ञानावरणीय के क्षयोपमश से, विभंग ज्ञान उत्पन्न होता है। वह जीवादि को जानता देखता है, पाखंडी एवं आरंभी-परीग्रही-संक्लिष्ट जीवों को भी देखता है, विशुद्ध जीवों को भी देखता है।

जिससे समकित प्राप्त करता है। विभंग ज्ञान अवधिज्ञान में परिणत हो जाता है। फिर यथा क्रम से चार घाती कर्मों को क्षय करके केवल ज्ञान, केवल दर्शन, प्राप्त करता है।

अवधिज्ञान होने के समय- 3 शुभ लेश्या, 3 ज्ञान, तीनों योग, दोनों उपयोग होते हैं। सहंनन प्रथम, संस्थान, 6. अवगाहना 500 धनुष उत्कृष्ट, वेद पुरुष एवं पुरुष नपुंसक, संज्वलन का चौक, प्रशस्त अध्यवसाय।

वे केवली बनकर अन्य लिंग से स्वलिंग धारण करने के पूर्व उपदेश (प्रवचन) नहीं देते हैं। व्यक्तिगत प्रश्न उत्तर एवं बोध दे सकते हैं। दीक्षा नहीं देते किन्तु निर्देश कर सकते हैं।

ये केवली तीनों लोक में हो सकते हैं। वृत वैताढ्य, सोमनसवन, पंडकवन, पाताल कलश आदि में हो सकते हैं।

ये केवली एक समय में उत्कृष्ट (10) दस हो सकते हैं। यह सब वर्णन अन्य लिंग वाले असोच्चा केवली की अपेक्षा है।

सोच्चा केवली- असोच्चा के समान वर्णन है। विशेष- यह स्वलिंगी की अपेक्षा कथन है। तेले तेले निरंतर तप से आत्मा को संयम तप में भावित करता है। अवधिज्ञान उत्पन्न होता है। उत्कृष्ट असंख्य लोक खंड देख सकने जितना होता है।

स्वलिंगी होने से दीर्घ काल की अपेक्षा लेश्या 6कही गई है। उत्कृष्ट ज्ञान 4 होते हैं एवं योग उपयोग आदि असोच्चा के समान है।

दीर्घकाल की अपेक्षा सवेदी अवेदी दोनों कहे हैं स्त्री, पुरुष एवं पुरुष नपुंसक हो सकते हैं। संज्वलन कषाय 4-3-2 या 1 हो सकता है, अकषायी भी होता है।

प्रशस्त अध्यवसायों से केवल ज्ञान उत्पन्न होता है, वे केवली उपदेश भी देते हैं, दीक्षा भी देते हैं, क्योंकि स्वलिंगी ही है।

एक समय में ये उत्कृष्ट 108 हो सकते हैं। अर्थात् 108 केवली एक साथ में बन सकते हैं। 108 एक साथ मोक्ष जा सकते हैं।

बतीसवां उद्देशक-

गांगेय अणगार- नरक प्रवेशनक-

एक जीव- नरक में जावे तो 7 भंग हो सकते हैं- पहली में जावे या दूसरी में यावत् सातवी में जावे।

दो जीव- नरक में जावे तो 28भंग हो सकते हैं- असंयोगी 7 भंग उपरोक्त अनुसार अर्थात् दोनों में पहली में, दूसरी में यावत् दोनों सातवीं में।

द्वि संयोगी 21 भंग- एक पहली में एक दूसरी में, यों एक पहली में यावत् एक सातवी में, ये 6भंग पहली नरक को कायम रखने से बने। फिर पहली को छोड़कर दूसरी को कायम रखने से 5, तीसरी को कायम रखने से 4, चौथी को कायम रखने से, 3. पांचवीं को कायम रखने से 2 और छठ्ठी सातवीं से 1 भंग ये कुल - 6+5+4+3+2+1 = 21

तीन जीव- नरक में जावे तो 84 भंग हो सकते है। असंयोगी 7 द्वि संयोगी 42 (एक जीव बढ़ जाने से 21+21 हो गये)

द्विसंयोगी 21 पद-	12, 13, 14, 15, 16, 17	= 6 पद
	23, 24, 25, 26, 27	= 5 पद
	34, 35, 36, 37	= 4 पद
	45, 46, 47	= 3 पद
	56, 57	= 2 पद
	67	= 1 पद कुल 21 पद
तीन संयोगी 35 पद-	123, 124, 125, 126, 127, 134, 135, 136, 137,	
	145, 146, 147, 156, 157, 167	= 15 पद
	234, 235, 236, 237, 245, 246, 247, 256, 257, 267	= 10 पद
	345, 346, 347, 356, 357, 367	= 6 पद
	456, 457, 467	= 3 पद
	467	= 1 पद
		35 पद

चार संयोगी 35 पद-	1234, 1235, 1236, 1237, 1245, 1246, 1247 1256, 1257, 1267, 1345, 1346, 1347, 1356 1357, 1367, 1456, 1457, 1467, 1567 2345, 2346, 2347, 2356, 2357, 2367 2456, 2457, 2467, 2567 3456, 3457, 3467, 3567 4567	 = 20 पद = 10 पद = 4 पद = 1 पद = 35 पद
पाँच संयोगी 21 पद- छ संयोगी 7 पद-	12345, 12346, 12347, 12356, 12357, 12367, 12456, 12457, 12467, 12567, 13456, 13457, 13467, 13567, 14567 23456, 23457, 23467, 23567, 24567 34567 123456, 123457, 123467, 123567 124567, 134567 234567	 = 15 पद = 5 पद = 1 पद = 21 पद = 6 पद = 1 पद = 7 पद
सात संयोगी 1 पद-	1234567	= 1 पद, ये कुल 127 पद हुए।
	7+21+35+35+21+7+1=127 पद	

असंयोगी 1 विकल्प	सातों एक साथ जावे	= 1 विकल्प
दो संयोगी 6 विकल्प	16, 25, 34, 43, 52, 61	= 6 विकल्प
तीन संयोगी 15 विकल्प-	115, 124, 214 133, 223, 313, 142, 232, 322, 412, 151, 241, 331, 421, 511	= 1 विकल्प = 2 विकल्प = 3 विकल्प = 4 विकल्प = 5 विकल्प = 15 विकल्प
चार संयोगी=20 विकल्प-	1114 1123, 1213, 2113 1132, 1222, 2122, 1312, 2212, 3112 1141, 1231, 2131, 1321, 2221, 3121 1411, 2311, 3211, 4111	1 विकल्प 3 विकल्प = 12 विकल्प = 4 विकल्प = 20 विकल्प
पाँच संयोगी=15 विकल्प-	11113, 11122, 11212, 12112, 21112, 11131, 11221, 12121, 21121 11311, 12211, 21211, 13111 22111, 31111,	= 1 विकल्प = 4 विकल्प = 10 विकल्प = 15 विकल्प
छ संयोगी 6 विकल्प-	111112 111121, 111211, 112111, 121111, 211111	= 1 विकल्प = 5 विकल्प = 6 विकल्प
7 संयोगी 1 विकल्प-	1111111	= 1 विकल्प = 64 विकल्प

तीन संयोगी 35 भंग– एक पहली में एक दूसरी में एक तीसरी में, यों एक पहली में एक दूसरी में एक सातवीं में, ये 5 भंग पहली दूसरी को कायम रखने से बने। इसी तरह पहली तीसरी को कायम रखने से 4, पहली चौथी को कायम रखने से 3, पहली पांचवी को कायम रखने से 2 और पहली छट्ठी सातवी से 1 भंग बना, ये कुल 5+4+3+2+1 = 15 भंग पहली को कायम रखने से बने। पहली को छोड़कर दूसरी को कायम रखने से 4+3+2+1 = 10 भंग बने। दूसरी को छोड़कर तीसरी को कायम रखने से 3+2+1 = 6 भंग बने। चौथी को कायम रखने से 2+1 = 3 भंग बने एवं पांचवीं छट्ठी सातवीं से 1 भंग बना। यो कुल 15+10+6+3+1 = 35 इस प्रकार से द्वि संयोगी और संयोगी के भंग बनाकर बताये गये हैं। इसी विधि से आगे भी भंग समझ लेना चाहिये। भंग संख्या चार्ट में देखें।

सात नारकी के सम्पूर्ण भंग–

नरक एकादि जीवों का असंजोगादि भांगो का यंत्र–

जीव	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	6 संयोगी	7 संयोगी	भांगों का योग
1	7	–	–	–	–	–	–	7
2	7	21	–	–	–	–	–	28
3	7	42	35	–	–	–	–	84
4	7	63	105	35	–	–	–	210
5	7	84	210	140	21	–	–	462
6	7	105	350	350	105	7	–	924
7	7	126	525	700	315	42	1	1716
8	7	147	735	1225	735	147	7	3003
9	7	168	980	1960	1470	392	28	5005
10	7	189	1260	2940	2646	882	84	8008
संख्याता	7	231	735	1085	861	357	61	3337
असंख्याता	7	252	805	1190	945	392	67	3658
उत्कृष्ट	1	6	15	20	15	6	1	64

तिर्यंच के एकादि जीवों के असंजोगादि भांगे

जीव संख्या	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	कुल भंग
1	5	–	–	–	–	5
2	5	10	–	–	–	15
3	5	20	10	–	–	35
4	5	30	30	5	–	70
5	5	40	60	20	1	126
6	5	50	100	50	5	210
7	5	60	150	100	15	330
8	5	70	210	175	35	495
9	5	80	280	280	70	715
10	5	90	360	420	126	1001
संख्यात	5	110	210	155	41	521
असंख्यात	5	120	230	170	45	570
उत्कृष्ट	1	4	6	4	1	16

मनुष्य के संपूर्ण भंग

जीव संख्या	असंयोगी	दो संयोगी	कुल
1	2	–	2
2	2	1	3
3	2	2	4
4	2	3	5
5	2	4	6
6	2	5	7
7	2	6	8
8	2	7	9
9	2	8	10
10	2	9	11
संख्यात	2	11	13
असंख्यात	1	11	12
उत्कृष्ट	1	1	2

चार जाति के देवों के प्रवेशनक भंग

जीव जसंख्या	असंयोगी	दो संयोगी	तीन संयोगी	चार संयोगी	कुल भंग
1	4	–	–	–	4
2	4	6	–	–	10
3	4	12	4	–	20
4	4	18	12	1	35
5	4	24	24	4	56
6	4	30	40	10	84
7	4	36	60	20	120
8	4	42	84	35	165
9	4	48	112	56	220
10	4	54	144	84	286
संख्याता	4	66	84	31	185
असंख्याता	4	72	92	34	202
उत्कृष्ट	1	3	3	1	8

पद विकल्प– जीव संख्या के भंगों को ''विकल्प'' कहा जाता है, ये विकल्प जीव संख्या बढ़ते जाते हैं और सात नरक आदि स्थानों के जो भंग बनते हैं, वे स्थिर रहते हैं। उन्हें पद कहते हैं। स्थिर पद संख्या को अस्थिर विकल्प संख्या से गुणा करने पर भंग संख्या आ जाती है यथा- सात और आठ जीव की सात नरक में विकल्प, पद एवं भंग संख्या इस प्रकार है-

सात जीव के भंग

विकल्प	पद	भंग
9 ×	7	= 7
6 ×	21	= 126
15 ×	35	= 525
20 ×	35	= 700
15 ×	21	= 315
6 ×	7	= 42
1 ×	1	= 1
64	**127**	**= 1716 भंग**

आठ जीव के भंग

विकल्प	पद	भंग
1 ×	7	= 7
7 ×	21	= 147
21 ×	35	= 735
35×	35	= 1225
35 ×	21	= 735
21 ×	7	= 147
7 ×	1	= 7
127	**127**	**= 3003 भंग**

5 जीव – 5 प्रवेशनक

	विकल्प	पद	भंग
असंयोगी	1 ×	5	= 5
द्वि संयोगी	4 ×	10	= 40
तीन संयोगी	6 ×	10	= 60
चार संयोगी	4 ×	5	= 20
पांच संयोगी	1 ×	1	= 1
		कुल भंग	**126**

इन दोनों तालिका में पद संख्या स्थिर है और विकल्प संख्या सात जीव की अपेक्षा आठ जीव में अधिक है।

पद एवं विकल्प निकालने के तरीके तथा भंग जानने के तरीके चार्ट से समझें। संख्यात जीव में एक बोल ही संख्यात का बढ़ाया जाता है। बारम्बार संख्या वृद्धि नहीं की जाती है इसलिय तीन संयोगी आदि में 10 जीवों की अपेक्षा भी इसमें विकल्प और भंग दोनों ही कम बनते हैं। इसी तरह असंख्यात में भी समझना। उनमें 12 बोल होते हैं और संख्यात में 11 बोल होते हैं।

उत्कृष्ट जीव प्रवेशनक में भंग बहुत कम बनते हैं क्योंकि इसमें पहली नरक नहीं छोड़ी जाती है एवं एक दो संख्या नहीं कह कर केवल असंख्य असंख्य ही कहा जाता है। इसी कारण असंयोगी आदि सभी भंग कम कम ही बनते हैं। चार्ट में देखें।

एकादि जीव जिस गति में प्रवेश करते हैं, उनके पद विकल्प भांगा संक्षेप में–

जीव	स्थान के पद	12 देवलोक संजोगी पद	7 नरक संजोगी पद	तिर्यंच संजोगी पद	मनुष्य संजोगी पद	देव संजोगी
1	1	12	7	5	2	4
2	3	66	21	10	1	6
3	7	220	35	10		4
4	15	495	35	5		1
5	31	792	21	1		
6	63	924	7			
7	127	792	1			
8	255	495				
9	511	220				
10	1023	66				
11	2047	12				
12	4095	1				

नारकी के सात मुख्य प्रवेशनक से भंग कहे गये हैं इसी विधि से तिर्यंच के एकेन्द्रियादि पांच प्रवेशनक से भंग जानना चाहिये। मनुष्य के सन्नी असन्नी दो प्रवेशनक से देवों भवनपति आदि चार प्रवेशनक से भंग जानने चाहिये। 12 देवलोक की अपेक्षा 12 प्रवेशनक के भंग भी चार्ट में समझाये गये हैं।

उत्कृष्ट के भंगों का ज्ञान-

1.	प्रवेशनक	1
2.	प्रवेशनक	2
3.	प्रवेशनक	4
4.	प्रवेशनक	8
5.	प्रवेशनक	16
6.	प्रवेशनक	32
7.	प्रवेशनक	64

इस तरह आगे दुगुना दुगुना करना चाहिये।

(2) 6-1 = 63

पद निकालने का तरीका

दो स्थान के पद

$1 \times 2 \div 1 = 2$

$2 \times 1 = 2 \div 2 = 1$

$(2)^2 - 1 = \mathbf{3}$

तीन स्थान के पद

$1 \times 3 = 3 \div 1 = 3$

$3 \times 2 = 6 \div 2 = 3$

$3 \times 1 = 3 \div 3 = 1$

$(2)^3 - 1 = \mathbf{7}$

चार स्थान के पद

$1 \times 4 = 4 \div 1 = 4$

$4 \times 3 = 12 \div 2 = 6$

$6 \times 2 = 12 \div 3 = 4$

$4 \times 1 = 4 \div 4 = 1$

$(2)^4 - 1 = \mathbf{15}$

पांच स्थान के पद

$1 \times 5 = 5 \div 1 = 5$

$5 \times 4 = 20 \div 2 = 10$

$10 \times 3 = 30 \div 3 = 10$

$10 \times 2 = 20 \div 4 = 5$

$5 \times 1 = 5 \div 5 = 1$

$(2)^5 - 1 = \mathbf{31}$

छः स्थान के पद

$1 \times 6 = 6 \div 1 = 6$

$6 \times 5 = 30 \div 2 = 15$

$15 \times 4 = 60 \div 3 = 20$

$20 \times 3 = 60 \div 4 = 15$

$15 \times 2 = 30 \div 5 = 6$

$6 \times 1 = 6 \div 6 = 1$

$(2)^6 - 1 = \mathbf{63}$

सात स्थान के पद

$1 \times 7 = 7 \div 1 = 7$

$7 \times 6 = 42 \div 2 = 21$

$21 \times 5 = 105 \div 3 = 35$

$35 \times 4 = 140 \div 4 = 35$

$21 \times 2 = 42 \div 6 = 7$

$7 \times 1 = 7 \div 7 = 1$

$(2)^7 - 1 = \mathbf{127}$

12 स्थान के पद

$1 \times 12 = 12 \div 1 = 12$

$12 \times 11 = 132 \div 2 = 66$

$66 \times 10 = 660 \div 3 = 220$

$220 \times 9 = 1980 \div 4 = 495$

$495 \times 8 = 3960 \div 5 = 792$

$792 \times 7 = 5554 \div 6 = 924$

$924 \times 6 = 5554 \div 7 = 792$

$792 \times 5 = 3960 \div 8 = 495$

$495 \times 4 = 1980 \div 9 = 220$

$220 \times 3 = 660 \div 10 = 66$

$66 \times 2 = 132 \div 11 = 12$

$12 \times 1 = 12 \div 12 = 1$

4095

नोट– इसी विधि से 8-9-10-11 आदि स्थानों के पद निकाले जा सकते हैं।

विकल्प निकालने का तरीका

जीव संख्या — **विकल्प**

1 जीव

$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	असंयोगी

2 जीव

$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	असंयोगी
$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	द्विसंयोगी
2	

3 जीव

$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	असंयोगी
$1 \times 2 = 2 \div 1 = 2$	द्विसंयोगी
$2 \times 1 = 2 \div 2 = 1$	तीन संयोगी
4	

4 जीव

$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	असंयोगी
$1 \times 3 = 3 \div 1 = 3$	द्विसंयोगी
$3 \times 2 = 6 \div 2 = 3$	तीन संयोगी
$3 \times 1 = 3 \div 3 = 1$	चार संयोगी
8	

5 जीव

$1 \times 1 = 1 \div 1 = 1$	असंयोगी
$1 \times 4 = 4 \div 1 = 4$	द्विसंयोगी
$4 \times 3 = 12 \div 2 = 6$	तीन संयोगी
$6 \times 2 = 12 \div 3 = 4$	चार संयोगी
$4 \times 1 = 4 \div 4 =$	पांच संयोगी
16	

6 जीव

1 × 1 = 1 ÷ 1 = 1	असंयोगी
1 × 5 = 5 ÷ 1 = 5	द्विसंयोगी
5 × 4 = 20 ÷ 2 = 10	तीन संयोगी
10 × 3 = 30 ÷ 3 = 10	चार संयोगी
10 × 2 = 20 ÷ 4 = 5	पांच संयोगी
5 × 1 = 5 ÷ 5 = 1	छः संयोगी
32	

7 जीव

1 × 1 = 1 ÷ 1 = 1	असंयोगी
1 × 6 = 6 ÷ 1 = 6	द्विसंयोगी
6 × 5 = 30 ÷ 2 = 15	तीन संयोगी
15 × 4 = 60 ÷ 3 = 20	चार संयोगी
20 × 3 = 60 ÷ 4 = 15	पांच संयोगी
15 × 2 = 30 ÷ 5 = 6	छः संयोगी
6 × 1 = 6 ÷ 6 = 1	सात संयोगी
64	

विकल्प निकालने का तरीका

8 जीव

1 × 1 = 1 ÷ 1 = 1	असंयोगी
1 × 7 = 7 ÷ 1 = 7	द्विसंयोगी
7 × 6 = 42 ÷ 2 = 21	तीन संयोगी
21 × 5 = 105 ÷ 3 = 35	चार संयोगी
35 × 4 = 140 ÷ 4 = 35	पांच संयोगी
35 × 3 = 105 ÷ 5 = 21	छः संयोगी
21 × 2 = 42 ÷ 6 = 7	सात संयोगी
7 × 1 = 7 ÷ 7 = 1	आठ संयोगी
128	

9 जीव

1 × 1 = 1 ÷ 1 = 1	असंयोगी
1 × 8 = 8 ÷ 1 = 8	द्विसंयोगी
8 × 7 = 56 ÷ 2 = 28	तीन संयोगी
28 × 6 = 168 ÷ 3 = 56	चार संयोगी
56 × 5 = 280 ÷ 4 = 70	पांच संयोगी
70 × 4 = 280 ÷ 5 = 56	छः संयोगी
56 × 3 = 168 ÷ 6 = 28	सात संयोगी
28 × 2 = 56 ÷ 7 = 8	आठ संयोगी
8 × 1 = 8 ÷ 8 = 1	नौ संयोगी
256	

10 जीव

1 × 1 = 1 ÷ 1 = 1	असंयोगी
1 × 9 = 9 ÷ 1 = 9	द्विसंयोगी
9 × 8 = 72 ÷ 2 = 36	तीन संयोगी
36 × 7 = 252 ÷ 3 = 84	चार संयोगी
84 × 6 = 504 ÷ 4 = 126	पांच संयोगी
126 × 5 = 630 ÷ 5 = 126	छः संयोगी
126 × 4 = 504 ÷ 6 = 84	सात संयोगी
84 × 3 = 252 ÷ 7 = 36	आठ संयोगी
36 × 2 = 72 ÷ 8 = 9	नौ संयोगी
9 × 1 = 9 ÷ 9 = 1	दस संयोगी
512	

1. सात नरक का भंग निकालने की विधि – (1 जीव से 10 जीव तक)

1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1	3	6	10	15	21	28	36	45	55
1	4	10	20	35	56	84	120	165	220
1	5	15	35	70	126	210	330	495	715
1	6	21	56	126	252	462	792	1287	2002
1	7	28	84	210	462	924	1716	3003	5005
7	28	84	210	462	924	1716	3003	5005	8008

विधि– पहली पंक्ति के दूसरी तीसरी आदि संख्या को दूसरी पंक्ति की क्रमशः पहली दूसरी आदि संख्या से जोड़ने पर दूसरी पंक्ति की दूसरी तीसरी संख्या निकलती है।

2. सात नरक में 10 जीव तक के भंग निकालना–

1 जीव	1 × 7 =	7 ÷ 1 =	7 भंग
2 जीव	7 × 8 =	56 ÷ 2 =	28 भंग
3 जीव	28 × 9 =	252 ÷ 3 =	84 भंग
4 जीव	84 × 10 =	840 ÷ 4 =	210 भंग
5 जीव	210 × 11 =	2310 ÷ 5 =	462 भंग
6 जीव	462 × 12 =	5544 ÷ 6 =	924 भंग
7 जीव	924 × 13 =	12012 ÷ 7 =	1716 भंग
8 जीव	1716 × 14 =	24024 ÷ 8 =	3003 भंग
9 जीव	3003 × 15 =	45045 ÷ 9 =	5005 भंग
10 जीव	5005 × 16 =	80080 ÷ 10 =	8008 भंग

विधि– सात नरक प्रवेशनक के भंग निकालने है अतः सर्व प्रथम 1 को 7 से गुणा किया जाता है। फिर एक जीव के भंग निकालने हैं अतः एक का भाग दिया जाता है। उसके बाद एक जीव की भंग संख्या को अगले अंक 8 से गुणा कर 2 से भाग देने पर दो जीव के भंग निकलते हैं इस तरह आगे-आगे की संख्या से गुणा कर जीव संख्या से भाग देने पर उतने जीवों के भंग निकल जाते हैं।

सात नरक के पदों का स्पष्टीकरण

नोट- यहाँ सभी अंक पहली दूसरी आदि नारकी के हैं।

असंयोगी
पहली में सभी
दूसरी में सभी
तीसरी में सभी
चौथी में सभी
पांचवी में सभी
छट्ठी में सभी
सातवी में सभी
7 भंग

द्वि संयोगी
पहली दूसरी
पहली तीसरी
पहली चौथी
पहली पांचवी
पहली छट्ठी
पहली सातवी

2-3
2-4
2-5
2-6
2-7
3-4
3-5
3-6
3-7
4-5
4-6
4-7
5-6
5-7
6-7
21 पद

तीन संयोगी
1-2-3
1-2-4
1-2-5
1-2-6
1-2-7
1-3-4
1-3-5
1-3-6
1-3-7
1-4-5
1-4-6
1-4-7
1-5-6
1-5-7
1-6-7
2-3-4
2-3-5
2-3-6
2-3-7
2-4-5
2-4-6
2-4-7
2-5-6
2-5-7
2-6-7
3-4-5
3-4-6
3-4-7
3-5-6
3-5-7
3-6-7
4-5-6
4-5-7
4-6-7
5-6-7
35 पद

चार संयोगी
1-2-3-4
1-2-3-5
1-2-3-6
1-2-3-7
1-2-4-5
1-2-4-6
1-2-4-7
1-2-5-6
1-2-5-7
1-2-6-7
1-3-4-5
1-3-4-6
1-3-4-7
1-3-5-6
1-3-5-7
1-3-6-7
1-4-5-6
1-4-5-7
1-4-6-7
1-5-6-7
2-3-4-5
2-3-4-6
2-3-4-7
2-3-5-6
2-3-5-7
2-3-6-7
2-4-5-6
2-4-5-7
2-4-6-7
2-5-6-7
3-4-5-6
3-4-5-7
3-4-6-7
3-5-6-7
4-5-6-7
35 पद

पांच संयोगी 21 पद
1-2-3-4-5
1-2-3-4-6
1-2-3-4-7
1-2-3-5-6
1-2-3-5-7
1-2-3-6-7

1-2-4-5-6
1-2-4-5-7
1-2-4-6-7
1-2-5-6-7
1-3-4-5-6
1-3-4-5-7
1-3-4-6-7
1-3-5-6-7
1-4-5-6-7
2-3-4-5-6
2-3-4-5-7
2-3-4-6-7
2-3-5-6-7
2-4-5-6-7
3-4-5-6-7

21 पद

छः संयोगी सात पद

1-2-3-4-5-6
1-2-3-4-5-7
1-2-3-4-6-7
1-2-3-5-6-7
1-2-4-5-6-7
1-3-4-5-6-7
2-3-4-5-6-7

7 पद

सात संयोगी एक पद

कुल 128 पद

10 जीव के 7 संयोगी तक विकल्पों का स्पष्टीकरण

नोट- यहाँ सभी अंक जीव संख्या के हैं।

द्वि संयोगी में

1-9
2-8
3-7
4-6
5-5
6-4
7-3
8-2
9-1

तीन संयोगी 36

1-1-8
1-2-7
1-3-6
1-4-5
1-5-4
1-6-3
1-7-2
1-8-1
2-1-7
2-2-6
2-3-5
2-4-4
2-5-3
2-6-2
2-7-1
3-1-6
3-2-5
3-3-4
3-4-3
3-5-2
3-6-1
4-1-5
4-2-4
4-3-3
4-4-2
4-5-1
5-1-4
5-2-3
5-3-2
5-4-1
6-1-3
6-2-2
6-3-1
7-1-2
7-2-1
8-1-2

चार संयोगी 84

1-1-1-7
1-1-2-6
1-1-3-5
1-1-4-4
1-1-5-3
1-1-6-2
1-1-7-1

ये दूसरे अंक को

1 रखने से - 7
2 रखने से - 6
3 रखने से - 5
4 रखने से - 4
5 रखने से - 3
6 रखने से - 2
7 रखने से - 1

28

ये पहले अंक को

1 रखने से - 28
2 रखने से - 21
3 रखने से - 15
4 रखने से - 10
5 रखने से - 6
6 रखने से - 3
7 रखने से - 1

84

5 संयोगी 126

1-1-1-1-6
1-1-1-2-5
1-1-1-3-4
1-1-1-4-3
1-1-1-5-2
1-1-1-6-1

ये तीसरे अंक को

1 रखने से - 6 विकल्प

2 रखने से - 5
3 रखने से - 4
4 रखने से - 3
5 रखने से - 2
6 रखने से - 1

21 विकल्प

ये दूसरे अंक को

1 रखने से - 21

2 रखने से - 15

3 रखने से - 10

4 रखने से - 6

5 रखने से - 3

6 रखने से - 1

56 विकल्प

ये पहले अंक को

1 रखने से - 56

2 रखने से - 35

3 रखने से - 20

4 रखने से - 10

5 रखने से - 4

6 रखने से - 1

126 विकल्प

छः संयोगी - 126

1-1-1-1-1-5

1-1-1-1-2-4

1-1-1-1-3-3

1-1-1-1-4-2

1-1-1-1-5-1

ये चौथे अंक को 1 रखने से 5 विकल्प, फिर चौथे अंक को 2-3-4-5 करने से 4-3-2-1 विकल्प हुए। इस प्रकार तीसरे अंक के एक रखने से 5+4+3+2+1 = 15 भंग हुए। फिर तीसरे अंक को 2-3-4-5 करने से 10-6-3-1 विकल्प हुए। इस प्रकार दूसरे अंक को एक रखने से ये 15+10+6+3+1 = 35 विकल्प हुए। फिर दूसरे अंक को 2-3-4-5 करने से 20-10-4-1 विकल्प हुए।

इस प्रकार पहले अंक को एक रखने से ये 35+20+10+4+1 = 70 विकल्प हुए। फिर पहले अंक को 2-3-4-5 करने से 35-15-5-1 विकल्प हुए। इस प्रकार ये कुल 70+35+15+5+1 = 126 विकल्प हुए।

सात संयोगी - 84

1-1-1-1-1-1-4

1-1-1-1-1-2-3

1-1-1-1-1-3-2

1-1-1-1-1-4-1

ये पांचवे पद को 1 रखने से 4 विकल्प। फिर पांचवे पद को 4 तक बदलने पर कुल 4+3+2+2+1 = 10 विकल्प चौथे पद के एक रहने से बने। फिर उसे 2-3-4 करने पर 10-6-3-1 = 20 विकल्प बने। ये तीसरे पद के एक रहने पर बने। फिर उसे 4 तक बदलने पर कुल 20+10+5+1 = 35 विकल्प बने। फिर दूसरे पद के परिवर्तन से कुल 35+15+5+1 = 84 विकल्प बने।

नोट- इसी तरह 9-8-7-6 आदि जीवों के विकल्प भी बनते हैं।

4 जीवों से उत्कृष्ट जीवों तक के भंग

नोट- तीन जीव तक के भंग प्रारम्भ में ही बता दिये गये हैं।

4 जीव 210 भंग

असंयोगी 7

द्वि संयोगी 63 भंग

1 जीव 3 जीव से 6 भंग

2 जीव 2 जीव से 6 भंग

3 जीव 1 जीव से 6 भंग

1 जीव 3 जीव से 6 भंग

ये पहली नरक से - 18 भंग (6 × 3)

ये दूसरी नरक से - 15 भंग (5 × 3)

ये तीसरी नरक से - 12 भंग (4 × 3)

ये चौथी नरक से - 9 भंग (3 × 3)

ये पांचवी नरक से - 6 भंग (2 × 3)

ये छट्ठी नरक से - 3 भंग (1 × 3)

63 भंग

तीन संयोगी – 105 भंग

1-1-2 जीव से 5 भंग

1-2-1 जीव से 5 भंग

2-1-1 जीव से 5 भंग

1-2 नरक को स्थिर रखते 15 भंग

1-3 नरक को स्थिर रखते 12 भंग

1-4 नरक को स्थिर रखते 9 भंग

1-5 नरक को स्थिर रखते 6 भंग

1-6 नरक को स्थिर रखते 3 भंग

पहली को स्थिर रखते = 45 भंग

दूसरी को स्थिर रखते = 30 भंग

तीसरी को स्थिर रखते = 18 भंग

चौथी को स्थिर रखते = 9 भंग

पांचवी को स्थिर रखते = 3 भंग

105 भंग

चार संयोगी 35 भंग

1-1-1-1 = 4 भंग

1-2-3 नरक से = 4 भंग

1-2-4 नरक से = 3 भंग

1-2-5 नरक से = 2 भंग

1-2-6 नरक से = 1 भंग

1-2 नरक को स्थिर रखने से 10 भंग

1-3 नरक को स्थिर रखने से 6 भंग

1-4 नरक को स्थिर रखने से 3 भंग

1-5 नरक को स्थिर रखने से 1 भंग

पहली नरक को स्थिर रखते 20 भंग

दूसरी नरक को स्थिर रखते 10 भंग

तीसरी नरक को स्थिर रखते 4 भंग

चौथी नरक को स्थिर रखते 1 भंग

35 भंग

पांच जीव-462 भंग

असंयोगी 7 भंग

द्वि संयोगी भंग 84

1 जीव 4 जीव से 6 भंग

2 जीव 3 जीव से 6 भंग

3 जीव 2 जीव से 6 भंग

4 जीव 1 जीव से 6 भंग

ये पहली नरक से 24 भंग

दूसरी नरक से 20 भंग

तीसरी नरक से 16 भंग

चौथी नरक से 12 भंग

पांचवी नरक से 8 भंग

छट्ठी नरक से 4 भंग

84 भंग

तीन संयोगी 210 भंग

1-1-3 से 5 भंग
1-2-2 से 5 भंग
1-3-1 से 5 भंग
2-1-2 से 5 भंग
2-2-1 से 5 भंग
3-1-1 से 5 भंग
1-2 नरक को स्थिर रखते 30 भंग
1-3 नरक को स्थिर रखते 24 भंग
1-4 नरक को स्थिर रखते 18 भंग
1-5 नरक को स्थिर रखते 12 भंग
1-6 नरक को स्थिर रखते 6 भंग
पहली नरक को रखते 90 भंग
दूसरी नरक को रखते 60 भंग
तीसरी नरक को रखते 36 भंग
चौथी नरक को रखते 18 भंग
पांचवी नरक को रखते 6 भंग
210 भंग

चार संयोगी 140 भंग

1-1-1-2 से 4 भंग
1-1-2-1 से 4 भंग
1-2-1-1 से 4 भंग
2-1-1-1 से 4 भंग
1-2-3 नरक रखते 16 भंग
1-2-4 नरक रखते 12 भंग
1-2-5 नरक रखते 8 भंग
1-2-6 नरक रखते 4 भंग
1-2 नरक रखते 40 भंग
1-3 नरक रखते 24 भंग
1-4 नरक रखते 12 भंग
1-5 नरक रखते 4 भंग
एक नरक रखते 80 भंग
दो नरक रखते 40 भंग
तीन नरक रखते 16 भंग
चार नरक रखते 4 भंग
140 भंग

पांच संयोगी 21 भंग

1-1-1-1-1 = 3 भंग
1-2-3-4 नरक से 3 भंग
1-2-3-5 नरक से 2 भंग
1-2-3-6 नरक से 1 भंग
1-2-3 नरक से 6 भंग
1-2-4 नरक से 3 भंग
1-2-5 नरक से 1 भंग
1-2 नरक से 10 भंग
1-3 नरक से 4 भंग
1-4 नरक से 1 भंग
एक नरक से 15 भंग
दो नरक से 5 भंग
तीन नरक से 1 भंग
21 भंग

छः जीव 924 भंग

असंयेगी-7 भंग

द्वि संयोगी 105 भंग

1-5 जीव से - 6 भंग
2-4 जीव से - 6 भंग
3-3 जीव से - 6 भंग
4-2 जीव से - 6 भंग
5-1 जीव से - 6 भंग
ये पहली नरक से - 30 भंग

दूसरी नरक से - 25 भंग
तीसरी नरक से - 20 भंग
चौथी नरक से - 15 भंग
पांचवी नरक से - 10 भंग
छठ्ठी नरक से - 5 भंग
105 भंग

तीन संयोगी-350 भंग

1-1-4 जीव से - 5 भंग
1-2-3 जीव से - 5 भंग
1-3-2 जीव से - 5 भंग
1-4-1 जीव से - 5 भंग
2-1-3 जीव से - 5 भंग
2-2-2 जीव से - 5 भंग
2-3-1 जीव से - 5 भंग
3-1-2 जीव से - 5 भंग
3-2-1 जीव से - 5 भंग
4-1-1 जीव से - 5 भंग
1-2 नरक से - 50 भंग
1-3 नरक से - 40 भंग
1-4 नरक से - 30 भंग
1-5 नरक से - 20 भंग
1-6 नरक से - 10 भंग
ये पहली नरक से - 150 भंग
दूसरी नरक से - 100 भंग
तीसरी नरक से - 60 भंग
चौथी नरक से - 30 भंग
पांचवी नरक से - 10 भंग
350 भंग

चार संयोगी-350 भंग

1-1-1-3 जीव से - 4 भंग
1-1-2-2 जीव से - 4 भंग
1-1-3-1 जीव से - 4 भंग
1-2-1-2 जीव से - 4 भंग
1-2-2-1 जीव से - 4 भंग
1-3-1-1 जीव से - 4 भंग
2-1-1-2 जीव से - 4 भंग
2-1-2-1 जीव से - 4 भंग
2-2-1-1 जीव से - 4 भंग
3-1-1-1 जीव से - 4 भंग
1-2-3 नरक से - 40 भंग
1-2-4 नरक से - 30 भंग
1-2-5 नरक से - 20 भंग
1-2-6 नरक से - 10 भंग
1-2 नरक से - 100 भंग
1-3 नरक से - 60 भंग
1-4 नरक से - 30 भंग
1-5 नरक से - 10 भंग
ये पहली नरक से - 200 भंग
दूसरी नरक से - 100 भंग
तीसरी नरक से - 40 भंग
चौथी नरक से - 10 भंग
350 भंग

पांच संयोगी-105 भंग

1-1-1-1-2 से - 3 भंग
1-1-1-2-1 से - 3 भंग
1-1-2-1-1 से - 3 भंग
1-2-1-1-1 से - 3 भंग
2-1-1-1-1 से - 3 भंग
1-2-3-4 नरक से - 15 भंग
1-2-3-5 नरक से - 10 भंग
1-2-3-6 नरक से - 5 भंग
1-2-3 नरक से - 30 भंग
1-2-4 नरक से - 15 भंग
1-2-5 नरक से - 5 भंग

1-2 नरक से - 50 भंग
1-3 नरक से - 20 भंग
1-4 से - 5 भंग
ये पहली नरक से - 75 भंग
दूसरी नरक से - 25 भंग
तीसरी नरक से - 5 भंग
105 भंग

छः संयोगी 7 भंग

7 जीव-1716 भंग

असंयोगी सात भंग

द्वि संयोगी - 126 भंग

1-6 जीव से - 6 भंग
2-5 जीव से - 6 भंग
3-4 जीव से - 6 भंग
4-3 जीव से - 6 भंग
5-2 जीव से - 6 भंग
6-1 जीव से - 6 भंग
ये पहली नरक से - 36 भंग
दूसरी नरक से - 30 भंग
तीसरी नरक से - 24 भंग
चौथी नरक से - 18 भंग
पांचवी नरक से - 12 भंग
छट्ठी नरक से - 6 भंग
126 भंग

तीन संयोगी-525 भंग

1-1-5 जीव से - 5 भंग
1-2-4 जीव से - 5 भंग
1-3-3 जीव से - 5 भंग
1-4-2 जीव से - 5 भंग
1-5-1 जीव से - 5 भंग
2-1-4 जीव से - 5 भंग
2-2-3 जीव से - 5 भंग
2-3-2 जीव से - 5 भंग
2-4-1 जीव से - 5 भंग
3-1-3 जीव से - 5 भंग
3-2-2 जीव से - 5 भंग
3-3-1 जीव से - 5 भंग
4-1-2 जीव से - 5 भंग
4-2-1 जीव से - 5 भंग
5-1-1 जीव से - 5 भंग
ये 1-2 नरक स्थिर रखते - 75 भंग
1-3 नरक स्थिर रखते - 60 भंग
1-4 नरक स्थिर रखते - 45 भंग
1-5 नरक स्थिर रखते - 30 भंग
1-6 नरक स्थिर रखते - 15 भंग
ये पहली नरक से - 225 भंग
दूसरी नरक से - 150 भंग
तीसरी नरक से - 90 भंग
चौथी नरक से - 45 भंग
पांचवी नरक से - 15 भंग
525 भंग

चार संयोगी 700 भंग

1-1-1-4 जीव से - 4 भंग
1-1-2-3 जीव से - 4 भंग
1-1-3-2 जीव से - 4 भंग
1-1-4-1 जीव से - 4 भंग
1-2-1-3 जीव से - 4 भंग
1-2-2-2 जीव से - 4 भंग
1-2-3-1 जीव से - 4 भंग
1-3-1-2 जीव से - 4 भंग
1-3-2-1 जीव से - 4 भंग
1-4-1-1 जीव से - 4 भंग
2-1-1-3 जीव से - 4 भंग

2-1-2-2 जीव से - 4 भंग
2-1-3-1 जीव से - 4 भंग
2-2-1-2 जीव से - 4 भंग
2-2-2-1 जीव से - 4 भंग
2-3-1-1 जीव से - 4 भंग
3-1-1-2 जीव से - 4 भंग
3-1-2-1 जीव से - 4 भंग
3-2-1-1 जीव से - 4 भंग
4-1-1-1 जीव से - 4 भंग

ये 1-2-3 नरक स्थिर रखते - 80 भंग
1-2-4 नरक स्थिर रखते - 60 भंग
1-2-5 नरक स्थिर रखते - 40 भंग
1-2-6 नरक स्थिर रखते - 20 भंग

ये 1-2 नरक से - 200 भंग
1-3 नरक से - 120 भंग
1-4 नरक से - 60 भंग
1-5 नरक से - 20 भंग

ये पहली नरक से - 400 भंग
दूसरी नरक से - 200 भंग
तीसरी नरक से - 80 भंग
चौथी नरक से - 20 भंग

700 भंग

पांच संयोगी-315 भंग

1-1-1-1-3 जीव से - 3 भंग
1-1-1-2-2 जीव से - 3 भंग
1-1-1-3-1 जीव से - 3 भंग
1-1-2-1-2 जीव से - 3 भंग
1-1-2-2-1 जीव से - 3 भंग
1-1-3-1-1 जीव से - 3 भंग
1-2-1-1-2 जीव से - 3 भंग
1-2-1-2-1 जीव से - 3 भंग
1-2-2-1-1 जीव से - 3 भंग
1-3-1-1-1 जीव से - 3 भंग
2-1-1-1-2 जीव से - 3 भंग
2-1-1-2-1 जीव से - 3 भंग
2-1-2-1-1 जीव से - 3 भंग
2-2-1-1-1 जीव से - 3 भंग
3-1-1-1-1 जीव से - 3 भंग

1-2-3-4 नरक स्थिर रखते - 45 भंग
1-2-3-5 स्थिर रखते - 30 भंग
1-2-3-6 स्थिर रखते - 15 भंग

1-2-3 नरक से - 90 भंग
1-2-4 नरक से - 45 भंग
1-2-5 नरक से - 15 भंग

ये 1-2 नरक से - 150 भंग
1-3 नरक से - 60 भंग
1-4 नरक से - 15 भंग

ये पहली नरक से - 225 भंग
दूसरी नरक से - 75 भंग
तीसरी नरक से - 15 भंग

315 भंग

छः संयोगी 42 भंग

1-1-1-1-1-2 जीव से - 2 भंग
1-1-1-1-2-1 जीव से - 2 भंग
1-1-1-2-1-1 जीव से - 2 भंग
1-1-2-1-1-1 जीव से - 2 भंग
1-2-1-1-1-1 जीव से - 2 भंग
2-1-1-1-1-1 जीव से - 2 भंग

1-2-3-4-5 नरक से - 12 भंग
1-2-3-4-6 नरक से - 6 भंग
1-2-3-4 नरक से - 18 भंग
1-2-3-5 नरक से - 6 भंग
1-2-3 नरक से - 24 भंग
1-2-4 नरक से - 6 भंग

1-2 नरक से - 30 भंग
1-3 नरक से - 6 भंग
ये पहली नरक से - 36 भंग
दूसरी नरक से - 6 भंग
42 भंग

सात संयोगी 1 भंग

8 जीव-3003 भंग

असंयोगी-7 भंग

द्वि संयोगी-147 भंग

1-7 जीव से - 6 भंग
2-6 जीव से - 6 भंग
3-5 जीव से - 6 भंग
4-4 जीव से - 6 भंग
5-3 जीव से - 6 भंग
6-2 जीव से - 6 भंग
7-1 जीव से - 6 भंग
ये पहली नरक से 42 भंग
दूसरी नरक से 35 भंग
तीसरी नरक से 28 भंग
चौथी नरक से 21 भंग
पांचवी नरक से 14 भंग
छट्ठी नरक से 7 भंग
147 भंग

तीन संयोगी-735 भंग

1-1-6 जीव से - 5 भंग
1-2-5 जीव से - 5 भंग
1-3-4 जीव से - 5 भंग
1-4-3 जीव से - 5 भंग
1-5-2 जीव से - 5 भंग
1-6-1 जीव से - 5 भंग
2-1-5 जीव से - 5 भंग
2-2-4 जीव से - 5 भंग
2-3-3 जीव से - 5 भंग
2-4-2 जीव से - 5 भंग
2-5-1 जीव से - 5 भंग
3-1-4 जीव से - 5 भंग
3-2-3 जीव से - 5 भंग
3-3-2 जीव से - 5 भंग
3-4-1 जीव से - 5 भंग
4-1-3 जीव से - 5 भंग
4-2-2 जीव से - 5 भंग
4-3-1 जीव से - 5 भंग
5-1-2 जीव से - 5 भंग
5-2-1 जीव से - 5 भंग
6-1-1 जीव से - 5 भंग
ये 1-2 नरक से - 105 भंग
1-3 नरक से - 84 भंग
1-4 नरक से - 63 भंग
1-5 नरक से - 42 भंग
1-6 नरक से - 21 भंग
ये पहली नरक से - 315 भंग
दूसरी नरक से - 210 भंग
तीसरी नरक से - 126 भंग
चौथी नरक से - 63 भंग
पांचवी नरक से - 21 भंग
735 भंग

चार संयोगी 1225 भंग

1-1-1-5 जीव से - 4 भंग
1-1-2-4 जीव से - 4 भंग
1-1-3-3 जीव से - 4 भंग
1-1-4-2 जीव से - 4 भंग
1-1-5-1 जीव से - 4 भंग
1-2-1-4 जीव से - 4 भंग

1-2-2-3 जीव से - 4 भंग
1-2-3-2 जीव से - 4 भंग
1-2-4-1 जीव से - 4 भंग
1-3-1-3 जीव से - 4 भंग
1-3-2-2 जीव से - 4 भंग
1-3-3-1 जीव से - 4 भंग
1-4-1-2 जीव से - 4 भंग
1-4-2-1 जीव से - 4 भंग
1-5-1-1 जीव से - 4 भंग
2-1-1-4 जीव से - 4 भंग
2-1-2-3 जीव से - 4 भंग
2-1-3-2 जीव से - 4 भंग
2-1-4-1 जीव से - 4 भंग
2-2-1-3 जीव से - 4 भंग
2-2-2-2 जीव से - 4 भंग
2-2-3-1 जीव से - 4 भंग
2-3-1-2 जीव से - 4 भंग
2-3-2-1 जीव से - 4 भंग
2-4-1-1 जीव से - 4 भंग
3-1-1-3 जीव से - 4 भंग
3-1-2-2 जीव से - 4 भंग
3-1-3-1 जीव से - 4 भंग
3-2-1-2 जीव से - 4 भंग
3-2-2-1 जीव से - 4 भंग
3-3-1-1 जीव से - 4 भंग
4-1-1-2 जीव से - 4 भंग
4-1-2-1 जीव से - 4 भंग
4-2-1-1 जीव से - 4 भंग
5-1-1-1 जीव से - 4 भंग
ये 1-2-3 नरक से - 140 भंग
1-2-4 नरक से - 105 भंग
1-2-5 नरक से - 70 भंग
1-2-6 नरक से - 35 भंग
ये 1-2 नरक से - 350 भंग
1-3 नरक से - 210 भंग
1-4 नरक से - 105 भंग
1-5 नरक से - 35 भंग
ये पहली नरक से - 700 भंग
दूसरी नरक से - 350 भंग
तीसरी नरक से - 140 भंग
चौथी नरक से - 35 भंग
1225 भंग

पांच संयोगी 735 भंग

1-1-1-1-4 जीव से - 3 भंग
1-1-1-2-3 जीव से - 3 भंग
1-1-1-3-2 जीव से - 3 भंग
1-1-1-4-1 जीव से - 3 भंग
1-1-2-1-3 जीव से - 3 भंग
1-1-2-2-2 जीव से - 3 भंग
1-1-2-3-1 जीव से - 3 भंग
1-1-3-1-2 जीव से - 3 भंग
1-1-3-2-1 जीव से - 3 भंग
1-1-4-1-1 जीव से - 3 भंग
1-2-1-1-3 जीव से - 3 भंग
1-2-1-2-2 जीव से - 3 भंग
1-2-1-3-1 जीव से - 3 भंग
1-2-2-1-2 जीव से - 3 भंग
1-2-2-2-1 जीव से - 3 भंग
1-2-3-1-1 जीव से - 3 भंग
1-3-1-1-2 जीव से - 3 भंग
1-3-1-2-1 जीव से - 3 भंग
1-3-2-1-1 जीव से - 3 भंग
1-4-1-1-1 जीव से - 3 भंग
2-1-1-1-3 जीव से - 3 भंग

2-1-1-2-2 जीव से - 3 भंग
2-1-1-3-1 जीव से - 3 भंग
2-1-2-1-2 जीव से - 3 भंग
2-1-2-2-1 जीव से - 3 भंग
2-1-3-1-1 जीव से - 3 भंग
2-2-1-1-2 जीव से - 3 भंग
2-2-1-2-1 जीव से - 3 भंग
2-2-2-1-1 जीव से - 3 भंग
2-3-1-1-1 जीव से - 3 भंग
3-1-1-1-2 जीव से - 3 भंग
3-1-1-2-1 जीव से - 3 भंग
3-1-2-1-1 जीव से - 3 भंग
3-2-1-1-1 जीव से - 3 भंग
4-1-1-1-1 जीव से - 3 भंग

ये 1-2-3-4 नरक से - 105 भंग
1-2-3-5 नरक से - 70 भंग
1-2-3-6 नरक से - 35 भंग

ये 1-2-3 नरक से - 210 भंग
1-2-4 नरक से - 105 भंग
1-2-5 नरक से - 35 भंग

ये 1-2 नरक से - 350 भंग
1-3 नरक से - 140 भंग
1-4 नरक से - 35 भंग

ये पहली नरक से - 525 भंग
दूसरी नरक से - 175 भंग
तीसरी नरक से - 35 भंग

735 भंग

छः संयोगी 147 भंग

1-1-1-1-1-3 जीव से - 7 भंग
1-1-1-1-2-2 जीव से - 7 भंग
1-1-1-1-3-1 जीव से - 7 भंग
1-1-1-2-1-2 जीव से - 7 भंग
1-1-1-2-2-1 जीव से - 7 भंग
1-1-1-3-1-1 जीव से - 7 भंग
1-1-2-1-1-2 जीव से - 7 भंग
1-1-2-1-2-1 जीव से - 7 भंग
1-1-2-2-1-1 जीव से - 7 भंग
1-1-3-1-1-1 जीव से - 7 भंग
1-2-1-1-1-2 जीव से - 7 भंग
1-2-1-1-2-1 जीव से - 7 भंग
1-2-1-2-1-1 जीव से - 7 भंग
1-2-2-1-1-1 जीव से - 7 भंग
1-3-1-1-1-1 जीव से - 7 भंग
2-1-1-1-1-2 जीव से - 7 भंग
2-1-1-1-2-1 जीव से - 7 भंग
2-1-1-2-1-1 जीव से - 7 भंग
2-1-2-1-1-1 जीव से - 7 भंग
2-2-1-1-1-1 जीव से - 7 भंग
3-1-1-1-1-1 जीव से - 7 भंग

सातवीं छोड़ते 21 भंग यो सातों ही नरक
छोड़ते 21 × 7 = **147 भंग**

सात संयोगी 7 भंग

9 जीव-5005 भंग

असंयोगी 7 भंग

द्वि संयोगी 168 भंग

विकल्प × पद

पहली नरक से 8 × 6 = 48

दूसरी नरक से 8 × 5 = 40

तीसरी नरक से 8 × 4 = 32

चौथी नरक से 8 × 3 = 24

पांचवी नरक से 8 × 2 = 16

छट्ठी नरक से 8 × 1 = 8

कुल - 8 × 21 = 168 भंग

तीन संयोगी 980 भंग

विकल्प × पद

1-2 नरक से 28 × 5 = 140

1-3 नरक से 28 × 4 = 112

1-4 नरक से 28 × 3 = 84

1-5 नरक से 28 × 2 = 56

1-6 नरक से 28 × 1 = 28

ये पहली नरक से 28 × 15 = 420

दूसरी नरक से 28 × 10 = 280

तीसरी नरक से 28 × 6 = 168

चौथी नरक से 28 × 3 = 84

पांचवी नरक से 28 × 1 = 28

कुल - 28 × 35 = 980 भंग

चार संयोगी 1960 भंग

विकल्प × पद

1-2-3 नरक से 56 × 4 = 224

1-2-4 नरक से 56 × 3 = 168

1-2-5 नरक से 56 × 2 = 112

1-2-6 नरक से 56 × 1 = 56

ये 1-2 नरक से 56 × 10 = 560

1-3 नरक से 56 × 6 = 336

1-4 नरक से 56 × 3 = 168

1-5 नरक से 56 × 1 = 56

ये पहली नरक से 56 × 20 = 1120 भंग

दूसरी नरक से 56 × 10 = 560 भंग

तीसरी नरक से 56 × 4 = 224 भंग

चौथी नरक से 56 × 1 = 56 भंग

कुल - 56 × 35 = 1960 भंग

पांच संयोगी 1470 भंग

1-1-1-1-5 से 5-1-1-1-1 तक 70

विकल्प × पद

1-2-3-4 नरक से 70 × 3 = 210

1-2-3-5 नरक से 70 × 2 = 140

1-2-3-6 नरक से 70 × 1 = 70

1-1-3 नरक से 70 × 6 = 420

1-2-4 नरक से 70 × 3 = 210

1-2-5 नरक से 70 × 1 = 70

1-2 नरक से 70 × 10 = 700

1-3 नरक से 70 × 4 = 280

1-4 नरक से 70 × 1 = 70

ये पहली नरक से 70 × 15 = 1050

दूसरी नरक से 70 × 5 = 350

तीसरी नरक से 70 × 1 = 70

कुल - 70 × 21 = 1470 भंग

छः संयोगी 392 भंग

1-1-1-1-1-4 से 4-1-1-1-1-1
तक 56 भंग, यों एक5 एक नरक छोड़ते
56 विकल्प × 7 पद = **392 भंग**

सात संयोगी 28 भंग

1-1-1-1-1-1-3 से 3-1-1-1-1-1-1
तक 28 विकल्प × एक पद = **28 भंग**

10 जीव-8008 भंग

असंयोगी 7 भंग

द्वि संयोगी-189 भंग

विकल्प × पद

पहली नरक से - 9 × 6 = 54

दूसरी नरक से - 9 × 5 = 45

तीसरी नरक से - 9 × 4 = 36

चौथी नरक से - 9 × 3 = 27

पांचवी नरक से - 9 × 2 = 18

छट्ठी नरक से - 9 × 1 = 9

कुल - 9 × 21 = 189 भंग

तीन संयोगी-1260 भंग

विकल्प × पद

1-2 नरक से 36 × 5 = 180

1-3 नरक से 36 × 4 = 144

1-4 नरक से 36 × 3 = 108

1-5 नरक से 36 × 2 = 72

1-6 नरक से 36 × 1 = 36

ये पहली नरक से 36 × 15 = 540

दूसरी नरक से 36 × 10 = 360

तीसरी नरक से 36 × 6 = 216

चौथी नरक से 36 × 3 = 108

पांचवी नरक से 36 × 1 = 36

कुल - 36 × 35 = 1260 भंग

चार संयोगी-2940 भंग

1-1-1-7 से 7-1-1-1 तक 84 विकल्प

विकल्प × पद

1-2-3 नरक से 84 × 4 = 336

1-2-4 नरक से 84 × 3 = 252

1-2-5 नरक से 84 × 2 = 168

1-2-6 नरक से 84 × 1 = 84

1-2 नरक से 84 × 10 = 840

1-3 नरक से 84 × 6 = 504

1-4 नरक से 84 × 3 = 252

1-5 नरक से 84 × 1 = 84

ये पहली नरक से 84 × 20 = 1680

दूसरी नरक से 84 × 10 = 840

तीसरी नरक से 84 × 4 = 336

चौथी नरक से 84 × 1 = 84

कुल - 84 × 35 = 2940 भंग

पांच संयोगी-2646 भंग

1-1-1-1-6 से 6-1-1-1-1 तक

126 विकल्प

विकल्प × पद

1-2-3-4 नरक से 126 × 3 = 378

1-2-3-5 नरक से 126 × 2 = 252

1-2-3-6 नरक से 126 × 1 = 126

ये 1-2-3 नरक से 126 × 6 = 756

1-2-4 नरक से 126 × 3 = 378

1-2-5 नरक से 126 × 1 = 126

1-2 नरक से 126 × 10 = 1260

1-3 नरक से 126 × 4 = 504

1-4 नरक से 126 × 1 = 126

ये पहली नरक से 126 × 15 = 1890

दूसरी नरक से 126 × 5 = 630

तीसरी नरक से 126 × 1 = 126

कुल - 126 × 21 = 2646 भंग

छः संयोगी-882 भंग

1-1-1-1-1-5 से 5-1-1-1-1-1 तक

126 भंग। फिर एक-एक नरक छोड़ते

126 × 7 = **882 भंग**

सात संयोगी-84 भंग

1-1-1-1-1-1-4 से 4-1-1-1-1-1-1

तक = **84 भंग**

संख्यात जीव

नोट- यहां सं. = संख्याता जीव है।

	पद × विकल्प	=	भंग
असंयोगी	7 × 1	=	7
द्वि संयोगी	21 × 11	=	231
तीन संयोगी	35 × 21	=	735
चार संयोगी	35 × 31	=	1085
पांच संयोगी	21 × 41	=	861
छः संसेगी	7 × 51	=	357
सात संयोगी	1 × 61	=	61
कुल -	**127 × 217**	**=**	**3337**

विकल्प का तरीका

द्वि संयोगी-11 विकल्प

1. जीव और संख्यात जीव
2. जीव और संख्यात जीव
3. जीव और संख्यात जीव
4. जीव और संख्यात जीव
5. जीव और संख्यात जीव
6. जीव और संख्यात जीव
7. जीव और संख्यात जीव
8. जीव और संख्यात जीव
9. जीव और संख्यात जीव
10. जीव और संख्यात जीव
11. संख्यात और संख्यात जीव

11 विकल्प

तीन संयोगी-21 विकल्प

1-1 संख्यात जीव
1-2 संख्यात जीव
1-3 संख्यात जीव
1-4 संख्यात जीव
1-5 संख्यात जीव
1-6 संख्यात जीव
1-7 संख्यात जीव
1-8 संख्यात जीव
1-9 संख्यात जीव
1-10 संख्यात जीव
1 संख्यात-संख्यात जीव
2 संख्यात-संख्यात जीव
3 संख्यात-संख्यात जीव
4 संख्यात-संख्यात जीव
5 संख्यात-संख्यात जीव
6 संख्यात-संख्यात जीव
7 संख्यात-संख्यात जीव
8 संख्यात-संख्यात जीव
9 संख्यात-संख्यात जीव
10 संख्यात-संख्यात जीव
संख्यात-संख्यात-संख्यात जीव

ये 21 विकल्प हुए

इस तरह 10-10 बढ़ाते
चार संयोगी जीव विकल्प 31
पांच संयोगी विकल्प 41
छः संयोगी विकल्प 51
सात संयोगी विकल्प 61

असंख्यात जीव

नोट- यहां सं. = संख्याता जीव।
अ.सं. = असंख्याता जीव।

	पद × विकल्प	=	भंग
असंयोगी	7 × 1	=	7
द्वि संयोगी	21 × 12	=	252
तीन संयोगी	35 × 23	=	805
चार संयोगी	35 × 34	=	1190

पांच संयोगी	21 × 45	=	945
छः संसेगी	7 × 56	=	392
सात संयोगी	1 × 67	=	67
कुल –	**127 × 238**	**=**	**3658**

विकल्प का तरीका

द्वि संयोगी–12 विकल्प

1. जीव और असंख्यात जीव
2. जीव और असंख्यात जीव
3. जीव और असंख्यात जीव
4. जीव और असंख्यात जीव
5. जीव और संख्यात जीव
6. जीव और असंख्यात जीव
7. जीव और असंख्यात जीव
8. जीव और असंख्यात जीव
9. जीव और असंख्यात जीव
10. जीव और असंख्यात जीव

संख्यात-जीव और असंख्यात जीव

असंख्यात-जीव और असंख्यात जीव

12 विकल्प

तीन संयोगी–23 विकल्प

1-1 असंख्यात जीव

1-2 असंख्यात जीव

1-3 असंख्यात जीव

1-4 असंख्यात जीव

1-5 असंख्यात जीव

1-6 असंख्यात जीव

1-7 असंख्यात जीव

1-8 असंख्यात जीव

1-9 असंख्यात जीव

1-10 असंख्यात जीव

1 संख्यात-असंख्यात

1 असंख्यात-असंख्यात जीव

2 असंख्यात-असंख्यात जीव

3 असंख्यात-असंख्यात जीव

4 असंख्यात-असंख्यात जीव

5 असंख्यात-असंख्यात जीव

6 असंख्यात-असंख्यात जीव

7 असंख्यात-असंख्यात जीव

8 असंख्यात-असंख्यात जीव

9 असंख्यात-असंख्यात जीव

10 असंख्यात-असंख्यात जीव

संख्यात-असंख्यात-असंख्यात जीव

असंख्यात-असंख्यात-असंख्यात जीव

23 विकल्प

इस तरह 11-11 बढ़ाते

चार संयोगी विकल्प 34

पांच संयोगी विकल्प 45

छः संयोगी विकल्प 56

सात संयोगी विकल्प 67

उत्कृष्ट जीव

नोट– (1) इस में जीव संख्या घट-बध नहीं करके असंख्य-असंख्य ही कहना। अतः विकल्प नहीं केवल पद से ही भंग बनते हैं।

(2) पहली नरक नहीं छोड़ते हुए पद बनाना।

असंयोगी भंग एक

सभी पहली नरक में

द्वि संयोगी 6 भंग

नरक	जीव
1-2	असंख्यात-असंख्यात
1-3	असंख्यात-असंख्यात
1-4	असंख्यात-असंख्यात
1-5	असंख्यात-असंख्यात

1-6 असंख्यात-असंख्यात
1-7 असंख्यात-असंख्यात

तीन संयोगी - 15 भंग

1-2-3 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4 असंख्यात-असंख्यात
1-2-5 असंख्यात-असंख्यात
1-2-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4 असंख्यात-असंख्यात
1-3-5 असंख्यात-असंख्यात
1-3-6 असंख्यात-असंख्यात
1-3-7 असंख्यात-असंख्यात
1-4-5 असंख्यात-असंख्यात
1-4-6 असंख्यात-असंख्यात
1-4-7 असंख्यात-असंख्यात
1-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-6-7 असंख्यात-असंख्यात

चार संयोगी-20 भंग

1-2-3-4 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-5 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-5 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-5 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-6 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-3-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-4-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-4-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-4-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-5-6-7 असंख्यात-असंख्यात

पांच संयोगी-15 भंग

1-2-3-4-5 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-4-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-4-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-3-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-4-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-2-5-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-5-6 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-5-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-4-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-3-5-6-7 असंख्यात-असंख्यात
1-4-5-6-7 असंख्यात-असंख्यात

छः संयोगी-6 भंग

सात संयोगी-1 भंग

कुल = 64 भंग

(1) 12 देवलोक में एक से 10 जीव जाने के भंग-

1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1	3	6	10	15	21	28	36	45	55
1	4	10	20	35	56	84	120	165	220
1	5	15	35	70	126	210	330	495	715
1	6	21	56	126	252	462	792	1287	2002
1	7	28	84	210	462	924	1716	3003	5005
1	8	36	120	330	792	1716	3432	6435	11440
1	9	45	165	495	1287	3003	6435	12870	24310
1	10	55	220	715	2002	5005	11440	24310	48620
1	11	66	286	1001	3003	8008	19448	43758	92378
1	12	78	364	1365	4368	12376	31824	75582	167960
12	78	364	1365	4368	12376	31824	75582	167960	352716

विधि- पहली पंक्ति में 12 और ऊपर की पंक्ति में 10 एक के अंक लिखना। फिर पहली पंक्ति के दूसरे तीसरे आदि अंकों को क्रमशः दूसरी पंक्ति के पहले दूसरे आदि अंक से जोड़कर दूसरी पंक्ति के अगले-अगले अंक लिखना।

12 देवलोक में 1 से 10 जीव तक के भंग निकालना-

1 जीव	1 × 12 =	12 ÷ 1 =	12 भंग
2 जीव	12 × 13 =	156 ÷ 2 =	78 भंग
3 जीव	78 × 14 =	1092 ÷ 3 =	364 भंग
4 जीव	364 × 15 =	5460 ÷ 4 =	1365 भंग
5 जीव	1365 × 16 =	21840 ÷ 5 =	4368 भंग
6 जीव	4368 × 17 =	74256 ÷ 6 =	12376 भंग
7 जीव	12376 × 18 =	222768 ÷ 7 =	31824 भंग
8 जीव	31824 × 19 =	604656 ÷ 8 =	75582 भंग
9 जीव	75582 × 20 =	1511640 ÷ 9 =	167960 भंग
10 जीव	167960 × 21 =	3527160 ÷ 10 =	352716 भंग

12 देवलोक में 10 जीव जावे जिसके भंग-

विकल्प	×	पद	=	भंग
1	×	12	=	12
9	×	66	=	594
36	×	220	=	7920
84	×	495	=	41580
126	×	792	=	99792
126	×	924	=	116424
84	×	792	=	66528
36	×	495	=	17820
9	×	220	=	1980
1	×	66	=	66
		योग	=	**352716**

(2) 12 देवलोक के पद संख्या परीक्षण का तरीका-

$(2)^{12}$ = 2×2×2×2×2×2×2×2×2×2×2×2 = 4096-1 = 4095 पद

(3) 12 देवलोक के भंग संख्या परीक्षण का तरीका- 10 जीव के-

$$\frac{\cancel{11}\times\overset{\cancel{2}}{\cancel{12}}\times13\times\overset{2}{\cancel{14}}\times\overset{\cancel{3}}{\cancel{15}}\times\overset{\cancel{2}}{\cancel{16}}\times17\times\overset{2}{\cancel{18}}\times19\times\overset{\cancel{2}}{\cancel{20}}\times21}{1\times\cancel{2}\times\cancel{3}\times\cancel{4}\times\cancel{5}\times\cancel{6}\times\cancel{7}\times\cancel{8}\times\cancel{9}\times\cancel{10}\times\cancel{11}}$$

= 13×2×17×2×19×21

= 26×17×38×21

= 442×798

= 352716 भंग बने

पद परीक्षण का तरीका– जितने प्रवेशनक के पद निकालने हो उतनी बार दो का गुणा कर गुणनफल में से एक घटाने पर पद संख्या आ जाती है। यथा- नारकी के 7 प्रवेशनक है तो (2) अर्थात् $2\times2\times2\times2\times2\times2\times2 = 128-1 = 127$ पद एवं तिर्यंच के पांच प्रवेशनक है तो $(2)^5$ अर्थात् $2\times2\times2\times2\times2 = 32 - 1 = 31$ पद।

विकल्प परीक्षण का तरीका– सभी विकल्पों का जोड़ इस प्रकार होता है। 1 जीव = 1 विकल्प, 2 जीव = 4 विकल्प, 4 जीव = 8 विकल्प, 5 जीव = 16 विकल्प, 6 जीव = 32 विकल्प, 7 जीव = 64 विकल्प, 8 जीव = 128 विकल्प, 9 जीव = 256 विकल्प, 10 जीव = 512 विकल्प।

भंग परीक्षण का तरीका– 10 जीव के भंग निकालने है, सात प्रवेशनक में तो 11 से 16 तक की संख्या ऊपर लिख कर एवं 1 से 6 तक की संख्या नीचे लिख कर उसकी भिन्न गणित करो यथा-

$$\frac{11\times\overset{\cancel{4}}{\cancel{12}}\times13\times\overset{7}{\cancel{14}}\times\overset{\cancel{3}}{\cancel{15}}\times\overset{8}{\cancel{16}}}{1\times\cancel{2}\times\cancel{3}\times\cancel{4}\times\cancel{5}\times\underset{\cancel{3}}{\cancel{6}}} = 11\times13\times7\times8 = 8008 \text{ भंग}$$

10 जीव 5 तीर्यंच प्रवेशनक के भंग

$$(2)\ \frac{11\times\overset{\cancel{6}\ \cancel{3}}{\cancel{12}}\times13\times\overset{7}{\cancel{14}}}{1\times\cancel{2}\times\cancel{3}\times\cancel{4}} = 11\times13\times7 = 1001 \text{ भंग}$$

नोट– जितने प्रवेशनक हो उससे एक कम संख्या लिखनी चाहिये। यथा- सात प्रवेशनक है तो छह संख्या ऊपर और छः संख्या नीचे लिखें। यदि पांच प्रवेशनक है तो 4 संख्या ऊपर और 4 संख्या नीचे लिखें।

अल्पाबहुत्व– नारकी के सात प्रवेशनक की, तिर्यंच के पांच प्रवेशनक की, मनुष्य के दो प्रवेशनक की, देव के चार प्रवेशनक की एवं फिर चारों गति के प्रवेशनक की यों पांचों अल्पाबहुत्व प्रज्ञापना के तीसरे पद के अनुसार जानना। विशेष यह है कि प्रवेशनक होने से बेइन्द्रिय से एकेन्द्रिय विशेषाधिक और देव से तिर्यंच प्रवेशनक असंख्य गुणा है।

।। प्रवेशनक भंग प्रकरण समाप्त ।।

1. छट्ठे शतक के चौथे उद्देशक को ''शब्द उद्देशक'' संज्ञा से कह कर यहां केवल ज्ञान के विषय की भलावण दी गई है। लोक स्वरूप के लिये पांचवें शतक की भलावण दी गई है।

2. नैरयिक आदि स्वतः ही जन्मते मरते हैं। भगवान भी सर्वज्ञ होने से स्वतः ही जानते देखते हैं, परतः या सुनकर नहीं किन्तु बिना सुने ही सम्पूर्ण परिमित अपरिमित वस्तु तत्त्व को जानते हैं।

3. इन उक्त सम्पूर्ण प्रश्नों एवं भंग जालों के द्वारा गांगेय अणगार (पार्श्वनाथ तीर्थंकर के शासनवर्ती श्रमण) ने भगवान महावीर के सर्वज्ञ होने का विश्वास किया। फिर श्रद्धा भक्ति के साथ वंदन नमस्कार कर भगवान से पंच महाव्रत धर्म स्वीकार किया।

4. इस प्रकार अविश्वास और परीक्षण का कारण यह बन गया था कि गोशालक भी उस समय 24 वां तीर्थंकर माना जाता था। उसने भी देव सहयोग के बाह्य ढंग तीर्थंकर के समान बना रखा था। एवं निमित्त ज्ञान से भूत भविष्य की वार्त्ता भी बता देता था।

5. फिर भी परीक्षा करने के इच्छुक साधक मार्ग निकाल ही लेते हैं अर्थात् तत्त्व ज्ञान सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर, निमित्तज्ञान एवं देवसहाय से नहीं दिया जा सकता। वहां तो स्वयं के ज्ञान से हाजिर जवाब देना होता है। असली सर्वज्ञ को ऐसे उत्तर देने में किंचित भी हिचक नहीं होती है और नकली बने सर्वज्ञ ऐसे भंग जाल का बिना व्यवधान किये शीघ्र उत्तर देने में समर्थ नहीं होते हैं।

6. गांगेय अणगार ने उसी भव में मोक्ष प्राप्त कर सम्पूर्ण दुःखों का अंत किया।

तेतीसवां उद्देशक-

भगवान महावीर के माता-पिता-

राणी त्रिशला एवं राजा सिद्धार्थ भगवान के प्रसिद्ध माता पिता थे। किन्तु दसवें देवलोक से आकर भगवान पहले देवानंदा ब्राह्मणी के गर्भ में 83 दिन रहे थे इस अपेक्षा से ऋषभदत्त ब्राह्मण एवं देवानंदा ये भी भगवान के माता पिता थे।

एक बार विचरण करते हुए श्रमण भगवान महावीर स्वामी ''ब्राह्मण कुंडग्राम'' नामक नगर में पधारे। ऋषभदत्त और देवानंदा भी दर्शन करने के लिये समवसरण में उपस्थित हुए।

देवानंदा ब्राह्मणी भगवान महावीर स्वामी को अनिमेष दृष्टि से देखने लगी। देखते-देखते ही उसके सारे अंग प्रत्यंग विकसित हो उठे, खिल उठे एवं स्तनों में दूध भर गया। कंचुकी आदि वस्त्र एवं हाथ के आभूषण तंग हो गये।

गौतम स्वामी ने यह सब प्रत्यक्ष देखा एवं भगवान से इसका कारण पूछा। उत्तर में भगवान ने पूर्व वृत्तांत के साथ अपनी माता होने का परिचय प्रकट किया। तदनंतर आई हुई सम्पूर्ण परिषद को भगवान ने उपदेश दिया। ऋषभदत्त और देवानंदा उपदेश सुनकर विरक्त हो गये। वहीं दीक्षित हो गये। दोनों ने अनेक वर्ष संयम पालन किया। ग्यारह अंग शास्त्र का अध्ययन किया एवं एक महीने के संथारे से दोनों ने उसी भव में सम्पूर्ण कर्म क्षय कर सब दुःखों का अंत कर दिया।

ऋषभ दत्त पहले ब्राह्मण मत के वेद आदि में पारंगत थे एवं बाद में जीवाजीव के ज्ञाता पार्श्वनाथ भगवान के शासन में श्रमणोपासक भी बन गये थे और जीवन के अंतिम वर्षों में संयम भी धारण किया और उसी भव से मुक्त हो गये।

भगवान महावीर का जमाता जमाली–

भगवान महावीर स्वामी के एक पुत्री थी जिसका नाम प्रियदर्शना था। उसके पति का नाम ''जमाली था''।

जमाली का आठ श्रेष्ठ कन्याओं के साथ पाणिग्रहण हुआ था। अपार धन वैभव का वह स्वामी था। मानुषिक सुखों एवं काम भोगों में ही वह मनुष्य भव का समय व्यतीत कर रहा था।

वैराग्य प्राप्ति– एक बार श्रमण भगवान महावीर का वहां पदार्पण हुआ। बगीचे की तरफ लोगों के एक दिशा में जाने के कारण का पता लगाया। वह स्वयं भी भगवान की सेवा में रथ द्वारा पहुंचा। समवसरण के निकट रथ रोक कर नीचे उतरा। फल, पान आदि सचित्त वस्तु का त्याग किया (अलग किये), आयुध-शस्त्र एवं उपानह-जूते आदि अचित्त पदार्थों का भी त्याग किया (निकाल कर रख दिये), मुंह के सामने एक पट वाले वस्त्र का उत्तरासंग किया। इस प्रकार सचित्त अचित्त के विवेक व्युत्सर्जन से परम पवित्र एकाग्र चित्त होकर मस्तक पर अंजली करके भगवान के निकट पहुंचा। तीन बार आवर्त्तन कर वंदना करते हुए समवसरण में बैठ गया।

भगवान ने जमाली सहित उपस्थित विशाल परिषद को धर्मोपदेश दिया। जमाली उपदेश सुनकर परम आनंदित हो गया। श्रद्धा रूचि जगी एवं संयम ग्रहण करने के लिए तत्पर हुआ। भगवान के समीप में अपनी मनोभावना व्यक्त की। घर पहुंच कर माता-पिता के सामने अपनी भावना रखी। दीक्षा के भावों को सुनकर मोहमयी माता अपने को न संभाल सकी। मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। थोड़ी ही देर में दासियों के द्वारा दी गई परिचर्या से स्वस्थ होकर उठी एवं अश्रु भरे नेत्रों से रोती हुई पुत्र को समझाने लगी।

माता एवं पुत्र का सरस संवाद–

माता– हे पुत्र! तू मेरा इष्ट, कांत, वल्लभ, आधारभूत, विश्वासपात्र, रत्नतुल्य, जीवन का आनंद दायक एकलौता पुत्र है। हे पुत्र! एक क्षण मात्र भी हम तुम्हारा वियोग सहन नहीं कर सकते। अतः जब तक हम जीवित हैं तक तक तुम घर में ही रहकर कुल वंश की वृद्धि करो और जब हम काल धर्म को प्राप्त हो जाय, तुम्हारी वृद्धावस्था आ जाय, तब तुम भले ही दीक्षित हो जाना।

जमाली– हे मातापिता! यह मनुष्य जीवन जन्म, जरा, मरण, रोग, व्याधि आदि अनेक शारीरिक मानसिक दुःखों की अत्यंत वेदनाओं से पीड़ित है, अध्रुव अनित्य है, संध्याकालीन रंगों के समान, पानी के परपोटे (बुदबुदे) के समान कुशाग्र पर रहे ओस बिन्दु के समान, स्वप्न दर्शन के समान एवं बिजली की चमक के समान चंचल है। सड़ना, पड़ना, गलना एवं विनष्ट होना इसका स्वभाव है। एक दिन इसे अवश्य छोड़ना होगा। तो हे माता पिता! हम में से पहले कौन जायेगा और पीछे कौन जायेगा? यह निर्णय कौन कर सकता है। अतः हे मातापिता! आप मुझे आज्ञा दीजिये। आपकी आज्ञा होने पर मैं श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास संयम अंगीकार करना चाहता हूं।

माता पिता– हे पुत्र! तुम्हारा शरीर सब लक्षणों गुणों से सम्पन्न है, रोगों से रहित शक्ति सम्पन्न है, निरुपहत है। अतः जब तक रूप, सौभाग्य और यौवन आदि गुण है, तब तक तुम इससे सुख का अनुभव करो। हमारे काल करने के बाद कुल वंश की वृद्धि करके, फिर दीक्षा लेना।

जमाली– हे माता पिता ! सुंदर दिखने वाला यह शरीर दुखों का भाजन, सैकड़ों रोगों का घर है। मिट्टी के बर्तन के समान (कांच के बर्तन के समान) दुर्बल है। अशुचि का भंडार है, सदा इसकी सम्हाल करनी पड़ती है। फिर भी यह जीर्ण घर के समान है। अनिश्चित समय में एक दिन अवश्य छोड़ना ही पड़ेगा। हे मातापिता ! हममें से कौन पहले या पीछे जायेगा, इसका भी पता नहीं है। अतः आपकी आज्ञा होने पर मैं दीक्षित होना चाहता हूं।

माता पिता– हे पुत्र ! तेरे ये आठ तरूण अवस्था वाली योग्य गुण सम्पन्न, रूप सम्पन्न, समान वय वाली, विनयवान, विचक्षणा, मधुरभाषी, मितभाषी, मन के अनुकूल, प्रिय, उत्तम,सर्वांग सुन्दर पत्नियां हैं और तेरे प्रति पूर्ण अनुराग रखने वाली है, यौवन वय में अभी तूं इनके साथ सुख भोग। यौवन अवस्था ढलने पर विषय वासना से मुक्त होने पर भोगेच्छा के कुतुहल के समाप्त होने पर तूं हमारे काल करने के बाद दीक्षा लेना।

जमाली– हे माता पिता ! ये काम भोग निश्चित ही अशुचि के भंडार, दुर्गन्ध से युक्त है। उद्वेग उत्पन्न करने वाले, वीभत्स अल्पकाल रहने वाले, तुच्छ कलिमल रूप है। शारीरिक मानसिक दुःख पूर्वक साध्य है। अज्ञानी पुरूषों या सामान्य पुरुषों द्वारा सेवित है। उत्तम पुरुषों द्वारा त्याज्य है, परिणाम में दुःखदायी है। कठिनता से छूटने वाले एवं मोक्ष मार्ग गति में विध्न रूप है। शल्य, विष एवं कंटक की उपमा वाले हैं, अनर्थों की खान है एवं महान् प्रमाद मोह एवं कर्म बंध की वृद्धि कराने वाले हैं। हे माता-पिता ! पहले या पीछे कौन जायेगा यह पता नहीं है अतः आप मुझे आज्ञा दीजिये। मैं भगवान के पास संयम ग्रहण करना चाहता हूं।

माता-पिता– हे पुत्र ! यह हमारा पड़दादाओं से कमाया हुआ अपार धन संग्रह है, सात पीढ़ी तक भी खाते-पीते, दान देते, समाप्त नहीं होने वाला है। इसलिये हे पुत्र ! मिले हुए इस धन सम्पत्ति का तुम लाभ लेवो। मनुष्य भव का आनंद लेवो फिर दीक्षा लेना।

जमाली– हे माता पिता ! यह सोना, चांदी, हीरा, जवाहरात आदि धन चोर, अग्नि, राजा, मृत्यु के अधीन पराधीन है। इसके कई हिस्सेदार हैं। यह लक्ष्मी चंचल, अध्रुव, अनित्य अशाश्वत है। इसका एक क्षण का भी भरोसा नहीं है, न आयुष्य का कोई भरोसा है। अतः हे माता पिता ! मैं आपकी आाज्ञा होने पर दीक्षित होना चाहता हूं।

(माता पिता का धन, वैभव भोगाकर्षण एवं मोह रूप शक्ति कामयाब नहीं हो सकी तो अब संयम की भीम भयनाकता के द्वारा पुत्र के विचारों को परिवर्तित करने का प्रयत्न करने लगे)।

माता पिता– हे पुत्र ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य अणुत्तर है यावत् सभी दुःखों का अंत कराने में समर्थ है। किन्तु हे पुत्र ! यह संयम-धर्म तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलने से भी अत्यन्त दुष्कर है, लोहे के चने चबाने के समान कठिन है, बालु कवल के समान नीरस है, नदी प्रवाह के सामने चलकर पार करने के समान श्रम साध्य है एवं भुजाओं से समुद्र पार करने के समान कठिन है। महाशिला को सिर पर उठाए रखने के समान है, अविश्राम गति से अनेक हजारों गुणों नियमों के भार को धारण करने से दुष्कर है। संयम अवस्था में जीवन के कितने की आवश्यक कार्य भी करना (स्नान, मंजन,श्रृंगार आदि) नहीं कल्पते हैं। फल, फूल, हरी वनस्पति, कच्चा जल, अग्नि आदि सेवन करना नहीं कल्पता है, भूख प्यास सर्दी, गर्मी, चोर, श्वापद, सर्प, डांस मच्छर आदि के कष्ट उपसर्ग सहने होते हैं। रोग आने पर उपचार नहीं करना, भूमि शयन, पैदल विहार, लोच, आजीवन ब्रह्मचर्य पालन, घर-घर भिक्षा के लिये भ्रमण, अनेक स्त्रियों को देखते हुए भी यौवन वय में नव वाड सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य पालन करना, हे पुत्र ! अत्यन्त दुष्कर है। हे पुत्र ! तेरा यह सुकुमाल शरीर संयम के कष्टों के किंचित भी योग्य नहीं है। अतः हे पुत्र ! तूं घर में रह एवं सुख भोग। जब तक हम जीवित हैं, तेरा क्षण भी वियोग नहीं देख सकते। हमारे काल कर जाने के बाद भले ही तुम श्रमण भगवान महावीर के समीप प्रव्रज्या अंगीकार करना।

जमाली– हे माता पिता ! जो कायर पुरुष होते हैं, जिनकी ऐहिक सुख लालसा नहीं मिटी है। जो इस लौकिक सुखों में आसक्त हैं, उनके लिये संयम की उक्त दुष्करता है अर्थात् उन्हें संयम पालन करना कठिन हो सकता है। किन्तु जो इस लौकिक सुखों की आशा से मुक्त विरक्त हो गये हैं, धीर वीर दृढ निश्चय वाले पुरूष होते हैं। उनके लिए ये संयम की कठिनाइयाँ तनिक भी बाधक नहीं अपितु आनंद दायक होती है। अतः हे माता पिता ! सम्पूर्ण दुखों एवं भव परंपरा का उन्मूलन करने, सुखावह संयम ग्रहण करने की आप मुझे आज्ञा प्रदान कीजिये।

संयम की आज्ञा– किसी भी प्रकार से माता पिता जमाली कुमार की वैराग्य भावना को नहीं रोक सके। तब बिना मन के ही उन्हें स्वीकृति देनी पड़ी। फिर उसका दीक्षा महोत्सव मनाया। जमाली की अभिलाषा अनुसार दो लाख सौनैया में कुत्रिकापण से रजोहरण पात्र मंगाये गये। नाई को बुलाया गया। नाई ने मुंह पर मुखवस्त्रिका बांध कर जमाली के केशों का कर्तन किया। केवल चोटी स्थान के लगभग चार अंगुल क्षेत्र प्रमाण बाल रख कर सारे केशों का क्षुर मुंडन किया। उसे भी एक लाख सौनेया दी गई।

उन केशों को स्वच्छ वस्त्र में लेकर धोकर, माता ने रत्नकरंडक में रख कर अपने सिरहाने के पास रखा।

फिर उत्तराभिमुख जमाली को बिठाकर माता पिता ने मंगल कलशों से स्नान विधि कराई। वस्त्र माला आभूषणों से सुसज्जित किया। हजार पुरुष उठावे वैसी पालखी मंगाई। उसमें जमाली कुमार पूर्वाभिमुख सिंहासन पर बैठ गया। उसके दाहिनी तरफ माता पिता भी बैठ गये। फिर अपूर्व वैभव के साथ एवं अनेक मंगलों के साथ विशाल जन समूह युक्त, अश्व, गज, रथ आदि युक्त, वह दीक्षा महोत्सव का जुलुस राजमार्गों से आगे बढ़ा। घरों से सैकड़ों हजारों नर, नारी उस जुलुस को एवं दीक्षार्थी जमाली कुमार को देखने लगे।

क्षत्रिय कुंड ग्राम नगर से वह जुलुस ब्राह्मण-कुंड ग्राम नगर की तरफ जा रहा था। मार्ग में उत्साही लोग विविध नारे लगाते मंगल घोष गुंजाते जा रहे थे जिसमें प्रमुख नारे घोष इस प्रकार थे-

दीक्षार्थी के नारे- हे नन्द (आनन्द दायक-आनंद इच्छुक) ! तुम्हारी धर्म द्वारा जय हो। हे नन्द ! तप से तुम्हारी जय हो। हे नन्द ! तुम्हारा कल्याण हो। हे नन्द ! तुम अखंडित ज्ञान, दर्शन, चारित्र के स्वामी बनो। हे नन्द ! तुम इन्द्रिय जयी बनो। हे नन्द ! तुम सर्व विघ्नों को पार करो। हे नन्द ! आप परीषह रूपी सेना पर विजय प्राप्त करें। हे नन्द ! तुम राग द्वेष रूपी मल्लों पर विजय प्राप्त करें। हे नन्द ! उत्तम शुक्ल ध्यान द्वारा कर्म रूपी शत्रुओं का मर्दन करें। हे धीर ! तीन लोक रूप विश्व मंडप में उत्तम आराधना रूप विजय पताका फहरावें। हे धीर ! अप्रमत्त होकर संयम में विचरण करें। हे वीर ! निर्मल विशुद्ध अनुत्तर केवल ज्ञान प्राप्त करें। हे वीर ! तुम्हारा धर्म मार्ग में किसी प्रकार का विध्न नहीं हो। हे महाभाग ! तुम परम पद रूप मोक्ष प्राप्त करें।

दीक्षार्थी भगवान के समवसरण में– जुलूस भगवान के समवसरण स्थल के निकट पहुंच गया। जमाली कुमार ने छत्र चंवर शिविका का त्याग किया। पैदल चल कर माता-पिता के साथ भगवान के समीप पहुंचा। माता पिता ने भगवान को वंदन नमस्कार कर निवेदन किया, हे भंते ! यह जमाली कुमार हमारा इकलौता पुत्र है। हमें इष्ट कांत वल्लभ है। यह जल कमलवत् भोगों से विरक्त बन गया है। इसे हम आपको शिष्य के रूप भिक्षा दे रहे हैं, आप स्वीकार करो।

तब श्रमण भगवान महावीर उसे स्वीकार करते हैं एवं जमाली कुमार को निर्देश करते हुए कहते हैं कि हे देवानुप्रिय ! तुम्हें सुख हो वैसा करो। तब जमालिकुमार ने ईशानकोण में निश्चित (कक्ष) में जाकर स्वयं वस्त्राभूषण उतारे। माता ने उन्हें शुद्ध वस्त्र में ग्रहण किया एवं आंसू गिराती हुई जमाली कुमार को अंतिम शिक्षा वचन कहे कि हे पुत्र ! तुम अच्छी तरह संयम पालन करना,

तप में पराक्रम करना एवं किंचित भी प्रमाद मत करना। इस प्रकार शिक्षा वचन कहते हुए माता पिता भगवान को वंदन नमस्कार कर के चले गये।

500 पुरुषों के साथ दीक्षा ग्रहण– जमाली कुमार ने चार अंगुल चोटी के बालों का पंचमुष्टि लोच किया। भगवान के समीप पहुंचा। जमाली के साथ ही 500 पुरुष और दीक्षा के लिये तैयार हो गये थे उनका विस्तृत वर्णन यहां नहीं किया गया है। भगवान ने 500 पुरुषों के साथ जमाली कुमार को दीक्षित किया।

दीक्षा लेकर जमाली अणगार ने संयम विधियों का ज्ञान अभ्यास किया। तप संयम में आत्मा को भावित किया यावत् 11 अंग शास्त्रों का अध्ययन किया।

स्वतंत्र विचरण– किसी समय जमाली अणगार ने स्वतंत्र विचरण के लिये भगवान से निवेदन किया। भगवान ने वैसी फरसना जानकार उसे स्वीकृति नहीं दी मौन रखी। 500 शिष्यों सहित उसने भगवान को वंदन कर वहां से विहार कर दिया। विचरण करते हुए वह श्रावस्ती नगरी में पहुंचा। आहार की अनियमितता से एवं अरसाहार विरसा हार से रूक्ष प्रांत कालातिक्रांत प्रमाणातिक्रांत एवं शीतल आहार से उसके शरीर में विपुल रोगांतक उत्पन्न हुआ, प्रगाढ़ दुःस्सह वेदना होने लगी। उसका शरीर पित्त ज्वर एवं दाह से आक्रांत हो गया।

मिथ्यात्वोदय– वेदना से पीडित बने जमाली अणगार ने श्रमणों को संथारा (बिछौना) करने के लिये कहा। बिछौना करने में कुछ समय लगा। उसे खड़ा रहना असह्य हो रहा था। शीघ्रता करते हुए उसने पूछ लिया कि हे देवानुप्रियों ! बिछौना बिछा दिया या बिछा रहे हो ? श्रमणों ने उत्तर दिया कि अभी बिछौना बिछा नहीं है बिछा रहे हैं। कष्ट की असह्यता में प्राप्त उन वाक्यों पर उसका उलटा चिंतन चलने लगा, मिथ्यात्व कर्म दलिकों का उदय हुआ और इस प्रकार सोचने लगा कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी का जो यह सिद्धांत है- ''चलते हुए चला, करते हुए किया'' इत्यादि वह सिद्धांत मिथ्या है, यह मैं प्रत्यक्ष अनुभव कर रहा हूं। इस प्रकार के मनोगत भाव उसने श्रमणों के सामने रखे कई श्रमणों ने उस पर श्रद्धा की और कइयों ने उस पर श्रद्धा नहीं की प्रतिकार किया किन्तु मिथ्यात्वोदय के प्रभाव से जमाली को यह दृढ निश्चय हो गया कि भगवान का सिद्धांत मिथ्या है। तब कुछ श्रमण वहां से विहार कर जहां चंपानगरी में भगवान विराजमान थे वहां चले गये।

अविनय– कुछ ही दिनों में जमाली भी स्वस्थ हो गया वह भी विहार करते हुए चंपानगरी में भगवान के समीप पहुंचा और खड़ा रहकर कहने लगा कि भंते ! आपके कई शिष्य छद्मस्थ ही विचरण करके आते हैं किन्तु मैं केवली बनकर आया हूं।

गौतम स्वामी ने एक ही प्रश्न पूछ कर उसे निरूत्तर एवं चुप कर दिया। फिर भगवान ने जमाली से कहा कि हे जमाली मेरे अन्य छद्मस्थ अणगार इस प्रश्न का उत्तर मेरे जैसा ही दे सकते हैं किन्तु वे अपने को तुम्हारे समान केवली नहीं कह सकते।

फिर भगवान ने उस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट किया कि लोक शाश्वत है क्योंकि यह सदा था, है एवं रहेगा। लोक अशाश्वत है क्योंकि यह उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आदि रूपों पर्यायों में बदलता रहता है। यह जीव शाश्वत है क्योंकि सदा था, है एवं रहेगा एवं अशाश्वत है क्योंकि नारक आदि पर्यायों में बदलता रहता है।

भगवान से अलगाव और मिथ्या प्ररूपण–

जमाली निरूत्तर हुआ एवं श्रद्धा प्रतीति न करते हुए मिथ्यात्वोदय वाला होने से वहां से निकल गया और अनेक असत् प्ररूपण करते हुए विचरण करने लगा। इस प्रकार मिथ्यात्व के अभिनिवेश से स्वयं को अन्यों को भ्रांत करता हुआ तप संयम का पालन करने लगा। अनेक वर्षों (10-15वर्ष)

द्रव्य संयम का पालन किया। क्योंकि प्रथम गुणस्थानवर्त्ती था। 15 दिन के संथारे से काल करके छट्ठे देवलोक में किल्विषिक देव के रूप में उत्पन्न हुआ।

जमाली किल्विषी देव- जमाली को काल किया जान कर गौतम स्वामी ने उसके गति स्थिति भव भ्रमण सम्बन्धी किये। उत्तर में भगवान ने यथार्थ भाव कहे। जमाली देवलोक के भव को पूरा कर 4-5 मनुष्य तिर्यंच नरक देव के भव करेगा, फिर सम्पूर्ण कर्म क्षय कर मोक्ष जायेगा। (यहां लिपि दोष आदि कारणों से प्रतियों में नरक शब्द छूट चुका है। किन्तु उसके पूर्व किल्विषिकों की भव भ्रमण पृच्छा में नरक शब्द स्पष्ट रूप से सभी प्रतियों में उपलब्ध है)।

किल्विषियों का भव भ्रमण- किल्विषिक देव तीन प्रकार के होते हैं और इनके तीन स्थान है- (1) प्रथम द्वितीय देवलोक की नीचली प्रतर में तीन पल्योपम की उम्र वाले। (2) तीसरे चौथे देवलोक की नीचली प्रतर में तीन सागरोपम की उम्र वाले (3) छट्ठे देवलोक में 13 सागर की उम्र वाले।

ये कम से कम 4-5 नरक तिर्यंच मनुष्य देव के भव करते हैं और उत्कृष्ट अनंत संसार में परिभ्रमण करते हैं।

क्योंकि जो कुल गण संघ के विरोधी द्वेषी होते हैं, आचार्य उपाध्याय आदि के अयश अवर्णवाद अकीर्ति करने वाले होते हैं, अनेक असत्य अर्थों की प्ररूपणा करते हैं, कदाग्रह से स्वयं भ्रमित होते हैं एवं दूसरों को भी भ्रमित करते हैं, साथ ही निरंतर तप संयम की विधियों का उत्कृष्ट पालन करते हैं। अंतिम समय तक भी अपनी मिथ्यावादिता की आलोचना प्रायश्चित शुद्धि करण नहीं करते हैं। ये जीव इन किल्विषिक देव स्थानों को प्राप्त करते हैं।

औपपातिक सूत्र आदि में भी इनका वर्णन किया गया है।

चौतीसंवा उद्देशक-

1. किसी एक मनुष्य, पशु या त्रस जीव को मारने वाला व्यक्ति अन्य भी अनेक जीवों की हिंसा करने वाला होता है।

2. किसी श्रमण की हिंसा करने वाला उसकी हिंसा के साथ अन्य अनंत जीवों का भी नाशक होता है। इसका कारण यह है कि मुनि अनंत जीवों का रक्षक है, विरत है, मर कर वह अविरत हो जाता है, अथवा अनंत जीवों के रक्षक की हिंसा करने की अपेक्षा उसे अनंत जीवों का हिंसक एवं अनंत जीवों के वैर से स्पृष्ट होना कहा गया है।

3. पांच स्थावर श्वासोश्वास में पांच स्थावर को ग्रहण कर सकते हैं उससे उन्हें तीन, चार, पांच क्रिया लगती है।

4. वायु से या प्रचंड वायु से जो वृक्ष का मूल हिलाया जाता है या गिराया जाता है तो वायुकाय को तीन चार या पांच क्रिया लगती है।

दसवां शतक

पहला उद्देशक-

1. दस दिशाएं-

दस दिशा	नाम	दिशा विदिशा	स्वरूप
पूर्व	इन्द्रा	दिशा	दो-दो प्रदेशी वृद्धि
पूर्व दक्षिण	आग्नेय कोण	विदिशा	एक प्रदेशी सर्वत्र
दक्षिण	यमा	दिशा	दो-दो प्रदेशी वृद्धि
दक्षिण पश्चिम	नैऋत्य कोण	विदिशा	एक प्रदेशी सर्वत्र
पश्चिम	वारुणी	दिशा	दो-दो प्रदेशी वृद्धि
पश्चिम उत्तर	वायव्य कोण	विदिशा	एक प्रदेशी सर्वत्र
उत्तर	सौम्या (सौमा)	दिशा	दो-दो प्रदेशी वृद्धि
उत्तर पूर्व	ईशान कोण	विदिशा	एक प्रदेशी सर्वत्र
ऊर्ध्व दिशा	विमला दिशा	दिशा	चार प्रदेशी सर्वत्र
अधो दिशा	तमा दिशा	दिशा	चार प्रदेशी सर्वत्र

2. चारों दिशाएं मूल में दो प्रदेश चौड़ी है फिर आगे प्रत्येक प्रदेश में दो-दो प्रदेश वृद्धि होती गई है अर्थात् दोनों बाजू एक-एक प्रदेश बढ़ती गई है। विदिशाएं और ऊर्ध्व-अधो दिशा सर्वत्र समान ही है।

3. दिशाओं का उद्‌गम मेरू के मध्य से होता है। वहां चार ऊपर, चार नीचे, यों आठ रूचक प्रदेशों से दसों दिशाएं प्रारंभ होती है। दिशाएं गाड़ी के ''जूहे'' (ओधण) के आकार की होती है। विदिशाएं मुक्तावली के आकार की है। ऊंची नीची दिशा चार प्रदेशी होने से रूचकाकार है।

4. दिशाओं के विशाल होने से उसमें जीव और जीव के देश या प्रदेश का समावेश हो जाता है। अतः नियमतः जीव, जीवदेश, जीव प्रदेश पाये जाते हैं। एकेन्द्रियादि पंचेन्द्रिय पर्यन्त सभी जीव पाये जाते हैं।

अजीव में तीन अस्तिकाय के देश एवं प्रदेश यों 6 होते हैं एवं अद्धाकाल होता है और पुद्‌गलास्तिकाय के चारों भेद हैं। कुल 6 + 1 = 7 + 4 = 11 भेद अजीव के होते हैं।

5. विदिशाएं एक प्रदेशी होने से उनमें पूर्ण जीव नहीं हो सकता। देश अथवा प्रदेश हो सकता है। एकेन्द्रिय जीव नियमतः होते हैं, शेष जीव कभी होते कभी नहीं होते हैं। जीव देश में तीन भंग होते हैं यथा- जीव का 1 देश, एक जीव के अनेक देश और अनेक जीव के अनेक देश। प्रदेश में दो भंग होते हैं क्योंकि एक प्रदेश रूप पहला भंग नहीं होता है। अनेक प्रदेश ही होते हैं। अजीव के 7 + 4 = 11 भेद दिशा के समान ही होते हैं।

6. ऊंची दिशा में विदिशा के समान जीव अजीव के भेद भंग होते हैं क्योंकि चार प्रदेशी होती है। नीची दिशा भी ऊंची दिशा के समान है किन्तु वहां अद्धाकाल (सूर्य का प्रकाश) नहीं हैं।

7. प्रज्ञापना पद 21 का अवगाहना संस्थान सम्बन्धी सम्पूर्ण वर्णन यहां समझना।

दूसरा उद्देशक-

1. कषाय भाव में वर्त्तमान अणगार दिशाओं का, रूपों का अवलोकन करता हुआ सांपरायिक क्रिया वाला होता है और अकषाय भाव में रहा हुआ जीव इरियावहि क्रिया वाला होता है। यहां कषाय भाव के लिए ''वीचीपथ'' शब्द का प्रयोग किया गया है।

2. तीन योनी सम्बन्धी वर्णन प्रज्ञापना सूत्र पद 9 के समान समझना। तीन वेदन सम्बन्धी वर्णन 35वें पद के समान है। भिक्षु पडिमा का सम्पूर्ण वर्णन दशाश्रुत स्कंध सूत्र के समान है।

3. भिक्षु किसी भी अकृत्य स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना काल कर जाये जो उसके आराधना नहीं होती है। कोई यह सोचे कि पीछे चरम समय में सब आलोचना कर लूंगा, अभी नहीं करना और बीच में ही बिना आलोचना किए काल कर जाय तो उसके आराधना नहीं होती है।

कोई यह सोचे कि श्रावक गृहस्थ जीवन के कितने ही अव्रत सेवन करते हुए भी देवलोक में जाता है तो मैं व्यंतर आदि देव अवस्था को तो अवश्य प्राप्त करूंगा, ऐसे संकल्पों से छोटे मोटे दोषों की आलोचना प्रतिक्रमण न करे, और इस संकल्प की भी आलोचना एवं प्रतिक्रमण न करे तो वह आराधक नहीं होता है अर्थात् उक्त सभी विराधक होते हैं।

उक्त कोई भी साधक आलोचना प्रतिक्रमण करले या अंतिम समय में भी उसे आलोचना प्रतिक्रमण का अवसर प्राप्त हो जाय, तो वह आराधक हो सकता है।

तीसरा उद्देशक-

1. देव देवी अपने चार-पांच आवास तक स्वाभाविक शरीर की गति से जा सकते हैं, उससे अधिक जाने के लिये उत्तर वैक्रिय करना पड़ता है।

2. देव देवी अपने अल्पर्द्धिक देव देवी के बीच में से अर्थात् उनका उल्लंघन करते हुए जा सकते हैं। समान या अधिक ऋद्धि वाले देव देवी का उल्लंघन वे नहीं कर सकते। किन्तु कदाचित वे प्रमाद में हो या उन्हें धोखे में करके उल्लंघन कर सकते हैं।

3. घोड़ा जब दौड़ता है तब उसके हृदय एवं यकृत के बीच में 'कडकड' नामक वायु उत्पन्न होती है जिससे उसके ''खु-खु'' ऐसी आवाज आती है।

4. अब हम बैठेंगे, सोयेंगे, खड़े रहेंगे आदि व्यवहार भाषा प्रज्ञापनी भाषा होती है, असत्य नहीं होती है। अन्य भी आमंत्रणी जायणी पुच्छणी भाषा भी प्रज्ञापनी भाषा होती है, वह असत्य नहीं होती है।

चौथा उद्देशक-

1. चमरेन्द्र के त्रायत्रिंशक (मंत्री या पुरोहित स्थानीय) देव शाश्वत होते हैं। एक चवते हैं तो दूसरे उत्पन्न हो जाते हैं।

कांकदी नामक नगरी में 33 मित्र सेठ (गाथापति) रहते थे। वे पहले शुद्धाचारी श्रमणोपासक थे, बाद में शिथिलाचारी बन गये। अंत में आलोचना शुद्धि किये बिना आयु समाप्त हो जाने से वे 33 ही असुरेन्द्र चमरेन्द्र के त्रायत्रिंशक देव बने थे। वर्त्तमान में ये ही तेतीस कांकदी के श्रावक देवरूप में त्रायत्रिंशक है। ऐसे ही 33 होते रहते हैं विच्छेद नहीं पड़ता है।

श्यामहस्ति अणगार के द्वारा गौतम स्वामी को पूछे गये और फिर गौतम स्वामी द्वारा भगवान से पूछे गये प्रश्न का उक्त सारांश है।

बलीन्द्र के 33 त्रायत्रिंशक देव बिभेलनगर में श्रमणोपासक थे और बाद में शिथिलाचारी हो जाने पर ये असुरकुमार देव में उत्पन्न हुए हैं। इसी प्रकार दस भवनपतियों के त्रायत्रिंशक देव हैं।

शक्रेन्द्र के भी त्रायत्रिंशक देव हैं। वे पलाशक नामक नगर में शुद्ध श्रमणोपासक पर्याय का पालन कर अराधक होकर देव बने हैं। ईशानेन्द्र के त्रांयत्रिंशक चम्पा नगरी के 33 श्रावक थे। आराधक होकर देव बने हैं ये दोनों आराधक एक महिने के संथारे से काल किये थे। भवनपति के त्रायत्रिंशक 15 दिन के संथारे से काल किये थे।

पाचवां उद्देशक-

देव	अग्रमहिषी	परिवार	विकुर्वण रूप	त्रुटित
1. चमरेन्द्र	5	8000	8000	40000
2. बलीन्द्र	5	8000	8000	40000
3. नवनिकाय के इन्द्र	6-6	6000	6000	36000
4. सभी के लोकपाल	4-4	1000	1000	4000
5. व्यंतरेन्द्र	4-4	1000	1000	4000
6. ज्योतिषेन्द्र	4-4	4000	4000	16000
7. ग्रह	4-4	4000	4000	16000
8. शक्रेन्द्र	8	16000	16000	128000
9. ईशानेन्द्र	8	16000	16000	128000
10. दोनों के लोकपाल	4	1000	1000	4000

सूत्र में सभी की अग्रमहिषी के नाम कहे गये हैं।

एक एक अग्रमहिषी के परिवार के देवियां जितनी होती है। उतनी संख्या में वह अपने रूपों की विकुर्वणा इन्द्र के साथ काय परिचारणा हेतु कर सकती है। इन्द्र के परिचारणा योग्य उत्कृष्ट देवी के रूपों को ''तुटित'' शब्द से कहा गया है। त्रुटित का अर्थ- एक टुकड़ी - एक समूह। अपनी सुधर्मा सभा में कोई भी देव मैथुन सेवन नहीं करते हैं।

छट्ठा उद्देशक–

शक्रेन्द्र के जन्म आदि का सम्पूर्ण वर्णन सूर्याभ देव के वर्णन के समान है।

देखें– राजप्रश्नीय सूत्र शक्रेन्द्र 32 लाख विमानों का स्वामी होता है। उद्देशक 7 से 34 उत्तर दिशा के 28 अंतरद्वीपों का वर्णन जीवाभिगम सूत्र के समान हैं देखें सारांश।

ग्यारहवां शतक

पहला उद्देशक–

इस उद्देशक का नाम ''उत्पल उद्देशक'' सिद्धांत में प्रसिद्ध है। इसमें उत्पल कमल वनस्पति के भव सम्बन्धी वर्णन 31 द्वारों से किया गया है। उसके समान ही आगे आठ उद्देशक तक वर्णन है। उत्पल पत्र आदि प्रत्येक वनस्पति में पहले एक जीव उत्पन्न होता है फिर उसकी निश्राय में अनेक जीव उत्पन्न होते रहते हैं।

यहां 31 द्वारों के वर्णन के साथ एक वचन, बहुवचन की अपेक्षा कई द्वारों में भंग भी कहे गये हैं, उनकी विधि यह है कि पूछे गये बोलों में एक बोल पाया जाय तो उसके एक वचन और बहुवचन के यों दो भंग होते हैं। दो बोल पाये जाय तो उसके असंयोगी 4, द्वि संयोगी 4, यों 8भंग होते हैं। तीन बोल पाये जाय तो 26 भंग (6+12+8) होते हैं और 4 बोले पाये जाय तो 80 भंग (8+24+32+16) होते हैं। इन 8-26-80 भंगों की भंग बनाने की विधि प्रज्ञापना सूत्र पद 16 में बताई गई है।

उत्पल का द्वार वर्णन–

1. आगति	-	तीन गति से 1 नरक छोड़कर।
2. उत्पात	-	एक समय में 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्याता उपजे।
3. परिमाण	-	असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय तुल्य असंख्याता होते हैं।
4. अवगाहना	-	उत्कृष्ट 1000 योजन साधिक होती है।
5. बंध	-	सात कर्मों का बंध होता है अबंध नहीं होता है भंग 2-2 और आयु कर्म के बंध-अबंध दोनों होते हैं भंग 8
6. वेदना	-	साता अशाता दोनों वेदना होती है। भंग 8
7. उदय	-	आठ कर्मों का उदय होता है अनुदय नहीं। भंग 2-2
8. उदीरणा	-	6 कर्मों के उदीरक ही होते हैं अनुदीरक नहीं। भंग 2-2, आयु और वेदनीय कर्म के उदीरक अनुदीरक दोनों होते हैं भंग 8-8
9. लेश्या	-	कृष्णादि चार लेश्या होती है। भंग 80
10. दृष्टि	-	एक मिथ्यादृष्टि। भंग 2
11. ज्ञान	-	अज्ञानी है, ज्ञानी नहीं। भंग 2

12. योग	-	काय योगी है। भंग 2
13. उपयोग	-	दोनों। भंग 8
14. वर्णादि	-	20 बोल पावे। भंग 2-2, शरीर की अपेक्षा।
15. उश्वास	-	तीन बोल पावे- 2. उश्वासक, 2. निःश्वासक, 3. नो उश्वासक। नो निःश्वासक भंग 26 होते हैं।
16. आहार	-	आहारक अनाहारक दोनों। 2 भंग
17. विरत	-	अविरत होते हैं। 2 भंग
18. क्रिया	-	सक्रिया होते हैं अक्रिया नहीं। भंग 2
19. बंधक	-	सप्त विध बंधक और अष्ट विध बंधक दोनों। भंग 8
20. संज्ञा	-	चार होती है। भंग 80
21. कषाय	-	चार होते हैं । भंग 80
22. वेद	-	एक नपुंसक । भंग 2
23. वेद बंधक	-	तीनों वेद बंधक। भंग 26
24. सन्नी	-	केवल असन्नि है। भंग 2
25. इन्द्रिय	-	सइन्द्रिय है अनिन्द्रिय नहीं। भंग 2
26. कायस्थिति	-	उत्कृष्ट असंख्य काल।
27. कालादेश	-	चार स्थावर के साथ उत्कृष्ट असंख्य भव असंख्य काल। वनस्पति के साथ उत्कृष्ट अनंत भव अनंत काल। विकलेन्द्रिय के साथ उत्कृष्ट संख्याता भव संख्याता काल। तिर्यंच पंचेन्द्रिय एवं मनुष्य के साथ उत्कृष्ट 8भव चार करोड़ पूर्व चालीस हजार वर्ष।
28. आहार	-	288प्रकार का 6दिशा से
29. स्थिति	-	जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दस हजार वर्ष।
30. समुद्घात	-	तीन क्रमशः। भंग 26
31. मरण	-	समवहत असमवहत दोनों। भंग 8
32. गति	-	तिर्यंच मनुष्य दो गति में जावे।
33. सर्वजीव	-	सभी जीव उत्पल कमल के सभी विभागों में अनेक या अनंत बार उत्पन्न पूर्व है।

असंयोगी भांगा 8	क1, नी1 का1 ते1, क3 नी3 का3 ते3	= 8 भांगे
दो संयोगी भांगा 24	क1 नी1, क1 नी3, क3 नी1, क3 नी3 क1 का1, क1 का 3, क3 का1, क3 का3 क1 ते1, क1 ते3, क3 ते1, क3 ते3 नी1 का1, नी1 का3, नी3 का1, नी3 का3 नी1 ते1, नी1 ते3, नी3 ते1, नी3 ते3 का1 ते1, का1 ते3, का3 ते1, का3 ते3	अंक 11, 13, 31, 33 = 24 भांगे
तीन संयोगी भांगा 32–	क1 नी1 का1, क1 नी1 का3, क1 नी3 का1, क1 नी3 का3, क3 नी1 का1, क3 नी1 का3, क3 नी3 का1, क3 नी3 का3, क1 नी1 ते1, क1 नी1 ते3, क1 नी3 ते1, क1 नी3 ते3 क3 नी1 ते1, क3 नी1 ते3, क3 नी3 ते1, क3 नी3 ते3 क1 का1 ते1, क1 का1 ते3, क1 का3 ते1, क1 का3 ते3 क3 का1 ते1, क3 का1 ते3, क3 का3 ते1, क3 का3 ते3 नी1 का1 ते1, नी1 का1 ते3, नी1 का3 ते1, नी1 का3 ते3 नी3 का1 ते1, नी3 का1 ते3, नी3 का3 ते1, नी3 का3 ते3 अंक 111, 113, 131, 133–311, 313, 331, 333	= 32 भांगे
चार संयोगी भांगा 16–	क1 नी1 का1 ते1, क1 नी1 का1 ते3 क1 नी1 का3 ते1, क1 नी1 का3 ते3 क1 नी3 का1 ते1, क1 नी3 का1 ते3 क1 नी3 का3 ते1, क1 नी3 का3 ते3 क3 नी1 का1 ते1, क3 नी1 का1 ते3 क3 नी1 का3 ते1, क3 नी1 का3 ते3 क3 नी3 का1 ते1, क3 नी3 का1 ते3 क3 नी3 का3 ते1, क3 नी3 का3 ते3	
	अंक–1111, 1113, 1131, 1133, 1311, 1313, 1331, 1333, 3111, 3113, 3131, 3133, 3311, 3313, 3331, 3333	= 16 भांगा कुल 80 भांगा

उद्देशक 2 से 8 तक-

2. सालुक, 3. पलास, 4. कुंभिक, 5. नालिक, 6. पद्म, 7. कर्णिका, 8. नलिन कमल। इन वनस्पतियों का वर्णन प्रत्येक उद्देशक में है। इनमें प्रायः वर्णन समान है, कुछ फर्क इस प्रकार है।

1. अवगाहना- सालुक में अनेक धनुष, पलास में अनेक कोश। शेष 6में 1000 योजन साधिक।

2. स्थिति- कुंभिक, नालिक में अनेक वर्ष, शेष 6में 10000 वर्ष।

3. लेश्या- कुंभिक, नालिक, पलास में तीन। शेष सभी में चार।

इन आठ में कई तो विविध प्रकार के कमल ही है। पलास कुंभिक आदि भी ऐसी ही कोई वनस्पतियां होनी चाहिये। पलास से प्रसिद्ध ढांक वनस्पति अर्थ किया जाय तो 10000 वर्ष की उम्र होना विचारणीय होता है। अतः सांसारिक विविध कमल विशेष ही समझने चाहिये।

नवमा उद्देशक-

शिवराजर्षि- 1. हस्तिनापुर में ''शिव'' नामक राजा राज्य करता था। वह राजा के योग्य गुणों से सम्पन्न था। उसके धारणी नामक राणी एवं शिवभद्र कुमार नामक पुत्र था। यथा समय राजकुमार राज्य कार्य की देखरेख करने लग गया।

एक बार राजा को रात्रि में विचार उत्पन्न हुए कि मुझे धन सम्पत्ति एवं राज्य सम्बन्धी सभी अनुकूलताएं प्राप्त हुई है। यह सब ऋद्धि पूर्व पुण्य से ही प्राप्त हुई है। अब समय रहते ही इन सब का त्याग करके मुझे पुत्र को राज्य संभला कर संन्यास ग्रहण कर लेना चाहिये। उत्पन्न उन विचारों को शिवराजा ने दृढ किये एवं तदनुसार पुत्र को राज्याभिषेक किया।

शिवराजर्षि की तापसी दीक्षा- उसके बाद योग्य तिथि मुहूर्त्त देखकर मित्र-ज्ञातीजन आदि को भोजन कराकर सम्मानित करके उन सभी की एवं पुत्र की आज्ञा स्वीकृति लेकर तापसाश्रम में जाकर दिशा प्रोक्षिक तापसी प्रव्रज्या अंगीकार की।

गंगा नदी के किनारे स्वयं की कुटिया बनाकर रहने लगा। उसने दीक्षा लेते ही बेले-बेले पारणा करना प्रारंम्भ कर दिया। बेले में वह आतापना भूमि में जाकर आतापना लेता था। पारणे के दिन आतापना भूमि से उतर कर वल्कल वस्त्र पहिन कर अपनी कुटिया में आया। बांस की छबड़ी और कावड़ लेकर पूर्व दिशा में गया पूर्व दिशा की पूजा करके सोम लोकपाल से इस प्रकार बोला- ''हे पूर्व दिशा के स्वामी सोम महाराजा ! धर्म साधन में प्रवृत्त मुझ शिव राजर्षि का आप रक्षण करें और पूर्व दिशा में रहे कंद मूल छाल पत्र पुष्प बीज हरी वनस्पति लेने की आज्ञा दीजिये।''

ऐसा कह कर फिर पूर्व दिशा में यथेच्छ सामग्री से छबड़ी भर कर कुटिया में आया। फिर गंगा नदी में जाकर स्नानादि करके आया। फिर हवन की पूर्ण तैयारी करके मधु घृत चावल से होम किया वैश्व देव और अतिथि पूजन करके फिर आहार किया। फिर दूसरा बेला स्वीकार किया।

इस प्रकार क्रमशः पारणे में दक्षिण, पश्चिम, उत्तर दिशा का पूजन कर उस दिशा के लोकपाल से आज्ञा प्राप्त की, शेष विधि प्रथम पारणे के समान की। यों तप साधना करते करते उस भद्र एवं विनीत प्रकृति वाले शिव राजर्षि को विभंग ज्ञान उत्पन्न हो गया। जिससे वह सात द्वीप समुद्र देखने लग गया।

विभंग ज्ञानी शिवराजर्षि- वह आतापना भूमि से कुटिया में आया वहां से तापसाश्रम में आया और वहां से हस्तिनापुर नगर में गया और जगह जगह प्रचार करने लगा कि मुझे अतिशय ज्ञान दर्शन उत्पन्न हुआ है, सात द्वीप समुद्र है इतना ही लोक है। उसके आगे कुछ नहीं है। बात नगर में व्याप्त हो गई। लोगों की चर्चा का विषय बन गया। कई श्रद्धा करते, कई संदेह करते।

विचरण करते हुए श्रमण भगवान महावीर का हस्तिनापुर में पर्दापण हुआ। गौतम स्वामी पारणे में गोचरी के लिये गये। लोगों की चर्चा गौतम स्वामी तक भी पहुंची। गौतम स्वामी ने भगवान से निवेदन कर लोगों का प्रश्न रख दिया। वहां उस समय भी विशाल परिषद इकट्ठी हो गई थी। उस परिषद के समक्ष ही भगवान ने स्पष्टीकरण किया कि सात द्वीप समुद्र देखने तक की बात सही है किन्तु उसके साथ उसने जो प्ररूपण करना प्रारम्भ किया है कि इतना ही लोक है आगे नहीं है, यह उसका कथन मिथ्या है। और उसका ज्ञान भी अपूर्ण है। वास्तव में द्वीप समुद्र असंख्य है।

परिषद के चले जाने पर नगर में दुरंगी बातें चलने लगी। शिवराजर्षि तक भी सारी वार्त्ता पहुंच गई वह शंकित कांक्षित हुआ, विचाराधीन बना एवं उसका विभंग ज्ञान समाप्त हो गया। तब उसने ऐसा विचार किया कि श्रमण भगवान महावीर के समीप जाकर पर्युपासना करना मेरे लिए इह भव, पर भव में कल्याण कर होगा, ऐसा विचार कर वह तापसाश्रम में आया। योग्य उपकरण वेशभूषा ग्रहण कर भगवान की सेवा में पहुंचा।

शिवराजर्षि की श्रमण दीक्षा एवं मुक्ति- तीन बार आवर्त्तन कर वंदना नमस्कार कर भगवान की सेवा में बैठ गया। भगवान ने शिवराजर्षि प्रमुख अन्य भी उपस्थित परिषद को उपदेश दिया। शिवराजर्षि को भगवान की वाणी अत्यन्त रुचिकर लगी और वहीं जिन प्रव्रज्या अंगीकार करने के लिये तत्पर हुआ। स्कंधक अणगार के समान उसका संयम ग्रहण सम्बन्धी वर्णन समझना। ईशान कोण में जाकर भण्डोपकरण रखे, पंचमुष्ठि लोच किया और भगवान के समीप पहुंच कर वंदन किया। तदनंतर भगवान ने उसे दीक्षा पाठ विधि पूर्वक पढ़ाया ! शिवराजर्षि श्रमण निर्ग्रन्थ बन गया। 11 अंगों का अध्ययन किया। अंत में उसी भव में सम्पूर्ण कर्म क्षय कर मुक्त हुआ।

2. गंगा किनारे रहने वाले अन्य वानप्रस्थ संन्यासी-

अग्निहोत्री, पोतिक वस्त्रधारी, कौत्रिक, याज्ञिक, श्रद्धालु, खप्परधारी, कुंडिकाधारी, फल भोजी, उमज्जक, निमज्जक, सम्प्रक्षालक, ऊर्ध्व कंडुक, अधोकंडुक, दक्षिण कूलक, उत्तर कूलक, शंख धमक, कूल धमक, मृगलुब्धक, हस्ती तापस, जलाभिषेक किये बिना भोजन नहीं करने वाले, वायु में रहने वाले, पानी में रहने वाले, वल्कलधारी जलभक्षी, वायुभक्षी, शेवालभक्षी मूलाहारी कंदाहारी पत्राहारी, छाल खाने वाले, पुष्पाहारी, फलाहारी, बीजाहारी, स्वतः नीचे गिरे हुए फल आदि खाने वाले, ऊंचा दंड रखने वाले, वृक्षवासी, मंडलवासी, वनवासी, बिलवासी, दिशाप्रोक्षी, आतापना लेने वाले, पंचाग्नि तापने वाले, इत्यादि और भी औपपातिक सूत्र वर्णित संन्यासी गंगा किनारे रहते थे।

वानप्रस्थ आश्रम में विविध साधनाएं एवं विविध वेष-भूषा और उपकरण होते हैं। ये अपनी मान्यतानुसार विविध तपस्याएं करते हैं। समभाव-उपशांति की उपलब्धि भी कई साधक करते हैं। अंतिम समय में संलेखना संथारा भी करते हैं। जो महिना, दो महिना भी चलता है और पादपोपगमन मरण भी स्वीकार करते हैं। किन्तु जीवादि का सही ज्ञान एवं आचरण नहीं होते हुए भी प्रकृति की शांति, समाधि एवं तपस्या के बल से ये देवगति में तो जाते हैं किन्तु अधिकतर भवनपति व्यंतर आदि सामान्य देव होते हैं।

गौतम, स्कंधक, शिवराजर्षि, सरीखे कई भद्रिक परिणामी पुनः वीतराग प्रभु के समीप श्रमण प्रव्रज्या स्वीकार करके साधना करते हुए आराधक गति को भी प्राप्त करते हैं।

10वां उद्देशक लोक-अलोक- लोक, अलोक, अधोलोक, तिर्यकलोक, ऊर्ध्वलोक, इन पांच का वर्णन इस प्रकार है-

लोक- सुप्रतिष्ठक संस्थान अर्थात् तीन सरावले क्रमशः उल्टा, सीधा, उल्टा, ऊपर ऊपर रखे हो वैसा आकार है। इसमें जीव है अजीव है। धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय है इनके प्रदेश है। आकाशास्तिकाय का देश है, काल है, पुद्‌गल के चारों भेद है।

नीचा लोक- यह तृपाकार (तिपाही के आकार) वाला है। जीव हैं। सात अरूपी अजीव हैं, 4 रूपी अजीव है, सात नरक पिंड रूप सात विभाग है।

तिर्च्छा लोक- यह झालर के आकार वाला है, असंख्य विभाग रूप इसमें असंख्य द्वीप समुद्र है। जीव है, अजीव के 7+4 = 11 भेद हैं।

ऊर्ध्व लोक- यह ऊर्ध्व (खड़ी) मृदंग के आकार है। 15 विभाग है = 12 देवलोक, ग्रैवेयक, अणुत्तर विमान, सिद्ध शिला। जीव हैं, बादर अग्नि नहीं है। अजीव में से काल नहीं है, शेष नीचा लोक के समान है।

अलोक- झुसिर गोलक के आकार वाला है, कोई विभाग नहीं है। अरूपी, अजीव-देश और प्रदेश हैं।

तीनों लोक के एक आकाश प्रदेश में जीव के देश प्रदेश होते हैं। अजीव के धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय का देश प्रदेश और काल ये 5 भेद होते हैं। ऊर्ध्व लोक में काल नहीं होता है।

लोक में वर्णादि 20 बोल होते हैं। अनंत जीव द्रव्य, अनंत अजीव द्रव्य होते हैं। अलोक में नहीं होते।

करोड़ों (लाख करोड़) माइल की गति से भी कोई देव मेरू पर्वत से चले तो भी लाखों करोड़ों वर्षों में लोक का किनारा नहीं आ सकता है। इतना विशाल लोक है। अलोक लोक से भी अनंत गुणा विशाल है।

जिस तरह एक नर्तकी को देखने के लिये हजारों लोगों की दृष्टि पड़ती है। वे दृष्टियां नर्तकी को या आपस में किसी को बाधा पीड़ा नहीं कर सकती। वैसे ही लोक के एक आकाश प्रदेश पर विविध जीव एवं अजीव रह सकते हैं और उनमें किसी को किसी से बाधा नहीं पहुंचती है। क्योंकि वे सूक्ष्म जीव होते हैं अथवा औदारिक शरीर रहित वाटे बहता जीव आदि होते हैं। अरूपी अजीव भी वहां होते हैं। रूपी अजीव सूक्ष्म परिणाम परिणत भी होते हैं। इन अपेक्षाओं से एक आकाश प्रदेश पर वे सभी एक साथ रह सकते हैं।

ग्यारहवां उद्देशक-

सुदर्शन श्रमणोपासक- ''वाणिज्यग्राम'' नामक नगर में जीवाजीव का ज्ञाता, गुण सम्पन्न, सुदर्शन श्रमणोपासक रहता था। एक बार भगवान महावीर स्वामी नगर के बाहर द्युतिपलासक बगीचे में पधारे। सुदर्शन श्रावक विशाल जन समूह के साथ पैदल भगवान के दर्शन करने गया। पांच अभिगम सहित दर्शन वंदन किया। फिर भगवान के आई हुई समस्त परिषद को धर्मोपदेश दिया। उपदेश के अनंतर परिषद के चले जाने पर सुदर्शन श्रमणोपासक ने भगवान को वंदन नमस्कार कर काल सम्बन्धी प्रश्न पूछा।

काल– काल चार प्रकार के होते हैं -1. प्रमाण काल, 2. यथायुष्क निवृत्ति काल, 3. मरण काल, 4. अद्धाकाल।

2. प्रमाणकाल– 12 मुहूर्त से लेकर 18 मुहूर्त की रात्रि होती है, इतना ही दिन होता है। चार मुहूर्त की पोरिसी से लेकर साढ़े पांच मुहूर्त की पोरिसी होती है। बड़ा दिन और बड़ी पोरिसी आषाढ़ में होती है। छोटा दिन और छोटी पोरिसी पोष महीने में होती है। 1/122 मुहूर्त प्रमाण पोरिसी, क्रमशः घटती-बढ़ती है। आसोज और चैत्र में दिन रात 15-15 मुहूर्त के समान ही होते हैं उस समय 3 $\frac{3}{4}$ = पोने चार मुहूर्त की पोरिसी होती है। यह सब प्रमाण काल है।

2. यथायुष्क निवृत्तिकाल– चारों गति में जो उम्र मिली है उस काल का व्यतीत होना यथायुष्क निवृत्ति काल है।

3. मरण काल– आयुष्य पूर्ण होने पर जो शरीर और जीव के अलग होने रूप मृत्यु होती है वह मरण काल है।

4. अद्धाकाल– समय से लेकर आवलिका मुहूर्त यावत् सागरोपम रूप जो काल विभाजन है वह अद्धाकाल है।

पल्योपम सागरोपम से आयुष्य का स्थितियों का माप होता है। पल्योपम सागरोपम रूप काल कैसे क्षय होता है व्यतीत होता है? इस प्रश्न के उत्तर में सुदर्शन श्रावक को भगवान ने उसी के पूर्व भव का वर्णन सुनाया।

सुदर्शन का पूर्वभव-महाबल चारित्र-

हस्तिनापुर नगर ''बल'' नामक राजा राज्य करता था। एक बार उसकी राणी प्रभावती ने सिंह प्रवेश का स्वप्न देखा। जिसके फल स्वरूप यथासमय उसने एक पुण्यशाली बालक को जन्म दिया। राजा ने पुत्र का जन्म महोत्सव मनाया। तीसरे दिन बालक को सूर्य दर्शन कराया। छट्ठे दिन जागरण एवं ग्यारहवें दिन अशुचि निवृत्ति करण किया गया। बारहवें दिन उत्सव भोजन के साथ बालक का नामकरण किया गया। महाबल कुमार नाम रखा गया।

सुखपूर्वक उसका बाल्यकाल व्यतीत हुआ। साधिक आठ वर्ष का होने पर उसे कलाचार्य के पास अध्ययनार्थ भेजा गया। यौवन अवस्था में आठ कन्याओं के साथ उसका पाणिग्रहण कराया गया। पिता ने विविध प्रकार की सामग्री 8-8की संख्या में उसे प्रीतिदान रूप में दी। इस प्रकार वह महाबल कुमार मानुषिक सुख भोगते हुए काल व्यतीत करने लगा।

एक समय विमलनाथ अरिहंत के प्रपौत्र शिष्य धर्मघोष अणगार हस्तिनापुर नगर के बाहर उद्यान में पधारे। जमाली कुमार के समान संपूर्ण वर्णन यहां जानना यथा- धर्म श्रवण, आज्ञा प्राप्ति संवाद, एवं दीक्षा ग्रहण। चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। विविध तप अनुष्ठान करते हुए 12 वर्ष की दीक्षा पर्याय का पालन किया। एक महीने के संथारे से आयु पूर्ण कर महाबल मुनि पांचवे देवलोक में दस सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न हुआ। वहां सागरोपम की उम्र पूर्ण कर हे सुदर्शन ! तूने यहां वाणिज्य ग्राम में जन्म लिया यावत् स्थविर भगवंतों के पास धर्म का बोध प्राप्त कर श्रमणोपासक बना है।

इस प्रकार अन्य जीवों के भी पल्योपम सागरोपम की उम्र समाप्त होती है। भगवान से प्रश्न के समाधान में अपने ही पूर्वभव का घटना चक्र सुनकर चिंतन मनन करते हुए उसे जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ। उसकी श्रद्धा वैराग्य संवेग दुगुणा वृद्धिंगत हुआ, आनंदाश्रुओं से नेत्र भर गये और वहीं संयम स्वीकार किया। सुदर्शन श्रमणोपासक से सुदर्शन श्रमण बन गया। चौदह पूर्वों का अध्ययन किया बारह वर्ष की दीक्षा पर्याय का पालन कर सम्पूर्ण कर्मों का क्षय किया एवं सिद्ध बुद्ध मुक्त हो गया।

इस प्रकरण में रानी के महल का, शय्या का, सिंह स्वप्न का, राजा के पास जाकर कहने का, रात्रि व्यतीत करने का, स्वप्न पाठकों का, पुत्र जन्म महोत्सव का, खुश खबर देने वाली दासियों के सन्मान का, क्रमशः वय वृद्धि का, प्रीतिदान की पच्चासों प्रकार की वस्तुओं का, विस्तृत वर्णन मूल पाठ में दर्शाया गया है। जिज्ञासु पाठक प्रस्तुत मूल सूत्र का अध्ययन करे।

दीक्षा आदि का विस्तृत वर्णन यहां नहीं किया है उसके लिये जमाली के प्रकरण का निर्देश कर दिया गया है, जहां कि विस्तार से वर्णन है।

बारहवां उद्देशक–

ऋषिभद्र पुत्र– आलंभिका नामक नगरी में ऋषिभद्र प्रमुख अनेक श्रमणोपासक थे। एक बार कहीं कुछ श्रावक इकट्ठे हुए वार्तालाप कर रहे थे। प्रसंगोपात वहां देव की उम्र सम्बन्धी वार्ता चली। तब ऋषिभद्र श्रावक ने बताया कि जघन्य दस हजार वर्ष से समयाधिक वृद्धि होते हुए उत्कृष्ट 33 सागरोपम तक की उम्र देवों की होती है। कइयों को इस पर श्रद्धा नहीं हुई।

कुछ समय बाद विचरण करते हुए श्रमण भगवान महावीर स्वामी आलंभिका नगरी पधारे। उक्त श्रमणोपासक एवं अन्य नगरी के लोग भगवान की सेवा में पहुंचे। उपदेश सुनकर परिषद विसर्जित हो गई। वंदन नमस्कार कर उन श्रमणोपासकों ने देव की स्थिति का प्रश्न पूर्व हकीकत के साथ रखा। भगवान ने समाधान किया कि ऋषिभद्र पुत्र का कथन सत्य है। हे आर्यो ! मैं भी ऐसे ही कथन करता हूं। तब उन श्रमणोपासकों ने श्रद्धा की एवं ऋषिभद्र के समीप जाकर वंदन नमस्कार अर्थात् प्रणाम अभिवादन करके अपनी भूल की विनय पूर्वक क्षमा याचना की। किसी भी बात को स्वीकार नहीं करना, अश्रद्धा करना या उसे गलत कहना यह एक प्रकार की आशातना ही कही जाती है। इसीलिये गौतम स्वामी भी आनंद श्रावक के पास गये थे और क्षमायाचना की थी। यहां भी ऐसा व्यवहार श्रमणोपासकों का परस्पर वर्णित है। फिर उन श्रावकों ने अपनी अन्य जिज्ञासाओं का समाधान किया एवं प्रभु को वंदन नमस्कार करके चले गये।

श्रावको के जाने के बाद गौतम स्वामी के प्रश्न करने पर भगवान ने फरमाया कि ऋषिभद्र पुत्र दीक्षा ग्रहण नहीं करेगा किन्तु अनेक वर्ष श्रावक पर्याय का पालन कर एक महिन के संथारे से काल करके पहले देवलोक में उत्पन्न होगा। वहां अरूणाभ विमान में चार पल्योपम की उम्र पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्र से मोक्ष प्राप्त करेगा।

पुद्गल परिव्राजक– आलंभिका नगरी के ''शंखवन'' नामक उद्यान के समीप में ''पुद्गल'' नामक परिव्राजक रहता था। चारों वेद सांगोपांग ज्ञाता था एवं ब्राह्मण मत के सिद्धान्तों में पारंगत था। वह बेले-बेले पारणा करते हुए आतापना लेता था। प्रकृतिभद्र, विनीत एवं समभावों में परिणमन करते हुए उसे विभंग नामक अज्ञान उत्पन्न हुआ। जिससे वह पांचवें देवलोक तक देवों को एवं उनकी उम्र को देखने लगा। जिससे वह यह मानने लगा कि इतना ही लोक है, उसके बाद देव भी नहीं है और देवों की उम्र भी नहीं है। अर्थात् उत्कृष्ट दस सागरोपम की उम्र के देव हो सकते हैं। उसके बाद कोई स्थिति नहीं होती है।

शिव राजर्षि की तरह पुद्गल परिव्राजक ने भी नगर में अपने ज्ञान का एवं मंतव्य का प्रचार किया। लोगों में चर्चा का विषय बना। संयोग वश भगवान का वहां आलंभिका नगरी में पदार्पण हुआ। गौतम स्वामी ने गोचरी में चालू वार्त्ता सुनी। भगवान से निवेदन किया। भगवान ने परिषद के समक्ष स्पष्टीकरण किया। भगवान के वाक्य भी नगरी में प्रचारित हुए कि ''अणुत्तर तक देव हैं, देवलोक है, उम्र भी देवों में 33 सागर तक है,'' इत्यादि।

लोगों से यह वार्त्ता पुद्गल परिव्राजक तक भी पहुंची। वह शंकित कांक्षित होकर चिंतन में उलझ गया, उसका भी विभंग अज्ञान गिर गया। शिवराजर्षि की तरह वह भी भगवान की पर्युपासना करने गया। उपदेश सुना, संयम ग्रहण किया, उसी भव में सर्व कर्म क्षय कर सिद्ध गति को प्राप्त किया।

देवलोकों में रूपी द्रव्य एवं वर्णादि बोल होते हैं, इस कारण विभंग ज्ञान का विषय हो जाता है।

विशेष– बेले बेले पारणा करने और आतापना लेने से विविध लब्धियां उत्पन्न होती है। विभंग अज्ञान भी परोक्ष ज्ञान होने से इसका भी लब्धियों में समावेश होता है। वानप्रस्थ आश्रम के तापस कंदमूल आदि को स्वयं पकाकर खाते हैं और सन्यासाश्रम के परिव्राजक भिक्षा से आजीविका करते हैं। शिवराजर्षि ने तापसी दीक्षा धारण की थी और पुद्‌गल परिव्राजक ने संन्यासी दीक्षी ग्रहण की थी।

बारहवां शतक–

शंख पुष्कली श्रमणोपासक–

श्रावस्ती नगरी में शंख प्रमुख बहुत से श्रमणोपासक रहते थे। शंख श्रावक के उत्पला नामक भार्या थी। वह भी जीवाजीव की ज्ञाता यावत् योग्य गुणों से युक्त श्रमणोपासिका थी। पुष्कली नामक श्रमणोपासक भी उसी नगरी में रहता था।

एक बार वहां श्रमण भगवान महावीर स्वामी का पधारना हुआ। श्रावस्ती नगरी से अनेक जन समूह भगवान के दर्शन सेवा के लिये कोष्टक उद्यान की तरफ चले। शंख पुष्कली प्रमुख श्रावक भी विशाल समूह के साथ पैदल चले। भगवान की सेवा में परिषद् इकट्ठी हुई। भगवान ने धर्मोपदेश दिया। उपदेश सुनकर सभा विसर्जित हो गई।

पक्खी पौषध– शंख प्रमुख श्रावकों ने वंदन नमस्कार कर प्रश्न पूछे, समाधान ग्रहण किये एवं वंदन नमस्कार कर घर जाने के लिये रवाना हुए। मार्ग में शंख श्रमणोपासक ने कहा कि आज पक्खी है हम लोग खाते पीते सामूहिक पौषध करें। अन्य श्रावकों ने उनका कथन स्वीकार किया। स्थान एवं भोजन तैयार करवाने की जिम्मेदारी के लिये भी निर्णय हुआ। सभी अपने घर जाकर आये और एक स्थान पर इकट्ठे हुए। पौषध व्रत (दयाव्रत) ग्रहण किया। भोजन का समय निकट आने लगा। किन्तु ''शंख'' श्रमणोपासक नहीं आये थे। इसका कारण ऐसा हुआ कि ज्यों ही निर्णय कर सभी श्रावक अपने-अपने घरों की दिशा में चले। घर पहुंचने के पूर्व ही शंख जी के विचार परिवर्तित हो गये। उपवास युक्त पौषध करने का दृढ़ निर्णय हो गया। घर आकर उत्पला भार्या को पूछ कर पौषधशाला में उपवास युक्त पौषध अंगीकार कर लिया।

श्रावक श्राविका का वंदन व्यवहार– श्रावकों ने शंख जी को बुलाने के लिये जाने का निर्णय किया। तब पुष्कली श्रावक शंख जी के घर गये। उत्पला श्रमणोपासिका ने पुष्कली श्रावक को घर में आते हुए देखा, देखकर आसन से उठी। सात-आठ कदम सामने जाकर वंदन नमस्कार किया। आने का कारण पूछा। पुष्कली श्रावक ने कहा कि शंख श्रमणोपासक कहां है? पौषधशाला की तरफ संकेत करते हुए बताया कि उन्होंने पौषध किया है। पुष्कली श्रावक पौषध शाला में आये। इरियावहि का प्रतिक्रमण किया फिर चलने के लिये निवेदन किया।

खाते-पीते पौषध– शंख श्रमणोपासक ने स्पष्टीकरण किया कि मैंने उपवास युक्त पौषध ग्रहण कर लिया है। आप लोग अब अपनी इच्छानुसार खाते पीते पौषध करें। पुष्कली श्रमणोपासक लौटकर आ गये एवं बता दिया कि शंख जी नहीं आयेंगे। फिर उन श्रावकों ने खाते पीते हुए पौषध किया।

श्रावकों में व्यंग व्यवहार एवं प्रभु द्वारा संबोधन–

दूसरे दिन सभी श्रावक भगवान के समवसरण में पहुंचे। शंख जी पौषध (उपवास) का पारणा किये बिना ही वस्त्र पलट कर भगवान के दर्शन करने चले। परिषद इकट्ठी हुई। धर्मोपदेश हुआ। सभा विसर्जित हुई। वे श्रमणोपासक शंख जी के पास

पहुंच कर उन्हें उपालंभ देने लगे कि आपने ही स्वयं प्रस्ताव रखा (आदेश दिया) और खुद ने उपवास युक्त पौषध कर लिया। इस तरह उपालंभ व्यंग हीलना, खिंसना वचन चलने लगे। तब भगवान ने श्रावकों को संबोधन किया, हे आर्यों! आप लोग इस प्रकार शंख श्रमणोपासक की हीलना आदि न करें, शंख श्रमणोपासक ने सुंदर धर्म जागरणा की है। यह दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी श्रमणोपासक है।

जागरणा– श्रमणोपासकों का वातावरण शांत हो गया। गौतम स्वामी ने प्रश्न किया भंते! जागरणा कितने प्रकार की है।

धर्म जागरण के 4 भेद–

	आचार धर्म					क्रिया धर्म		दया धर्म	स्वभाव धर्म
	ज्ञानचार	दर्शनाचार	चारित्राचार	तपाचार	वीर्याचार	करण सत्तरी 70 भेद	चरण सत्तरी 70 भेद		
1.	कालाचार	निशंकित	ईर्या समिति	अनशन	धर्म में बल	4 पिंड विशुद्धि	5 महाव्रत	स्वदया	जीव स्वभाव
2.	विनयाचार	निःकांक्षित	भाषा समिति	उणोदरी	वीर्य न	5 समिति	10 यतिधर्म	परदया	धर्म अजीव
3.	बहुमानाचार	निर्विचिकित्सा	एषणा समिति	भिक्षाचरी	छिपावे	12 भावना	17 संयम	द्रव्यदया	स्वभाव धर्म
4.	उपधानाचार	अमूढ़ दृष्टि	आदानभंड निक्षेण समिति	रस परित्याग	पूर्वोक्त 36 आचार में	12 भिक्षु प्रतिमा	10 वैयावृत्य	भावदया	
5.	अनिह्नवाचार	उपबृंहण	उच्चार पासवण परिस्था. समिति	कायक्लेश	उद्यम करे शक्ति	5 इन्द्रिय निरोध	9 ब्रह्मचर्य वाड़	व्यवहार दया	
6.	व्यजनाचार	स्थिरीकरण	मन गुप्ति	प्रतिसंलीनता	अनुसार	25 प्रति लेखन	3 रत्न	निश्चय दया	
7.	अर्थाचार	वात्सल्य	वचन गुप्ति	प्रायश्चित	धर्म करे	3 गुप्ति	12 तप	स्वरूप दया	
8.	तदुभयाचार	प्रभावना	काय गुप्ति	विनय		4 अभिग्रह	4 कषाय निग्रह	अनुबंध दया	
9.				वैयावृत्य					
10.				स्वाध्याय					
11.				ध्यान					
12.				कायोत्सर्ग					

भगवान ने तीन प्रकार की जागरणा बताई- 1. अरिहंतों की, 2. साधुओं की, 3. श्रावकों की। इनके नाम क्रमशः 1. बुद्ध, 2. अबुद्ध, 3. सुदक्खु - सुदर्शन जागरणा है।

कषाय का फल– फिर श्रमणोपासक शंख के प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान महावीर ने फरमाया कि क्रोध, मान आदि के वशीभूत होकर जीव सात कर्म की प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश (इन सब) की वृद्धि करता है। अशाता वेदनीय का बारंबार बंध करता है एवं चतुर्गतिक संसार में परिभ्रमण करता है।

शंख श्रमणोपासक की गति– फिर उन श्रमणोपासकों ने शंख श्रमणोपासक से वंदन नमस्कार कर विनय पूर्वक

क्षमायाचना की। तदनंतर अपने-अपने घर गये। गौतम स्वामी ने शंख श्रमणोपासक के दीक्षा लेने सम्बन्धी प्रश्न किया। उत्तर में भगवान ने कहा कि वह दीक्षा नहीं लेगा। श्रमणोपासक पर्याय से देवलोक मे जायेगा एवं वहां से महाविदेह में जन्म लेकर संयम तप का आराधन कर सब दुखों का अंत करेगा।

शंख पुष्कली जी के पौषध पर चिंतन सार–

प्रस्तुत प्रकरण में श्रमण भगवान महावीर स्वामी एवं गौतम गणधर की जानकारी में उनके शासन के समस्त श्रमणोपासकों में प्रमुख शंख पुष्कली जी के पक्खी पर्व दिन के लिये पौषध का वर्णन है। यह सूत्र भी समस्त उपलब्ध आगमों में महत्वपूर्ण श्रद्धा केन्द्र का आगम है एवं सुधर्मा गणधर द्वारा रचित है।

यहां वर्णित श्रावकों के महीने में दो अष्टमी दो चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा यो 6-6प्रतिपूर्ण पौषध करने का व्रत धारण किया हुआ था। पक्खी पर्व अमावस पूनम को ही होती है और वर्त्तमान प्रणाली से चतुर्दशी की भी होती है। अतः उन श्रमणोपासकों के 6प्रतिपूर्ण पौषध का ही वह दिन था। उस दिन भगवान का प्रवचन सुनकर घर जाते समय शंख श्रमणोपासक ने खाते-पीते (आहार युक्त =बिना उपवास का) पौषध करने का प्रस्ताव रखा और जिसे पुष्कली आदि श्रावकों ने स्वीकार-समर्थन किया। तब एक जगह इकट्ठे होकर वहीं भोजन करते हुए पौषध करनेका निर्णय लिया गया। वह स्थान संभवतः पुष्कली जी की पौषधशाला का रखा। क्योंकि भोजन समय तक शंखजी के न आने पर वे ही स्वयं पौषध व्रत में बुलाने गये।

पुष्कली जी जब शंख जी को बुलाने उनकी पौषध शाला में पहुंचे तब उन्होंने पहले इरियावहि का कायोत्सर्ग किया, फिर वार्त्ता की। इससे उनका पौषध में जाना स्पष्ट होता है। फिर पुष्कली जी के लौट आने के बाद सब ने आहार किया।

इससे ये फलितार्थ निकलते हैं–

1. श्रावक के 11वें व्रत में उपवास बिना भी पौषध किया जा सकता है। 2. ऐसा पौषध भी प्रतिपूर्ण पौषध कहला सकता है (सावद्य त्याग की अपेक्षा), 3. पौषध पच्चक्खाण के बाद आहार किया जा सकता है। 4. पौषध पच्चक्खाण के बाद आवश्यक होने पर यतना पूर्वक गमनागमन किया जा सकता है। उसके लिये पहले से मर्यादा करने की आवश्यकता नहीं होती है। 5. व्याख्यान सुनने के बाद अपने अपने घर जाकर आवश्यक निर्देश कर फिर एक जगह एकत्रित होने में एक प्रहर से अधिक समय भी लग सकता है। 6. खाते पीते सामूहिक पौषध की वार्त्ता न होती तो वे श्रावक उस दिन पक्खी होने के कारण घर जाकर पौषध तो करते ही किन्तु कैसा पौषध करे और कब करते यह निर्णय उस समय तक नहीं लिया गया होगा। अतः घर जाकर कोई खाते पीते पौषध भी करते कोई उपवास युक्त भी एवं कोई घर जाकर शीघ्र पौषध करते और कोई कुछ देर से भी करते। अतः प्रतिपूर्ण पौषध व्रत धारी उन श्रावकों के भी आठ प्रहर के समय का या चौविहार त्याग का अर्थात् आहार नहीं करने का भी आग्रह नहीं था।

इन सब फलितार्थों में स्वयं भगवती सूत्र, 6प्रतिपूर्ण पौषध व्रत धारी प्रमुख श्रावक एवं भगवान महावीर स्वामी साक्षी रूप एवं प्रमाण रूप है। अतः अपने व्यक्तिगत एवं परंपराओं के आग्रह में किसी के द्वारा इन सूत्र फलितार्थों को इन्कार करना नासमझ एवं दुराग्रह है। अनैकांतिक व्यवहार वृत्ति वाले इस जिनशासन में अनागमिक एकांत आग्रह नहीं करने चाहिये।

दूसरा उद्देशक–

जयंती श्रमणोपासिका–

कौशाम्बी नामक नगरी में उदायन राजा राज्य करता था। उसकी माता मृगावती चेड़ा राजा की पुत्री थी और उसकी भुआ जयंति श्रमणोपासिका थी। वह भगवान के साधुओं की प्रथम शय्यातरी मकान देने वाली थी। उदायन राजा के पिता शतानीक और दादा सहस्त्रनीक थे। मृगावती भी गुण सम्पन्न श्रमणोपासिका थी।

एक बार भगवान महावीर स्वामी विचरण करते हुए कौशाम्बी नगरी में पधारे। उदायन राजा कूणिक राजा की तरह भगवान के दर्शन करने गया। मृगावती और जयंति श्रमणोपासिका भी साथ में दर्शन करने गई। भगवान ने उदायन, मृगावती और जयंति प्रमुख उपस्थित सारी परिषद को धर्मोपदेश दिया। परिषद विसर्जित हुई, उदायन राजा एवं मृगावती देवी भी चली गई।

पन्द्रह प्रश्नोत्तर- जयंति श्रमणोपासिका ने वंदन नमस्कार कर भगवान से अनेक प्रश्न किये। उन प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार है-

1-4. अठारह पापों के सेवन से जीव भारी होता है, संसार बढ़ाता है, कर्मों की स्थिति बढ़ाता है और संसार सागर में परिभ्रमण करता है।

अठारह पापों का त्याग करने से जीव हलका होता है, संसार घटाता है, कर्मों की स्थिति घटाता है और संसार सागर से तिरता है।

5. भवी जीव स्वभाव से अनादि से होते हैं अर्थात् नये परिणमन होकर कोई भवी नहीं बनते हैं।

6-7. सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे। स्वभाव की अपेक्षा ही यह कथन है। अतः भव सिद्धिक जीवों से यह संसार कभी खाली नहीं होगा। इसका कारण यह है कि उन जीवों की संख्या अति विशाल है। यथा- आकाश की एक श्रेणी में अनंत प्रदेश हैं। उसे कोई निकाले तो वह एक श्रेणी भी खाली नहीं हो सकती तो आकाश की अनंत श्रेणियों के खाली होने की बात ही नहीं होती। उसी तरह निगोद में अनंतानंत जीव है उनमें से एक निगोद के जितने भवी जीव भी कभी खाली नहीं होंगे तो यह संसार और जीवों का मोक्ष जाना ये दोनों आज तक अनादि से चले हैं और चलते रहेंगे। जिस तरह भविष्य काल भी अनादि से चल रहा है और अनंत काल तक रहेगा। वैसे ही जीव भी सिद्ध होते रहेंगे फिर भी संसार चलता रहेगा।

8. जीव सोते हुए भी अच्छे और जागते हुए भी। जो धर्मी जीव है वे जागते हुए अच्छे हैं क्योंकि धर्म की वृद्धि करेंगे और जो पापी जीव हैं वे सोते हुए ही अच्छे हैं क्योंकि पाप कृत्य कम होंगे।

9. इसी प्रकार जीव कमजोर भी अच्छे और बलवान भी अच्छे।

10. आलसी भी अच्छे, उद्यमी भी अच्छे।

11-15. पांच इन्द्रियों के शब्द रूप, गंध, रस स्पर्श आदि विषयों में आसक्त होने वाले जीव सात कर्मों की प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों की वृद्धि करते हैं। अशाता वेदनीय का बारंबार बंध करते हैं और चतुर्गतिक संसार में परिभ्रमण करते हैं। आयुष्य कर्म तो जीवन में एक बार ही बंधता है। अतः सात कर्म कहे गये हैं।

जयंति श्रमणोपासिका ने संयम अंगीकार किया एवं सम्पूर्ण कर्मों का अंत करके उसी भव से सिद्ध हुई।

विशेष- जयंति श्रमणोपासिका के पति एवं पुत्रों का कथन नहीं है। दीक्षा भी उसने समवसरण में उसी समय ले ली थी। अतः सम्पन्न एवं स्वतंत्र जीवन वाली श्राविका थी और उसके मकान सदा साधु साध्वियों के ठहरने के उपयोग में आते थे। इसीलिये उसके परिचय में श्रमणों को मकान देने वाली बताया है।

तीसरा उद्देशक–

नरक पृथ्वियों का वर्णन जीवाभिगम सूत्र के समान है।

चौथा उद्देशक–

पुद्गल विभाग–

द्वि प्रदेशी के दो विभाग हो सकते हैं- परमाणु + परमाणु (1+1) = 1 विकल्प।

तीन प्रदेशी के दो एवं तीन विभाग हो सकते हैं- परमाणु + दो प्रदेशी (1+2) तीन ही परमाणु (1+1+1) भंग 2

चार प्रदेशी के दो-तीन चार विभाग हो सकते हैं = 1+3, 2+2, 1+1+2, 1+1+1+1 = भंग 4

पांच प्रदेशी के 2-3-4-5 विभाग एवं 6 भंग होते हैं=1+4, 2+3, 1+1+3, 1+2+2, 1+1+1+2, 1+1+1+1+1

छः प्रदेशी के 2-3-4-5-6विभाग एवं 10 भंग होते हैं। = 1+5, 2+4, 3+3, 1+1+4, 1+2+3, 2+2+2, 1+1+1+3, 1+1+2+2, 1+1+1+1+2, 1+1+1+1+1+1

इसी प्रकार जितने प्रदेशी हो उससे विभाग एक कम समझना और भंग संख्या भी उक्त विधि से समझ लेना चाहिये। भंग संख्या इस प्रकार है- सात प्रदेशी = 14 भंग। आठ प्रदेशी = 21 भंग। नौ प्रदेशी = 28 भंग। दस प्रदेशी = 39 भंग।

संख्यात प्रदेशी के– द्वि संयोगी 11, तीन संयोगी 21, चार संयोगी 31, पांच संयोगी 41, छः संयोगी 51, सात संयोगी 61, आठ संयोगी 71, नौ संयोगी 81, दस संयोगी 91, संख्यात संयोगी का एक भंग। कुल = 460 भंग ।

असंख्याती प्रदेशी के– द्वि संयोगी 12, तीन संयोगी 23, चार संयोगी 34, पांच संयोगी 45, छः संयोगी 56, सात संयोगी 67, आठ संयोगी 78, नौ संयोगी 89, दस संयोगी 100, संख्यात संयोगी 12, असंख्यात संयोगी का एक। कुल = 517 भंग।

अनंत प्रदेशी के– द्वि संयोगी 13, तीन संयोगी 25, चार संयोगी 37, पांच संयोगी 49, छः संयोगी 61, सात संयोगी 73, आठ संयोगी 85, नौ संयोगी 97, दस संयोगी 109, संख्यात संयोगी 13, असंख्यात संयोगी 13, अनंत संयोगी का एक । कुल = 576भंग ।

यद्यपि संख्यात प्रदेशी के संख्याता, असंख्यात प्रदेशी के असंख्याता एवं अनंत प्रदेशी के अनंता भंग हो सकते हैं किन्तु वे कथन पद्धति में संभव नहीं है। अतः आगम में एक अपेक्षित कथन पद्धति कायम करके क्रमशः उक्त 460, 517, 576भंग ही कहे हैं। गांगेय अणगार का प्रश्नोत्तर रूप प्रवेशनक भंग में भी ऐसी ही पद्धति स्वीकार की गई है। अपेक्षित पद्धति से यहां इस प्रकार भंग बनते हैं-

संख्यात प्रदेशी के भंग का तरीका– द्वि संयोगी = 1+संख्यात, 2+संख्यात, 3+सं., 4+सं, 5+सं. 6+सं, 7+सं., 8+सं., 9+सं, 10+सं, सं.+सं., = 11 भंग

तीन संयोगी = 1+1+सं., 1+2+सं., 1+3+सं., 1+4+सं., 1+5+सं., 1+6+सं., 1+7+सं., 1+8+सं., 1+9+सं., 1+10+सं.,1+सं.+सं., 2+सं.+सं., 3+ सं.+सं., 4+सं.+सं, 5+सं.+सं., 6+सं.+सं., 7+सं.+सं., 8+सं.+सं.,

9+सं.+सं., 10+सं.+सं., सं.+सं.+सं. = 21 भंग

इस विधि से संख्यात असंख्यात अनंत प्रदेशी के दस संयोगी तक के भंग बनाना चाहिये।

असंख्यात प्रदेशी में संख्यात संयोगी 12 भंग– संख्याता परमाणु + एक असंख्य प्रदेशी, संख्याता द्वि प्रदेशी + एक असंख्य प्रदेशी, इसी प्रकार तीन प्रदेशी आदि संख्यात खंड होंगे और एक असंख्य प्रदेशी का। यथा- 4 प्रदेशी सं.+1 असं., 5 प्रदेशी सं. + 1 असं. , 6 प्रदेशी सं. + 1 असं., 7 प्रदेशी सं. + 1 असं., 8 प्रदेशी सं. + 1 असं, 9 प्रदेश सं. + 1 असं., 10 प्रदेश सं. + 1 असं. संख्याता प्रदेशी संख्यात + 1 असं., संख्याता ही खंड असंख्यात प्रदेशी के (सं. + असं.) + ये 12 भंग हुए।

अनंत प्रदेशी के 13-13 भंग– 1 संख्याता परमाणु + एक अनंत प्रदेशी यावत् 10, संख्याता दस प्रदेशी + एक अनंत प्रदेशी 11, संख्याता संख्यात प्रदेशी + एक अनंत प्रदेशी 12. संख्याता असंख्या प्रदेशी + एक अनंत प्रदेशी, 13. संख्याता ही अनंत प्रदेशी। इसी प्रकार असंख्य के साथ भी ये ही 13 भंग बनते हैं।

एक भंग– संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी और अनंत प्रदेशी का जो अंतिम एक-एक भंग कहा है उसमें सभी परमाणु हो जाते हैं अर्थात् संख्यात परमाणु, असंख्यात परमाणु और अनंत परमाणु।

विशेष– 2-2-5, 2-2-6, 1-2-2-5 ये तीन भंग मूल पाठ में नहीं उसका कारण कुछ भी वहां पर स्पष्ट नहीं किया गया है। व्याख्या में भी कोई विचारणा नहीं दी गई है। किन्तु मूल में नहीं है इसीलिये ''शून्य है'' ऐसा कथन कर दिया है।

वास्तव में यहां शून्य होने का कोई प्रसंग ही नहीं है अतः ऐसा कहना असंगत प्रतीत होता है। क्योंकि जब आठ प्रदेशी के तीन खंड 2-2-4 हो सकते हैं तो नौ प्रदेशी में 2-2-5 यों तीन खंड होने में कोई बाधकता क्यों होती है। इसी प्रकार दस प्रदेशी के तीन खंड 2-2-6एवं चार खंड 1-2-2-5 इस प्रकार पुद्गल का विभाजन होने में भी कोई सैद्धान्तिक बाधा नहीं आती है। क्योंकि सिद्धान्त में 2-2-3, 1-2-3, 2-2-4, 3-3-3, 3-3-4 ये सभी भंग बनाये गये हैं तब उक्त तीनों भंगों का निषेध कैसे किया जा सकता है और उसके निषेध का कोई कारण भी नहीं है।

अतः निष्कर्ष यह है कि उक्त तीन भंग जो मूल पाठ में नहीं है वे कभी भी लिपि प्रमाद से छूट गये हैं ऐसा स्वीकार करना चाहिये। ऐसा मानने पर नौ प्रदेशी 28+1 = 29 भंग होंगे एवं दस प्रदेशी के 39+2 =41 भंग होंगे। ऐसा मानना ही उपयुक्त एवं संगत प्रतीत होता है। भंगों को अकारण शून्य कह देना, उसका हेतु नहीं समझा सकना ही यह सिद्ध करता है कि लिपि दोष से ये तीन भंग मूल पाठ में कभी भी छूट गये हैं।

पुद्गल परिवर्तन (परावर्त्तन)–

1. एक उत्सर्पिणी एक अपसर्पिणी मिलकर एक चक्र होता है। ऐसे अनंतकाल चक्र होने से एक पुद्गल परावर्त्तन काल होता है। उन अनंत कालचक्र का माप सात प्रकार से होता है जिसके कारण पुद्गल परावर्त्तन भी सात प्रकार के कहे गये हैं। 1. औदारिक पुद्गल परावर्त्तन, 2. वैक्रिय, 3. तैजस, 4. कार्मण, 5. मन, 6. वचन. 7. श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्तन।

2. इन सात वर्गणा रूप में परिवर्तित हुए लोक के सम्पूर्ण पुद्गल एक जीव के द्वारा उस रूप में ग्रहण किये जाय उसमें जितना समय लगे वह उसका पुद्गल परावर्त्तन काल होता है। सब से छोटा पुद्गल परावर्त्तन काल ''कार्मण'' का है क्योंकि प्रत्येक भव में प्रति समय में कार्मण के पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं। उससे तैजस पुद्गल परावर्त्तन कुछ बड़ा होता है क्योंकि चार

गति में तो होता ही है किन्तु इसके पुद्गल निरंतर ग्रहण नहीं किये जाते हैं। इससे औदारिक पुद्गल परावर्त्तन बड़ा होता है क्योंकि दो गति में नहीं होता है। दस दंडक में ही होता है। उससे श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्तन बड़ा होता है क्योंकि अपर्याप्त मरने वाले कई जीव श्वासोश्वास नहीं लेते एवं देवों में बहुत अल्प श्वासोश्वास होते हैं अतः औदारिक पुद्गल परावर्त्तन से श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्तन होने में समय अधिक लगता है। इससे मन पुद्गल परावर्त्तन, वचन पुद्गल परावर्तन, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्तन क्रमशः अधिकाधिक समय में निष्पन्न होते हैं। इस प्रकार सबसे छोटा कार्मण पुद्गल परावर्त्तन है और सबसे बड़ा वैक्रिय पुद्गल परावर्त्तन होता है।

3. संख्या की अपेक्षा वैक्रिय पुद्गल परावर्त्तन अल्प होते हैं और क्रमशः वचन, मन, श्वासोश्वास, औदारिक, तैजस एवं कार्मण पुद्गल परावर्त्तन अनंत गुणे अधिक है।

4. चौबीस दंडक के एक एक जीव ने भूतकाल में सातों पुद्गल परावर्त्तन अनंत किये हैं भविष्य में कोई तो नहीं करेगा और कोई करेगा तो 1-2-3 उत्कृष्ट अनंत (एगुत्तरियं) करेगा।

5. चौबीस दंडक के अनेक जीवों ने भूतकाल में अनंत किये और भविष्य में भी अनंत करेंगे।

6. चौबीस दंडक के एक-एक जीव ने प्रत्येक दंडक में ये सातों पुद्गल परावर्त्तन अनंत किये हैं और भविष्य में कोई तो नहीं करेगा और कोई करेगा तो एगुत्तरियं। विशेष यह है कि नारकी देवता में प्रत्येक दंडक के जीव ने औदारिक पुद्गल भूत काल में भी नहीं और भविष्य में भी नहीं करेगा। ऐसे ही 5 दंडक (स्थावर) में वचन पुद्गल, 8दंडक (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय) में मन पुद्गल और 7 दंडक (चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय) में वैक्रिय पुद्गल परावर्त्तन नहीं किये, नहीं करेंगे।

7. चौबीस दंडक के अनेक जीवों ने 24 दंडक में सातों पुद्गल परावर्त्तन अनंत किये हैं और अनंत करेंगे। विशेष यह है कि 14 दंडक में औदारिक, 5 दंडक में वचन, 7 दंडक में वैक्रिय और 8दंडक में मन पुद्गल परावर्त्तन जीवों ने नहीं किये, नहीं करेंगे।

8. असंख्य सूक्ष्म समय से एक आवलिका होती है यावत् 84 लाख शीर्ष प्रहेलिकांग की एक शीर्ष प्रहेलिका। उसके आगे पल्य में बालाग्र भरने की उपमा से काल का माप होता है, वह है पल्योपम सागरोपम। विस्तृत वर्णन के लिये देखें अनुयोग द्वार सूत्र सारांश दस क्रोड़ा क्रोड़ पल्योपम का एक सागरोपम होता है। ऐसे 4 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का अवसर्पिणी का पहला आरा, 3 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का दूसरा आरा और 2 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का तीसरा आरा होता है। चौथा पांचवां छट्ठा आरा मिलकर 1 क्रोड़ा क्रोड़ सागर का होता है। इस प्रकार 10 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम की एक अवसर्पिणी और 10 कोडा कोड सागरोपम की एक उत्सर्पिणी होती है।

9. जीवों के संसार भ्रमण का काल, कायस्थिति आदि वैक्रिय पुद्गल परावर्त्तन की अपेक्षा समझना चाहिये। अन्य 6 पुद्गल परावर्त्तन केवल ज्ञेय मात्र है।

पांचवां उद्देशक-

रूपी अरूपी-

1. चौस्पर्शी रूपी- 18 पाप, 8 कर्म, कार्मण शरीर, मन, वचन योग, सूक्ष्म पुद्गल स्कंध- 30 बोल में वर्णादि 16 बोल पाये जाते हैं।

चौस्पर्शीरूपी 30 भेद	आठ स्पर्शीरूपी 15 भेद	अरूपी 61 भेद
18 पाप	6 द्रव्य लेश्या	18 पाप से निवृत्ति
8 कर्म	4 शरीर (औदा., वैक्रिय, आहारक, तैजस)	12 उपयोग (5 ज्ञान, 3 अज्ञान, 4 दर्शन)
1 कार्मण शरीर	1 घनोदधि	6 भाव लेश्या
2 योग (मन, वचन)	1 घनवाय	5 द्रव्य (धमास्ति-आदि, पुद्‌गल को छोड़कर)
1 सूक्ष्म पुद्‌गलास्तिकाय का स्कंध	1 तनवाय	4 बुद्धि (औत्पातिकी आदि)
30 इनमें 5 वर्ण 2 गंध 5 रस	1 काययोग	4 अवग्रहआदि मतिज्ञान के भेद
4 स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष)	1 बादर पुद्‌गलास्तिकाय का स्कंध 15	3 दृष्टि
नोट-वचन योग, भाषा 4 स्पर्शी शब्द आठ स्पर्शी होता है।	इसके अलावा आठ स्पर्शीरूपी में 8 पृथ्वी, द्वीप, समुद्र, 12 देव., 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर ये 36 मिलाने से 51 होते हैं।	5 शक्ति (उत्थान कर्म आदि) 4 संज्ञा इनमें वर्णादि नहीं होते 61 अगुरुलघु एक भांगा होता है।

2. अष्टस्पर्शी रूपी अष्ट स्पर्शी- 6 द्रव्य लेश्या, 4 शरीर, काय योग, बादर स्कंध, घनवाय, तनुवाय, घनोदधि, = 15 बोल में वर्णादि 20 बोल पाये जाते हैं।

3. अरूपी पदार्थ- 18पाप त्याग, 12 उपयोग, 6भाव लेश्या, 5 द्रव्य, 4 बुद्धि, 4 अवग्रह आदि, 3 दृष्टि, 5 जीव की शक्ति उत्थानादि, 4 संज्ञा = 61 बोल अरूपी है इनमें वर्णादि 20 में से एक भी नहीं होता है। इनमें ''अगुरूलघु'' यह एक गुण पाया जाता है।

4. क्रोध के पर्यायवाची दस शब्द- क्रोध, कोप, रोष, दोष, अक्षमा, संज्वलन, कलह, चाडिक्य, भंडण, विवाद।

5. मान के पर्यायवाची 12 शब्द- मान, मद, दर्प, स्तंभ, गर्व (घमण्ड), आत्मोत्कर्ष, परपरिवाद, उत्कर्ष, अपकर्ष, उन्नत, उन्नाम, दुर्न्नाम।

6. माया के पर्यायवाची 15 शब्द- माया, उपधि, निकृति, वलय, गहन, नूम, कलंक, कुरूप, जिह्माता, किल्विष, आदरणता, गूहनता, वंचनता, प्रतिकूंचनता, सातियोग (सादि)।

7. लोभ के पर्यायवाची 6. शब्द- लोभ, इच्छा, मूर्च्छा, कांक्षा, गृद्धि, तृष्णा, भिज्जा (मिथ्या), अभिध्या, आशंसना, प्रार्थना, लालपनता, कामाशा, भोगाशा, जीविताशा, मरणाशा, नंदिराग।

ये सभी शब्द एकार्थक है। अपेक्षा से इनके स्वतंत्र अर्थ भी होते हैं। उसकी जानकारी के लिये ब्यावर या सैलाना से प्रकाशित विवेचन युक्त भगवती सूत्र का अवलोकन करना चाहिये।

8. सब द्रव्यों में- 1. कोई वर्णादि 20 बोल वाले हैं। 2. कई वर्णादि 16बोल वाले हैं, 3. कई वर्णादि 5 बोल वाले हैं (1-1-1-2), 4. कई वर्णादि रहित अरूपी द्रव्य है। तीनों ही काल अरूपी है।

9. कर्मो से ही जीव विभिन्न रूपों को धारण करता है। कर्मों से ही सारा जीव जगत विविध रूपों को प्राप्त होता है। कर्म के बिना ये विविध रूप नहीं हो सकते।

छट्ठा उद्देशक-

पांच रंग के राहु के विमान होते हैं - 1. काला = काजल सरीखा, 2. नीला = कच्चे तुम्बे सरीखा हरा, 3. लाल = मजीठ के समान, 4. पीला = हल्दी के समान, 5. सफेद = राख के ढेर के समान।

राहु के ये पर्याय वाची नाम हैं- 1. श्रृंगारक, 2. जटिलक, 3. क्षत्रक, 4. खर, 5. दर्दुर, 6. मकर, 7. मत्स्य, 8. कच्छप, 9. कृष्ण सर्प।

राहू का विमान गमनागमन करते हुए चन्द्र को आवृत्त करता है तो लोक में चन्द्र का ग्रसित किया जाना कहा जाता है। जब एक किनारे से आवृत्त करते हुए निकलता है तब चन्द्र का कुक्षि भेद कहा जाता है। आवृत्त करके जब पुनः लौटता हुआ अनावृत्त करता है तब लोक में चन्द्र का वमन किया जाना कहा जाता हैं। जब ऊपर नीचे सब तरफ से आवृत्त कर देता हैं तब चन्द्र ग्रसित कर लिया गया कहा जाता हैं। वास्तव में ये आच्छादन मात्र हैं, ग्रसित करना नहीं।

राहू विमान दो प्रकार के हैं- 1. नित्यराहु, 2. पर्व राहु। नित्य राहु रोजाना चन्द्र का पंद्रहवां भाग आवृत्त करता है और फिर क्रमशः पंद्रहवां भाग अनावरित (प्रकट) करता है।

पर्व राहु कभी जघन्य छः महीनों से चन्द्र को आवरित करता है और कभी 42 महीनों से चन्द्र को आवरित करता है। सूर्य जघन्य 6महीनों से आवृत्त करता है। उत्कृष्ट 48वर्ष से ढांकता है। इससे चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण होते हैं। नित्य राहु से कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष की तिथियां बनती है। सौम्य होने से चन्द्र को शशी कहते हैं। समय काल की आदिभूत प्रारंभक होने से सूर्य को आदित्य कहते हैं।

2. नव विवाहित स्वस्थ पुरुष सोलह वर्ष परदेश गमन से लौट कर आया हो वह मनोज्ञ आवास शय्या संयोग एवं भोजन पान आदि को प्राप्त कर मनोज्ञ अनुरक्त यौवन प्राप्त भार्या के साथ मानुषिक पांच इन्द्रिय जन्य विषयों का सेवन करते हुए वेदोपशमन काल में जैसा साता सुख का अनुभव करता है उससे अनंत गुण विशिष्टतर व्यंतरों का कामसुख होता है उससे नवनिकाय का अनंत गुणा, उससे असुरकुमारों का अनंत गुणा एवं उससे चंद्र सूर्य का अनंत गुण विशिष्टतर कामभोग जन्य सुखानुभव होता है।

सातवां उद्देशक : लोक के सम्पूर्ण आकाश प्रदेशों पर प्रत्येक जीव ने जन्म मरण किये हैं, कोई भी प्रदेश खाली नहीं रखा है। यहां 100 बकरी रखने के बाड़े में 1000 बकरी भरने का और उससे बाड़ का मल मूत्र से स्पर्शित होने का दृष्टान्त समझना। उस बाड़े का कोई प्रदेश अस्पर्शित रह सकता है किन्तु जीव ने लोक का कोई प्रदेश जन्म मरण से रिक्त नहीं रखा है। क्योंकि अनादि काल से संसार और जीव दोनों हैं।

पांच स्थावर रूप में सर्वत्र जन्म मरण संभव है। शेष जिस क्षेत्र दंडक के जीवों के जन्म मरण की योग्यता है और जहां उस रूप में अनंत सम्भव है उनका ही कथन समझना चाहिये। यथा- नरक में मनुष्य रूप में नहीं होंगे तो अणुत्तर विमान में देव देवी रूप में भी अनंत भव नहीं होंगे, इत्यादि विवेक पूर्वक समझ लेना चाहिये।

यह जीव सब जीवों के माता-पिता आदि सम्बन्धी रूप में भी अनेक बार या अनंत बार जन्म हो चुका है। और सभी जीव इसके माता-पिता आदि बन चुके हैं।

इस प्रकार शत्रु मित्र आदि एवं दास नौकर आदि के रूप में भी अनेक बार या अनंत बार समझ लेना चाहिये।

आठवां उद्देशक-

1. कोई भी महर्द्धिक देव हाथी के रूप में, मणी के रूप में, वृक्ष के रूप में उत्पन्न हो सकता है। वहां तिर्यंच के भव में भी वह चर्चित पूजित हो सकता है। यहां से मनुष्य बन कर सिद्ध बुद्ध हो सकता है।

2. बंदर, कुर्कट, मेंढ़क भी मरकर नरक में उत्कृष्ट, स्थिति में उत्पन्न हो सकते हैं इसी प्रकार सिंह, व्याघ्र कौआ, गिद्ध, बिल्ली मयूरादि भी नरक में उत्पन्न हो सकते हैं। वहां से निकल कर संसार भ्रमण कर सकते हैं तथा मनुष्य बन कर मोक्ष भी जा सकते हैं।

नौवां उद्देशक-

पांच देव-

1. भव्य द्रव्य देव- मनुष्य और तिर्यंच अवस्था में रहे हुए जिसने देव का आयुष्य बांध लिया है वह ''भव्य द्रव्य देव'' कहा गया है।

2. नरदेव- छः खंड के अधिपति, 64 हजार मुकुट बंध राजाओं का स्वामी, 9. निधान 14 रत्न आदि ऋद्धि सम्पन्न चक्रवर्ती ''नरेदव'' मनुष्येन्द्र होता है।

3. धर्म देव- पांच महाव्रत, समिति, गुप्ति वंत, 18पाप के त्यागी, श्रमण-निर्ग्रन्थ '' धर्म देव'' कहे गये हैं।

4. देवाधि देव- सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, तीर्थंकर भगवान ''देवाधि देव'' कहे गये हैं।

5. भाव देव- देवगति का आयुष्य भोगने वाले चारों जाति के देव ''भावदेव'' कहे गये हैं।

1. भव्यद्रव्य देव में युगलिया की अपेक्षा 3 पल की उम्र होती है। जलचर की अपेक्षा 1000 योजन अवगाहना होती है। सर्वार्थ सिद्ध और युगलिया (86+1 = 87) आगति में नहीं है, अतः 371-87 = 284 होते हैं, क्योंकि युगलिया देव में जाते हैं मनुष्य तिर्यंच में नहीं आते। सर्वार्थ सिद्ध देव पुनः देव नहीं बनते, मोक्ष ही जाते हैं। गति में 99 देव के पर्याप्त अर्याप्त है। अंतर में देव की जघन्य उम्र 10000 वर्ष एवं आगे के भव में देवायु बांधने के पूर्व का समय अंतर्मुहूर्त लिया गया है। उत्कृष्ट वनस्पतिकाल जितना अंतर होता है।

2. प्रथम एवं अंतिम चक्रवर्ती की अपेक्षा अवगाहना आयु जघन्य उत्कृष्ट है। एक पहली नरक और 81 देवता से आकर जीव चक्रवर्ती बन सकता है। 15 परमाधामी 3 किल्विषी छोड़े हैं। चक्रवर्त्ती नरक में ही जाते हैं। दीक्षा लेने पर नरदेव नहीं रहते, धर्म देव हो जाते हैं। पहली नरक की उत्कृष्ट उम्र एवं चक्र रत्न उत्पन्न होने के पूर्व की मनुष्य की उम्र ये दोनों मिलकर जघन्य अंतर

106. पाँच देव (भ.श. 12 उ. 9) देवों के 5 प्रकार है इन्हें 10 द्वारों से समझाया है

1 नाम द्वार	भव्य द्रव्यदेव	नरदेव	धर्मदेव	देवाधिदेव	भावदेव
2 अर्थद्वार	अनंतर भव में देव होने वाले मनुष्य-तिर्यंच	छ खंड के स्वामी चक्रवर्ती	साधु साध्वी	तीर्थंकर देव	वर्तमान में 4 जाति के देव
3 आगति	284 (179 की लड़ी 7 नरक 98 देव) सर्वार्थ पर्या. छोड़कर)	82 (81 देव, 1 नरक)	275 (171 लड़ी तेउ वायु कम 99 देव पर्याप्ता, 5 नरक पर्या.	38 (35 वैमानिक देव 3 नारकी)	111 (101 सन्नी मनुष्य 5 सन्नी ति. पं., 5 असन्नी ति. पं. पर्याप्ता
4 गति	198 (99 देव के पर्याप्ता अपर्याप्ता)	14 (7 नरक के प. अ.पर्या.) दीक्षा ले तो मोक्ष या देवलोक	70 (35 वैमानिक पर्या. अपर्या.	मोक्ष	46 (15 कर्म भू. 5 सनी ति.पं., 3 पृथ्वी पानी वन. बादर बादर के प. अपर्या.
5 स्थिति	ज.अ.मु. उत्कृष्ट 3 पल्योपम	ज. 700 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज.अं.मु. उत्कृष्ट देशोन क्रोड़ पूर्व	ज. 72 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागर
6 वैक्रिय	लब्धिपने हो तो ज. 1-2-3 उत्कृष्ट संख्या. असंख्याता रूप की शक्ति है। बनाते नहीं	ज. 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता	भव्य द्रव्य देववत् जानना	शक्ति है, किन्तु विराधना जान नहीं करते	नरदेव वत् जानना
7 संचिट्ठणा	जं.अं.मु. उत्कृष्ट 3 पल्योपम	ज. 700 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 1 समय उत्कृष्ट देशोन क्रोड़ पूर्व	ज. 72 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागर
8 अवगाहना	ज.अं.असं. भाग उत्कृष्ट 1000 योजन	ज. 7 धनुष उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. प्रत्येक हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. 7 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. 1 हाथ उत्कृष्ट 7 हाथ (उत्पत्ति अपेक्षा से ज.अं. असंख्यातवाँ भाग)
9 अन्तर	ज. 10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त अधिक उत्कृष्ट अनंतकाल	ज. 1 सागर अधिक उत्कृष्ट देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन	ज. पल्योपम पृथक् उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्‌गल परावर्तन	अन्तर नहीं	अन्तर्मुहूर्त जघन्य उत्कृष्ट अनंतकाल
10 अल्प बहुत्व	4 असंख्यात गुणा	1 सबसे कम	3 संख्यात गुणा	2 संख्यात गुणा	5 असंख्यात गुणा

होता है।

3. दीक्षा लेकर अंतर्मुहूर्त में भी कोई काल कर सकता है। पांचवे आरे के अंत में अनेक (2 हाथ) की अवगाहना वाला साधु हो सकता है। छट्ठी सातवीं नरक, तेउ-वायु, और युगलिया (2+8+84 = 94) से आकर धर्म देव नहीं बनता है। धर्म देव वैमानिक में ही जाते हैं। वहां अनेक पल्योपम (2 पल) की कम से कम उम्र प्राप्त करते हैं। अतः अनेक पल साधिक जघन्य अंतर होता है। साधिक= मनुष्य भव में दीक्षा लेने के पहले की उम्र की अपेक्षा।

4. प्रथम अंतिम तीर्थंकर की अपेक्षा देवाधिदेव की जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना और स्थिति कही गई है। तीन नरक और 35 वैमानिक से आने वाले तीर्थंकर बन सकते हैं।

5. भाव देव में 101 मनुष्य, 5 सन्नी तिर्यंच 5 असन्नि तिर्यंच ये 111 आते हैं एवं 15 कर्म भूमि, 5 सन्नि तिर्यंच और पृथ्वी पानी वनस्पति इन 23 के पर्याप्त अपर्याप्त 46में जाते हैं। देव मर कर अंतर्मुहूर्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय में रह कर पुनः देव हो सकता है। इसलिये जघन्य अंतर्मुहूर्त का कहा गया है।

कायस्थिति- मनुष्य में जघन्य कायस्थिति एक समय है। शेष सभी जघन्य उत्कृष्ट कायस्थिति भव स्थिति के समान है।

अल्पबहुत्व- सबसे अल्प नर देव होते हैं जो उत्कृष्ट 370 हो सकते हैं। उससे देवाधिदेव संख्यात-गुणे, जो उत्कृष्ट 1830 होते हैं। उससे धर्म देव संख्यात गुणे, भव्यद्रव्य असंख्य गुणे, भावदेव असंख्यगुणे।

संख्याओं का स्पष्टीकरण- 284 = 179 का लड़ी (101 समुर्च्छिम मनुष्य + 30 अकर्म भूमि मनुष्य + 48 तिर्यंच) 7 नरक 98 देव यह भव्य द्रव्य देव की आगति है।

275 = 171 की लड़ी (तिर्यंच 70, तेउ वायु के 8 भेद कम है) 99 देव 5 नरक। यह धर्म देव की आगति है।

370 = 20 चक्रवर्ती जघन्य होते हैं उनके पीछे 11-11 जन्में हुए होते हैं ये कुल 20×11+20 = 240 हुए। उत्कृष्ट 150 चक्रवर्ती हो सकते हैं अर्थात् 30 बढे। 240+130 = 370 यह उत्कृष्ट नर देव चक्रवर्ती की संख्या है।

1830 = 20 तीर्थंकर जघन्य होते हैं। उनके पीछे 83-83 जन्में हुए होते हैं। ये कुल 20×83+20 = 1680 हुए। उत्कृष्ट तीर्थंकर 170 हो सकते हैं अर्थात् 150 बढे। 1680+150 = 1830 यह उत्कृष्ट देवाधिदेव की संख्या है।

दसवां उद्देशक-

1. आत्मा के विविध धर्मों- गुणों की अपेक्षा आठ प्रकार कहे गये हैं- 1. द्रव्य आत्मा (असंख्य प्रदेशात्मक आत्म द्रव्य), कषाय आत्मा, 3. योग आत्मा, 4. उपयोग आत्मा, 5. ज्ञान आत्मा, 6. दर्शन आत्मा, 7. चारित्र आत्मा, 8. वीर्य आत्मा (बाल वीर्य, पंडित वीर्य, बाल पंडित वीर्य)

	आत्मा	नियमा	भजना	अल्प बहुत्व
1	द्रव्य आत्मा	2-उपयोग, दर्शन	5-कषाय, योग, ज्ञान, चारित्र, वीर्य	6 विशेषाधिक
2	कषाय आत्मा	5-द्रव्य, योग, उपयोग, दर्शन, वीर्य	2-ज्ञान, चारित्र	3 अनन्तगुणा
3	योग आत्मा	5-द्रव्य, उपयोग, दर्शन, वीर्य	2-ज्ञान चारित्र, कषाय	4 विशेषाधिक
4	उपयोग आत्मा	2-दर्शन, द्रव्य	5-ऊपरवत्	6 विशेषाधिक
5	ज्ञान आत्मा	3-उपयोग, दर्शन, द्रव्य	4-कषाय, योग, चारित्र, वीर्य	2 अनंतगुणा
6	दर्शन आत्मा	2-उपयोग, द्रव्य	5 ऊपरवत्	6 विशेषाधिक
7	चारित्र आत्मा	5 (कषाय, योग छोड़कर)	2 कषाय, योग	1 अल्प
8	वीर्य आत्मा	3-द्रव्य, उपयोग, दर्शन	4-कषाय, योग, ज्ञान, चारित्र	5 विशेषाधिक

2. परस्पर आठ आत्मा–

3. विशेष ज्ञातव्य– सिद्धों में चार आत्मा है- द्रव्य, ज्ञान, दर्शन, उपयोग। मिथ्यादृष्टि में और अज्ञानी में ज्ञान एवं चारित्रात्मा नहीं है। शेष 6आत्मा है। सम्यग्दृष्टि एवं श्रावक में सात आत्मा है, चाारित्रात्मा नहीं है।

आठों आत्मा में आठों ही आत्मा हो सकती है चाहे भजना से हो या नियमा से। किसी में किसी का भी निषेध नहीं है। अर्थात् इन आठ आत्मा में कोई भी परस्पर विरोधी या प्रतिपक्षी नहीं है।

4. आत्मा में ज्ञान अज्ञान भजना से होते हैं किन्तु अज्ञान स्वयं तो आत्म स्वरूप है ही अर्थात् उसमें आत्मा नियमा होती है। 24 दंडक की आत्मा का ज्ञान अज्ञान जहां जो पावे वह इसी तरह समझना, दर्शन और आत्मा का आपस में नियमा सम्बन्ध है।

5. रत्नप्रभा पृथ्वी, देवलोक, सिद्ध शिला आदि- अपने स्वरूप की अपेक्षा ''आत्मा'' पर स्वरूप की अपेक्षा ''नो आत्मा'' एवं दोनों की विवक्षा में अवक्तव्य (आत्मा नो आत्मा) है। सभी में तीन विकल्प है।

6. परमाणु में उपरोक्त तीनों विकल्प है। द्वि प्रदेशी एवं तीन प्रदेशी आदि में अलग अलग प्रदेशों में विवक्षा हो सकने से

विकल्प	असंयोगी	द्विसंयोगी	तीन संयोगी	कुल
परमाणु	3	–	–	3
द्विप्रदेशी	3	3	–	6
तीन प्रदेशी	3	9	1	13
चार प्रदेशी	3	12	4	19
पाँच प्रदेशी	3	12	7	22
छः प्रदेशी	3	12	8	23

एक-अनेक आत्मा अनात्मा आदि हो जाने से द्वि संयोगी तीन संयोगी आदि भंग होते हैं यथा-

विशेष– तीन बोल में 26 भंग हो सकते हैं किन्तु यहां असंयोगी तीन भंग बहुवचन के नहीं होने से तीन भंग कम है अतः 23 कहे गये हैं। अतः भंगों की विधि वही पूर्व कथित ही समझें। छः प्रदेशी से अनंत प्रदेशी तक 23 भंग है।

तेरहवां शतक

पहला उद्देशक–

1. संख्यात योजन विस्तार वाले नरकावासों में उत्कृष्ट संख्यात जीव उत्पन्न होते हैं, उत्कृष्ट संख्यात जीव मरते हैं एवं जघन्य संख्यात जीव वहां शाश्वत मिलते हैं। असंख्य योजन विस्तार वाले नरकावासों में उत्कृष्ट असंख्यात उत्पन्न होते हैं। उत्कृष्ट

असंख्य जीव मरते हैं और जघन्य उत्कृष्ट शाश्वत असंख्य जीव वहां रहते हैं।

इसी प्रकार सात नरक भवनपति व्यंतर ज्योतिषी एवं आठवें देवलोक तक समझना। आगे के देवलोकों में संख्याता योजन के विस्तार वाले विमानों में और असंख्याता योजन के विस्तार वाले विमानों में उत्कृष्ट संख्याता ही जन्में एवं मरे। उत्कृष्ट भी असंख्य नहीं कहना। वहां रहने की अपेक्षा संख्यात योजन वालों में संख्यात और असंख्य योजन वालों में असंख्य जीव पाये जाते हैं।

इन जन्मने मरने एवं रहने वालों जीवों में निम्न 38बोलों की विचारणा की जाती है। लेश्या-1, पक्ष-2, संज्ञा-4, सन्नी-

(14) जीव	जन्म समय	विवरण (समुच्चय+38 बोलों की विचारणा)
पहली नरक	29	चक्षुदर्शन, दो वेद, 5 इन्द्रिय, 2 योग ये 10 कम हुए
दूसरी से छठी नरक	28	29 में से एक असन्नी कम हुआ
सातवीं नरक	25	28 में से तीन ज्ञान कम हुए
भवनपति व्यंतर	30	29 में दो वेद बढ़े, एक वेद कम हुआ
ज्योतिषी दो देवलोक	29	30 में से असन्नी एक कम हुआ
तीसरे से 9 ग्रैवेयक (देवलोक)	28	29 में से एक स्त्री वेद कम हुआ
पाँच अणुत्तर विमान	23	28 में से कृष्णपक्षी, अभवी, 3 अज्ञान ये 5 कम हुए
(15) जीव	मृत्यु समय	विवरण (उबटने च्यवने) (समुच्चय+38 बोलों की)
1 से 3 नरक	29	असन्नी, विभंग, चक्षु, 5 इन्द्रिय, 2 योग ये 10 कम
4 से 6 नरक	27	अवधिज्ञान, अवधि दर्शन ये 2 कम (29 में से)
7वीं नरक	25	27 में से मति श्रुत दो ज्ञान कम
भवनपति व्यंतर ज्योतिषी	28	विभंग, अवधिज्ञान, अवधि दर्शन, 5 इन्द्रिय, 2 योग, चक्षु ये 11 कम
पहला दूसरा देवलोक	30	28 में अवधिज्ञान, अवधि दर्शन बढ़े
3 देव-से नव ग्रैवेयक	29	ऊपर (पहली नरकवत्)
5 अणुत्तर विमान	25	29 में से कृष्णपक्षी, अभवी, 2 अज्ञान ये 4 कम हुए।

जीव	नियमा	भजना	नहीं
पहली नरक	38	9-असंज्ञी, मान, माया, लोभ, नो इन्द्रिय, अनन्तरोपपन्नकादि 4	2 वेद-स्त्री, पुरुष
2 से 7 नरक	38	8-असंज्ञी छोड़कर ऊपर में से (तीन कषाय, 4 अनन्तरोः)	3 (2 वेद, असंज्ञी)
भवनपति व्यंतर	39	9-असंज्ञी, क्रोध, मान, माया, नो इन्द्रिय, अनंतरोपपन्नकादि 4	1 नपुंसक
ज्योतिषी दो देवलोक	39	8-ऊपर भवनपति में से 1 असंज्ञी कम	2-असंज्ञी, 1 वेद
तीसरे देव से गैवेयक	38	8-दूसरे देवलोकवत्	3-असंज्ञी 2 वेद
चार अणुत्तर देव	33	8-दूसरे देवलोकवत्	8-कृष्णपक्षी, असंज्ञी अभवी, तीन अज्ञान, 2 वेद
सर्वार्थ सिद्ध विमान	32	8-दूसरे देवलोकवत्	8-ऊपर के एवं अचरम 1 ये 9

2, भवी-2, ज्ञान-3, अज्ञान-3, दर्शन- 3, वेद-3, कषाय-4, इन्द्रिय नो इन्द्रिय-6, योग-3, उपयोग-2 =38.

तीन वेद, असन्नि, 3 अज्ञान, कृष्ण पक्षी, अभवी ये कुल 9 नहीं होने वाले बोल है। इसमें से किसी बोल की कहीं नियमा कहीं भजना भी होती है।

शेष 24 बोल नरक देव में सर्वत्र नियमा ही होते हैं।

2. दस बोल– 1. अनंतरोत्पन्नक- आयु का प्रथम समय, 2. अनंतरावगाढ-क्षेत्र में पहुंचने का प्रथम समय, 3. अनंतराहारक- आहार लेने का प्रथम समय, 4. अनंतर पर्याप्त- पर्याप्त होने का प्रथम समय, 5. परंपरोत्पन्नक, 6.परंपरावगाढ, 7. परंपराहारक, 8. परंपर पर्याप्त, 9. चरम, 10. अचरम।

इनमें चार बोल प्रारम्भिक 1-2-3 समयों के हैं शेष 4 बोल लंबे काल के हैं। चरम = उस स्थान में कभी वापिस नहीं आने वाला (मोक्षमार्ग), अचरम = उस स्थान में पुनः आने वाला।

अनंतर के चारों बोल नारकी देवता में अशाश्वत है अतः भजना से मिले। परंपर के चारों बोल शाश्वत है वे नियमा मिले। चरम सर्वत्र नियमा मिले। अचरम सर्वार्थ सिद्ध में नहीं मिले शेष सर्वत्र नियमा मिले।

इस तत्त्व विचारणा में नारकी और देवता में जन्म समय मृत्यु और पूरे भव में 38बोल एवं 10 बोल की विचारणा है। साथ ही उत्कृष्ट संख्याता या असंख्याता जन्में मरे या पावे की भी विचारणा है।

जिसका सार यह है– 1. संख्याता योजन विस्तार वाले स्थानों में, 2. नवमें देवलोक से ऊपर और अवधिज्ञान अवधि दर्शन में उपजने मरने की उत्कृष्ट संख्या संख्याता है। शेष में उत्कृष्ट असंख्याता है। पूरे भव में पाने की अपेक्षा संख्यात योजन वाले स्थानों में जघन्य उत्कृष्ट संख्याता होते हैं और असंख्यात योजन वाले स्थानों में जघन्य उत्कृष्ट असंख्याता ही होते हैं। कम नहीं होते। लेश्या नरक देव में एक स्थान में एक ही निश्चित होती है अतः 38बोलों में छः लेश्या नहीं गिन कर एक लेश्या ही गिनी गई है।

विशेष– तिर्यंच मनुष्य की अपेक्षा यहां विचारणा नहीं की गई है।

3. दृष्टि– प्रथम नरक से छट्ठी नरक तक जन्म एवं मरण की अपेक्षा दृष्टि ही है मिश्र नहीं है। सातवीं नरक में एक मिथ्या दृष्टि ही है। पूरे भव में पाने की अपेक्षा सातों नरक में दो दृष्टि नियमा मिलती है मिश्र दृष्टि वाले भजना से मिलते हैं।

देवों में भी ग्रैवेयक तक प्रथम नरक के समान दृष्टि है। अणुत्तर विमान के जन्म, मरण और पूरे भव में एक सम्यग् दृष्टि ही होती है। शेष दोनों दृष्टि नहीं होती है।

4. कोई भी लेश्या वाला मनुष्य तिर्यंच मृत्यु समय में लेश्या परिवर्तन होकर फिर उस लेश्या वाले नरक देव में जा सकता है। फिर वहां पूरे जीवनभर एक द्रव्य लेश्या ही रहती है।

दूसरा उद्देशक–

उपयोग की गतागत– जन्म और मरण के उक्तबोलों में 5 ज्ञान, 3 अज्ञान, 4 दर्शन का वर्णन है उसके आधार से एवं

जीव	आगति	गति	अंक बने
1 से 3 नरक	8 (3+3+2)	7 (3+3+2)	87
4 से 6 नरक	8 (3+3+2)	5 (2+2+1)	85
7वीं नरक	5 (3+2)	3 (2+1)	53
भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी	8 (3+3+2)	5 (2+2+1)	85
वैमानिक 12 देव, नव ग्रैवेयक	8 (3+3+2)	7 (3+2+2)	87
अणुत्तर देव	5 (3 ज्ञान+2 दर्शन)	5 (3+2)	55
पाँच स्थावर	3 (2 अज्ञान 1 दर्शन)	3 (2+1)	33
तीन विकलेन्द्रिय	5 (2+2+1)	3 (2+1)	53
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	5 (2+2+1)	8 (3+3+2)	58
मनुष्य	7 (3+2+2)	8 (3+3+2)	78

अन्य वर्णन के आधार से 12 उपयोग की आगति गति इस प्रकार बनती है-

उद्देशक-तीसरा चौथा-

1. प्रज्ञापना सूत्र का 34वां परिचारणा पद देखना चाहिये।

2. पहली नरक से दूसरी नरक में नैरयिक आकीर्ण कम है। वहां विस्तार वाले अवकाश वाले नरकावास है। वहां नारकी महाकर्म, महाक्रिया, महावेदना वाले हैं अल्प ऋद्धि द्युति वाले हैं। इसी तरह आगे-आगे की नरक के लिये समझ लेना चाहिये।

नारकी जीव अनिष्ट अमनोज्ञ पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा, वनस्पति के स्पर्श का अनुभव करते हैं। आगे- आगे की नरक का पृथ्वी पिंड मोटाई में कम और विस्तार में अधिक अधिक है।

नरक के पृथ्वी आदि के जीव भी महाकर्म महाक्रिया महावेदना वाले हैं।

नरक सम्बन्धी विस्तृत वर्णन जीवाभिगम सूत्र सारांश में देखें।

3. मध्य- लोक का मध्य स्थान पहली नरक के आकाशांतर में असंख्यातवें भाग जाने पर आता है। नीचा लोक का मध्य स्थान चौथी नरक के आकाशांतर में करीब आधा जाने पर आता है। तिर्च्छालोक का मध्य स्थान मेरू पर्वत के मध्य समभूमि पर दो क्षुल्लक प्रतरों के चार चार प्रदेश मिलकर 8रूचक प्रदेश है। वे तिर्च्छा लोक के मध्य स्थान रूप हैं वहां से ही 10 दिशाएं निकलती है अर्थात् वह दिशाओं के केन्द्र स्थान है और तिर्च्छा लोक का मध्य स्थान है। ऊंचालोक का मध्यस्थान पांचवें देव लोक का रिष्ट नामक प्रस्तर (पाथड़ा) है वहां ऊर्ध्व लोक मध्य है। वहीं तक तमस्काय भी है वह ऊंचे लोक के मध्य स्थान तक गई है।

दस दिशाओं का वर्णन पहले कर दिया गया है।

4. पंचास्तिकाय के गुण- 1. जीवों का गमनागमन, भाषा, उन्मेष, योग प्रवृत्ति आदि जितने भी चल भाव हैं वे धर्मास्तिकाय के द्वारा होते हैं। 2. जीवों का स्थित रहना, बैठना, सोना, मन का एकाग्र होना आदि जितने भी स्थिर भाव है वे

अधर्मास्तिकाय के आधार से हैं। 3. आकाशास्तिकाय का गुण जगह देने का है आकाश प्रदेश में एक परमाणु रह सकता है उसी में 100 या 1000 परमाणु आ जाय तो भी समाविष्ट हो जाते हैं। एक साथ अनेक पुद्‌गल वर्गणाएं आकाश में रहती है। एक ही आकाश क्षेत्र में अनंत सिद्ध भगवान के आत्म प्रदेश रह सकते हैं। 4. जीवास्तिकाय में ज्ञान दर्शन का उपयोग होना यह गुण है। चेतना भी इसका लक्षण है। 5. पुद्‌गलास्तिकाय का ''ग्रहण'' गुण है उससे 5 शरीर 5 इन्द्रिय 3 योग श्वासोश्वास आदि विभिन्न रूप में पुद्‌गल ग्रहण होते रहते हैं।

5. अस्तिकाय स्पर्श- एक धर्मास्तिकाय का प्रदेश लोक मध्य में है तो अन्य 6धर्मास्तिकाय के प्रदेशों का स्पर्श करता है लोकांत में हैं तो 3-4 या 5 का। लोक मध्य में अधर्मास्तिकाय के 7 प्रदेश का, आकाशास्तिकाय के 7 प्रदेश का स्पर्श करता है। जीवास्तिकाय के अनंत प्रदेश का एवं पुद्‌गलास्तिकाय के भी अनंत प्रदेश का स्पर्श करता है। काल द्रव्य से कहीं स्पृष्ट है कहीं नहीं है। जहां है वहां अनंत काल से स्पृष्ट है।

अलोकाकाश में कोई अस्तिकाय नहीं है। केवल आकाश है वह किसी से भी स्पृष्ट नहीं है। लोक के किनारे पर सभी अस्तिकाय आकाश के 7 प्रदेश ही स्पर्श करती है। 3-4 आदि नहीं। क्योंकि लोक अलोक दोनों में ही आकाश तो है ही।

दो प्रदेशी स्कंध जघन्य 6(लोक के किनारे) उत्कृष्ट 12 (लोक के बीच) प्रदेश का स्पर्श करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध जघन्य आठ उत्कृष्ट 17 प्रदेश का स्पर्श करता है।

चार प्रदेशी जघन्य 10 उत्कृष्ट 22 प्रदेशों का स्पर्श करता है। प्रत्येक

अगले प्रदेशी स्कंध में पूर्व स्कंध की अपेक्षा जघन्य स्पर्श में 2 प्रदेश

प्रदेश संख्या	जघन्य स्पर्श	उत्कृष्ट स्पर्श
पांच प्रदेशी	12	27
छः प्रदेशी	14	32
सात प्रदेशी	16	37
आठ प्रदेशी	18	42
नौ प्रदेशी	20	47
दस प्रदेशी	22	52

अधिक करना चाहिये उत्कृष्ट स्पर्श में 5 बोल बढाना चाहिये। **यथा-**

जितने प्रदेशी स्कंध है उसके दुगुणे से दो अधिक करने पर जघन्य स्पर्श निकल जाते हैं। पांच गुणे से दो अधिक करने पर उत्कृष्ट स्पर्श निकल जाते हैं। यही नियम संख्यात असंख्यात अनंत प्रदेश तक समझना।

इन अस्तिकायों के प्रदेश परस्पर समझने में यह ध्यान रखना कि- 1. लोकांत में जघन्य स्पर्श होंगे बीच में उत्कृष्ट स्पर्श होंगे। 2. अलोक में आकाश मात्र है। 3. काल ढाई द्वीप में ही है, 4. जीव पुद्‌गल और काल जहां है वहां जघन्य भी अनंत प्रदेश

है। धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय जीव, पुद्गल, सम्पूर्ण लोक में है।

सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय- अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के असंख्य प्रदेश स्पर्श करती है शेष तीन के अनंत प्रदेश स्पर्श करती है एवं स्वयं का स्पर्श नहीं कहना। इसी तरह अन्य पांचों को समझ लेना।

6. अस्तिकाय अवगाढ़- पहले स्पर्श का कथन किया गया है अब अवगाढ़ का वर्णन किया जाता है। 1. स्वयं का स्वयं में अवगाहन नहीं कहना, 2. धर्मास्तिकाय आदि में एक एक प्रदेश अवगाढ कहना, 3. शेष तीन में अनंत अवगाढ कहना।

पुद्गल- जितने प्रदेशी स्कंध है उत्कृष्ट उतने प्रदेश अवगाढ कहना। जघन्य एक प्रदेश अवगाढ कहना।

सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय में- अधर्मास्तिकाय के असंख्य, आकाशास्तिकाय के असंख्य प्रदेश अवगाढ है। तीन अस्तिकाय के अनंत प्रदेश अवगाढ है स्वयं को अवगाढ नहीं कहना। इसी प्रकार छहों संपूर्ण अस्तिकायों का कथन कर

अस्तिकाय का अस्तिकाय प्रदेशों से परस्पर स्पर्श-

अस्तिकाय	धर्मास्तिकाय		अधर्मास्तिकाय		आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्गल.	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट			
धर्मास्तिकाय का प्रदेश	3	6	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
अधर्मास्तिकाय का प्रदेश	4	7	3	6	7	अनन्त	0/अनन्त
आकाशास्तिकाय का प्रदेश	0/1	7	0/1	7	6	0/अनन्त	0/अनन्त
जीवास्तिकाय का प्रदेश	4	7	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
काल का प्रदेश	7	7	7	7	7	अनन्त	अनन्त

पुद्गल स्कंधों का अस्तिकाय प्रदेशों से स्पर्श-

विकल्प	धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय		आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट			
परमाणु	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
दो प्रदेशी	6	12	12	अनन्त	0/अनन्त
तीन प्रदेशी	8	17	17	अनन्त	0/अनन्त
चार प्रदेशी	10	22	22	अनन्त	0/अनन्त
पाँच प्रदेशी	12	27	27	अनन्त	0/अनन्त
छ प्रदेशी	14	32	32	अनन्त	0/अनन्त
सात प्रदेशी	16	37	37	अनन्त	0/अनन्त
आठ प्रदेशी	18	42	42	अनन्त	0/अनन्त
नौ प्रदेशी	20	47	47	अनन्त	0/अनन्त
दस प्रदेशी	22	52	52	अनन्त	0/अनन्त
संख्यात प्रदेशी	सं.x2+2	सं.x5+2	सं.x5+2	अनन्त	0/अनन्त
असंख्याता प्रदेशी	असं.x2+2	असं.x5+2	असं.x5+2	अनन्त	0/अनन्त

(2) अस्तिकाय स्कंध का अस्तिकाय प्रदेशों से स्पर्श एवं अवगाढ़-

अस्तिकाय स्कंध	धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय	आकाशास्तिकाय काल (तीन)	जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय
धर्मास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
अधर्मास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
आकाशास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	अनन्त प्रदेश	अनन्त
जीवास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
पुद्गलास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
काल	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त

अस्तिकाय प्रदेश परस्पर अवगाढ़-

अस्तिकाय प्रदेश	धर्मास्तिकाय	अधर्मास्तिकाय	आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय	काल
धर्मास्तिकाय प्रदेश	-	1	1	अनन्त	0/अनन्त
अधर्मास्तिकाय प्रदेश	1	-	1	अनन्त	0/अनन्त
आकाशास्तिकाय प्रदेश	0/1	0/1	-	0/अनन्त	0/अनन्त
जीवास्तिकाय प्रदेश	1	1	1	अनन्त	0/अनन्त
पुद्गलास्तिकाय प्रदेश	1	1	1	अनन्त	0/अनन्त
काल	1	1	1	अनन्त	अनन्त

पुद्गल स्कंध अस्तिकायों से अवगाढ़-

विकल्प	धर्मास्तिकायादि तीनों		जीवास्तिकाय/पुद्गलास्तिकाय	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट		
परमाणु	1	1	अनन्त	0/अनन्त
दो प्रदेशी	1	2	अनन्त	0/अनन्त
तीन प्रदेशी	1	3	अनन्त	0/अनन्त
चार प्रदेशी	1	4	अनन्त	0/अनन्त
पाँच प्रदेशी	1	5	अनन्त	0/अनन्त
छः प्रदेशी	1	6	अनन्त	0/अनन्त
सात प्रदेशी	1	7	अनन्त	0/अनन्त
आठ प्रदेशी	1	8	अनन्त	0/अनन्त
नौ प्रदेशी	1	9	अनन्त	0/अनन्त
दस प्रदेशी	1	10	अनन्त	0/अनन्त
असंख्य प्रदेशी	1	असंख्य	अनन्त	0/अनन्त
अनन्त प्रदेशी	1	असंख्य	अनन्त	0/अनन्त

लेना चाहिये।

7. पांच स्थावर- एक आकाश प्रदेश पर असंख्य पृथ्वीकाय आदि अवगाढ है और वनस्पति काय अनंत अवगाढ है।

8. धर्मास्तिकाय आदि पर कोई जीव बैठ या सो नहीं सकता। क्योंकि अरूपी है। उसमें जीव अनंत रहे हुए हैं। प्रकाश अंधकार रूपी है उस पर भी कोई बैठ या सो नहीं सकता। बैठना सोना आदि केवल रूपी स्थूल पुद्गल पर हो सकता हैं।

9. लोक में सर्व जघन्य चौड़ाई तिर्च्छा लोक में क्षुल्लक प्रतर में है। मध्यम चौड़ाई पांचवें देवलोक में हैं, उत्कृष्ट चौड़ाई सातवीं नरक के आकाशांतर में है। क्षेत्र की अपेक्षा तिर्च्छालोक सबसे अल्प है, ऊंचा लोक असंख्यगुणा है, उससे नीचा लोक विशेषाधिक है।

पांचवां-छट्ठा उद्देशक-

1. आहार का वर्णन प्रज्ञापना सूत्र आहार पद के पहले उद्देशे के समान है।

2. अरूणोदय समुद्र में रहे चमरचंचा राजधानी में जाने के मार्ग से 6563550000 योजन दक्षिण पश्चिम में अवगाहन करने पर चमरचंचा नामक आवास है। 84000 योजन लम्बा चौड़ा गोल है। यहां असुरकुमार देव घूमने फिरने आते हैं, बैठते हैं अर्थात् बगीचे के जैसा इसका उपयोग करते हैं।

3. उदायन राजा- सिंधु और सौवीर आदि सौलह देश का अधिपति उदायन राजा वीतीभय नामक नगर में रहता था। उसका राज्य क्षेत्र अत्यन्त विशाल था। 363 नगर और खाने (खदानें) उसके राज्य में थी। महासेन प्रमुख 10 मुकुट बंध राजा एवं अन्य बहुत से राजा आदि पर भी उसका आधिपत्य था। इतना राज्य सम्बन्ध होते हुए भी वह भगवान महावीर स्वामी का परम भक्त एवं व्रतधारी जीवाजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता श्रमणोपासक भी था।

अभीचिकुमार- उसके प्रभावती नाम की राणी थी। जो सुकोमल एंव स्त्री के लक्षणों व गुणों से परिपूर्ण थी। उस प्रभावती राणी के आत्मज अभीचिकुमार नामक राजकुमार था। उदायन राजा का वह एक ही पुत्र था। बाल्यकाल उसका भी पूर्ण हो चुका था राज्य कार्य में देख रेख करने लग गया था।

उदायन राजा के केशिकुमार नामक एक भाणेज था वह उसके पास ही रहता था। वह भी गुण सम्पन्न एवं राज्य कार्य करने के योग्य हो गया था।

एक दिन पौषध शाला में पौषध लेकर धर्म जागरण करते हुए उदायन राजा को ये संकल्प हुआ कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी जिस क्षेत्र में विचरण कर रहे और धर्म प्रेमी सज्जन उनकी सेवा दर्शन आदि का लाभ ले रहे हैं, वे धन्य है। यदि विचरण करते हुए भगवान यहां वीतीभय नगर में पधारे तो मैं भी यथा योग्य सेवा पर्युपासना करूं।

उदायन को वैराग्य- भगवान उस समय चम्पा नगरी में विचरण कर रहे थे। श्रमणोपासक उदायन की मनोभावना जान कर वीतिभय नगर की दिशा में विहार कर दिया। विचरण करते हुए भगवान नगर के बाहर मृगवन बगीचे में पधारे। नागरिक जन दर्शनार्थ जाने लगे। राजा भी अपनी समृद्धि सहित दर्शन करने गया। वंदना करके पर्युपासना करते हुए भगवान की सेवा में बैठ गया। राजा सहित समस्त परिषद को भगवान ने धर्मोपदेश दिया। उपदेश सुन कर राजा अत्यन्त हर्षित हुआ। निर्ग्रन्थ प्रवचन (भगवान के वचनों) की हार्दिक प्रशंसा करते हुए उसने निवेदन किया कि हे भंते ! मैं पुत्र को राज्य सौंप कर आपके पास दीक्षित होना चाहता हूं। भगवान ने अपने (अहासुहं देवाणुपिया) शब्दों में उसे स्वीकृति दी।

भाणेज को राज्य– नगरी में जाते समय राजा के विचारों में परिवर्तन हुआ कि मेरा पुत्र अभीचिकुमार मुझे अत्यन्त प्रिय वल्लभ है, यह राज्य पाकर उसमें आसक्त होगा तो दुर्गति का भागी बनेगा, अतः यह राज्य मुझे अपने भाणेज केशिकुमार को देना चाहिये। राजा के नये विचार निर्णित रहे और उसने केशिकुमार को राज्य दे दिया। अभिचिकुमार अत्यन्त नम्र, विनीत, गुण सम्पन्न कुमार था। अमनोज्ञ व्यवहार होते हुए भी वह कुछ भी नहीं बोल सका। फिर यथा समय उदायन राजा ने दीक्षा अंगीकार की। महोत्सव आदि विस्तृत वर्णन जमाली के वर्णन के समान है। केशिराजा और प्रभावती राणी आदि ने दीक्षा की आज्ञा दी।

उदायन राजा ने संयम तप का यथा विधि पालन किया। अंत में संपूर्ण कर्म क्षय कर समस्त दुखों का अंत कर दिया।

अभीचिकुमार का चंपा में जाना– अभीचिकुमार को किसी समय रात्रि में चिंतन करते हुए राज्य सम्बन्धी घटित घटना की स्मृति हो आई। मानसिक वेदना बढ़ी एवं पिता उदायन राजा के प्रति अत्यन्त ही अप्रीति कारक विचार उत्पन्न हुए कि मैं उदायन का पुत्र एवं प्रभावती का आत्मज हूं मुझे छोड़ कर भाणेज को राज्य दिया, यह मेरे साथ अत्यंत ही अनुचित कर्तव्य किया गया इत्यादि संकल्पों से उसका मन वहां से राज्य छोड़ कर अन्यत्र चले जाने का हो गया एवं पिता उदायन के प्रति वैरानुभाव प्रबल हो गये।

सम्पूर्ण तैयारी करके अपने परिवार एवं धन सामग्री सहित वह ग्रामानुग्राम होते हुए चम्पानगरी में राजा कोणिक के पास पहुंच गया और सुख पूर्वक रहने लगा।

अभीचि श्रमणोपासक– संयोगवश वहां उसे धार्मिक संयोग भी मिला। क्योंकि कोणिक राजा भी भगवान का परम भक्त था। अनुक्रम में अभीचिकुमार भी व्रतधारी जीवा जीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता श्रमणोपासक बन गया। किन्तु उदायन राजा के प्रति जो वैरानुभाव के संकल्प थे उनका परिमार्जन नहीं किया गया।

विराधक गति– श्रावक व्रतों का पूर्ण शुद्ध पालन करते हुए अंतिम समय में उसने संथारा ग्रहण किया। 15 दिन चौविहार संथारा भी चला। बाह्य विधि आलोचना शुद्धि आदि भी की गई। किन्तु अंतर मन में पिता के कर्त्तव्य के प्रति जो खटक थी, वैरानुभाव के कण थे, उनका शुद्धिकरण उस समय भी नहीं किया। इस कारण व्रत पालन और व्रत शुद्धि सब फैल हो गई। असुरकाय के आताप जाति के देव स्थान का आयुबंध किया और विराधक होकर असुर कुमार जाति में देव रूप में उत्पन्न हुआ।

विराधक क्यों ?– अंतर मन में दुःख और खटक मात्र थी किन्तु हिंसानुबंधी कोई संकल्प, रौद्र ध्यान या निंदा कदाग्रह नहीं था। इस कारण संसार वृद्धि एवं नरक, तिर्यंच आदि गति में नहीं गया किन्तु श्रावक व्रत आदि का आचरण, प्रकृति, भद्रता, विनीतता आदि कारणों से देव बना। भावों की पूर्ण शुद्धि सफाई नहीं होने मात्र से वह धर्म का विराधक बना।

वहां से आयुष्य पूर्ण कर वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा। वहां संयम अंगीकार कर संपूर्ण कर्मों का क्षय कर सिद्ध होगा।

शिक्षा–

1. राजा हो या दीक्षार्थी हो उसे केवल एक पहलु से ही चिंतन का निर्णय नहीं लेना चाहिए। उसके प्रतिपक्षी दूसरे पहलु का परिप्रेक्षण अवश्य करना चाहिये। साथ ही ऐसे गंभीर विषयों में किसी से सलाह विचारणा भी अवश्य करनी चाहिये ताकि हित चाहते हुए भी किसी का अहित होने का प्रसंग न बने।

2. दूसरों की कैसी भी गलती और व्यवहार हो उसे हार्दिक शुद्धि पूर्वक माफ कर के शांत पवित्र बन जाना चाहिये। अन्यथा अपनी समस्त साधनाएं फैल होकर विराधक अवस्था प्राप्त हो जाती है। सामने वाले का कुछ भी बिगाड़ नहीं होता है। इसलिये बाह्य व्यवहार के संथारे, क्षमापना और व्रत पालन होते हुए भी भावों की शांति समाधि और सफाई होना आराधना का परम आवश्यक अंग समझना चाहिये। ऐसे संकल्पित भावों को अंतिम समय भी याद रख कर निकालना एवं मानसिक सफाई करना कभी भी नहीं भूलना चाहिये एवं उपेक्षा भी नहीं करनी चाहिये।

कई साधु या श्रावक दैवसिक, पाक्षिक, सांवत्सरिक, क्षमापना व्यवहार से तो कर ही लेते हैं, किन्तु किन-किन के प्रति उनके मनों में नाराजी, खटक, निंदा, तिरस्कार के भाव, मैली दृष्टि, अशुद्ध व्यवहार, घृणा चिड़ आदि भरे हुए रहते हैं वे सब अयोग्य स्थितिएं हैं। उससे साधना के प्राण नष्ट होते हैं। ऐसी स्थिति में तपोनिष्ट और क्रियनिष्ट सभी फैल हो जाते हैं।

अभीचिकुमार के इस कथानक से साधकों को सदा प्रति समय भाव शुद्धि एवं विचारों की सफाई, के लिये जागरूक रहने की आदत ही बना लेनी चाहिये। तभी साधनाओं का सच्च जीवित आनंद प्राप्त हो सकता है।

सातवां उद्देशक-

1. मन और भाषा के पुद्गल ग्रहण करके उसी समय छोड़ दिये जाते हैं, ज्यादा समय उनका आत्मा के साथ अस्तित्व नहीं रहता है। अतः मन और भाषा को आत्मा से भिन्न कहा गया है। काया-आत्मा के साथ दीर्घ समय तक रहती है, काया के स्पर्श एवं छेदन का ज्ञान एवं अनुभव आत्मा को होता है किन्तु उसके विनाश में आत्मा का विनाश नहीं होता है। इस कारण काया को आत्मा और आत्मा से भिन्न दोनों माना गया है।

मन और भाषा रूपी है अचित्त है, मन और भाषा के प्रयोग के समय ही मन और भाषा है पहले पीछे मन-भाषा नहीं है। एवं उसी समय उनका भेदन होता है पहले या बाद में नहीं। ये दोनों जीवों के ही होते हैं। अजीवों के नहीं।

कार्मण काया अति सूक्ष्म होने से काया अरूपी रूपी दोनों कही गई है। सचित्त अचित्त दोनों प्रकार काया के हैं जीवित है और मृत शरीर की अपेक्षा जीवों के भी काया है, अजीवों के भी अपना अस्तित्व अवगाहना रूप काया है। पहले पीछे भी काया है, पहले पीछे भी इसका भेदन होता है।

इस प्रकार मन वचन की अपेक्षा काया का स्वरूप कुछ अलग ही बताया गया है।

मन और वचन के सत्य आदि चार-चार भेद हैं और काया के औदारिक आदि सात भेद हैं।

2. मरण- मरण के पांच प्रकार कहे गये हैं, वे ये हैं-

1. आवीचि मरण- प्रति समय जो आयु कर्म क्षय हो रहे हैं उनकी अपेक्षा आवीचि मरण हो रहा है।

2-3. अवधि मरण और आत्यंतिक मरण- जिन नरकायु आदि के पुद्गलों को अभी भोगा जा रहा है, पुनः भविष्य में कभी भी नहीं भोगा जायेगा अर्थात् जीव मोक्ष चला जायेगा तो उन आयुष्य पुद्गलों की अपेक्षा आत्यंतिक मरण है। जो आयुष्य कर्म के पुद्गल अभी भोग लिये हैं फिर कभी ग्रहण कर बंध उदय होगा तो उनकी अपेक्षा कुछ सीमित समय के लिये मरण हुआ माना जायेगा अतः इसे अवधि (कुछ काल के लिये) मरण कहा गया है।

4. बाल मरण- यह वलय मरण आदि 12 प्रकार का है। **यथा-** 1 वलय मरण- गला दबा कर, मोड कर मरना, 2. वशार्त्त मरण- विरह व्यथा से पीडित होकर मरना (मस्तक फोड कर, छाती कूट कर, अंगोपांग पर चोट लगा करके मरना),

3. अंतः शल्य मरण- तीर भाला आदि से बींध कर मरना, 4. तद्भव मरण- पुनः वर्तमान भव को प्राप्त करने के लिये मरना (काशी करवत लेना आदि), 5. पर्वत आदि से गिर कर मरना। 6. वृक्ष आदि से कूद कर मरना, 7. पानी में डूब कर मरना, 8. अग्नि में जलकर मरना, 9. विष खाकर मरना, 10. तलवार आदि शस्त्र से कटकर मरना। 11. फांसी लगाकर मरना, 12. पशुपक्षी से शरीर भक्षण करवाकर मरना। कषायों के वशीभूत होकर इन उक्त तरीकों से मरना '' बाल-मरण'' है।

5. पंडित मरण- पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान यों दो प्रकार का पंडित मरण है। ये दोनों निहारिम अनिहारिम दो प्रकार के होते हैं एवं सपरिकर्म अपरिकर्म यों भी दो प्रकार के होते हैं। अर्थात् इनमें मरने के बाद देह (दाह) संस्कार क्रिया किया जाना या न किया जाना दोनों संभव है एवं संथारे के काल में शरीर का परिकर्म (चलना अंगोपांग हिलाना आदि क्रिया) करना न करना भक्त प्रत्याख्यान पंडित मरण में दोनों ही संभव है किन्तु पादपोपगमन पंडित मरण तो परिकर्म रहित ही होता है।

आवीचि मरण के द्रव्य क्षेत्र काल भाव भव की अपेक्षा 5 भेद है और 4 गति की अपेक्षा इनके 20-20 भेद होते हैं। इस प्रकार प्रथम के तीन मरणों के ये 20-20 भेद किये गये हैं। बाल मरण के 12 भेद हैं और पंडित मरण के दो भेद ही किये हैं। कुल 20+20+20+12+2 = 74 भेद मरण के यहां बताये गये हैं।

आठवां नौवां दसवां उद्देशक-

1. कर्म प्रकृति का वर्णन प्रज्ञापना पद 23 उद्देशक दो के अनुसार जानना चाहिये।

2. भावितात्मा अणगार वैक्रिय लब्धि सम्पन्न हो तो वह विविध इच्छित रूप बना सकता है इसका वर्णन तीसरे शतक के पांचवे उद्देशक में है। जिसका आशय यह है कि वह मनुष्य पशु पक्षी के रूप बनाना और आकाश में गमन आदि क्रियाएं कर सकता है। सोना चांदी रत्न धातु आदि की विक्रिया कर सकता है। उन्हें लेकर आकाश में चल सकता है। पक्षियों की भांति उड़ सकता है, रह सकता है। पशुओं की भांति कूद सकता है, दौड़ सकता है। ये सब वैक्रिय शक्ति के अस्तित्व की अपेक्षा कथन है ऐसी विक्रियाएं मायी प्रमादी साधु करता है। अप्रमादी गंभीर साधु नहीं करते हैं।

3. छाद्मस्थिक समुद्घात का वर्णन प्रज्ञापना पद 36के अनुसार जानना चाहिये।

चौदहवां शतक

1. आयु बंध के परिमाणों की अपेक्षा एक देवस्थान की सीमा का उल्लंघन हो जाय और अगले देवस्थान योग्य परिणाम तक न पहुंचे, उस बीच के परिणाम में रूक जाय और वहां आयुबंध कर काल करे तो जीव किस स्थान का आयुबंध करता है और कहां जाता है?

इस प्रश्न के उत्तर में बताया गया है कि वे स्थिर हुए परिणाम जिधर ज्यादा निकट हो उधर का आयु बंध और गति होती है। यथा- कोई व्यक्ति मार्ग में चल रहा है, एक विश्रांति के स्थान से 50 फुट आगे बढ़ गया और दूसरा विश्रांति का स्थान 500 फुट दूर है, उसी समय मूसलधार वर्षा प्रारंभ हो जाय तो वह व्यक्ति सहज निकट वाले स्थान में पहुंच कर अपनी सुरक्षा कर लेता है। वैसे ही उस आत्मा के परिणामों के योग्य जो निकट स्थान होता है उस स्थान का आयुबंध एवं गति होती है।

2. एकेन्द्रिय को विग्रहगति (वाटे बहेता) में चार समय लगता है। शेष सभी को तीन समय लगता है।

3. वाटे बहेता अवस्था के जीव को अनंतर परम्पर अनुत्पन्नक भी कहा गया है। स्थान पर उत्पन्न प्रथम समयवर्ती जीव अनंतरोत्पन्नक है शेष सभी परम्परोत्पन्नक है।

4. जन्म के अंतर्मुहूर्त बाद ही आयुबंध होता है पहले नहीं होता।

5. दुःख पूर्वक उत्पन्न होने वाले खेदोत्पन्नक जीव कहे जाते हैं।

दूसरा उद्देशक-

1. यक्षावेश उन्माद का छूटना उतना कठिन नहीं होता है जितना कि मोह का उन्माद कठिनाई से छूटता है। चार गति 24 ही दंडक में दोनों प्रकार का उन्माद होता है। नारकी के भी देव द्वारा अशुभ पुद्गल प्रक्षेप से यक्षावेश उन्माद होता है और देवों के भी विशिष्ट शक्ति (ऋद्धि) सम्पन्न देवों द्वारा ऐसी प्रक्रिया होती है।

2. तीर्थंकर भगवान के जन्म निर्वाण आदि के समय देववृष्टि करते हैं। शक्रेन्द्र को वर्षा करनी हो तो वह आभ्यंतर परिषद के देव को बुलाता है, वे मध्यम परिषद के देव को बुलाते हैं, मध्यम वाले बाह्य परिषद के देवों को और वे अन्य बाहर के देवों को बुलाते हैं। फिर वे देव आभियोगिक देवों को बुलाते हैं और आभियोगिक देव वर्षा करने वाले देवों को बुलाते हैं। इसी प्रकार ''तमस्काय'' करना हो तो भी अभियोगिक देव तमस्काय करने वाले देवों को बुलाते हैं।

रति क्रीड़ा के लिये, अपने संरक्षण के लिये, छिपने के लिये, विरोधी देव आदि को भ्रमित, विस्मित करने के लिये, देव तमस्काय उत्पन्न करते हैं।

तीसरा उद्देशक-

1. सम्यग्दृष्टि देव अणगार की अवगणना करके उनके बीच से नहीं जाते हैं, वे वंदना नमस्कार करते हैं, पर्युपासना करते हैं। मिथ्यादृष्टि देव अवगणना कर सकते हैं।

2. नैरयिकों में आपस में विनय सत्कार सन्मान हाथ जोड़ना प्रणाम करना आसन देना आदि शिष्टाचार नहीं होता है। देव मनुष्य में होता है, तिर्यंच में आसन दान के अतिरिक्त अनेक शिष्टाचार होते हैं। अर्थात् पशुओं में सामने जाना, पहुंचाना, उठना आदि भी होते हैं।

चौथा उद्देशक-

1. पुद्गल एक वर्णादि से अनेक में, अनेक वर्णादि से एक वर्णादि में, रूक्ष से स्निग्ध में, इस प्रकार परिवर्त्तन परिणमन होते रहते हैं।

जीव के भी कभी सुखी, कभी दुःखी इस प्रकार कर्मोदय से विविध परिवर्त्तन होते रहते हैं।

परमाणु आदि द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत है। वर्णादि की अपेक्षा अशाश्वत है। द्रव्य की अपेक्षा वह अचरम होता है, क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा चरम अचरम दोनों होता है।

पांचवां उद्देशक-

1. नारकी और पांच स्थावर विग्रह गति वाले जीव अग्निकाय के बीच से निकलते हैं किन्तु जलते नहीं है और अविग्रह गति वाले नहीं निकलते हैं।

तीन विकलेन्द्रिय विग्रह गति वाले और अविग्रह गति वाले दोनों अग्निकाय में जाते हैं। विग्रह गति वाले नहीं जलते और अविग्रह गति वाले जलते हैं।

शेष तिर्यंच मनुष्य देव विग्रह गति वाले अग्नि में जाते हैं और नहीं जलते हैं। अविग्रह गति वाले ऋद्धि (लब्धि) सम्पन्न जाते हैं वे नहीं जलते हैं। जो ऋद्धि सम्पन्न नहीं है वे कोई जाते है कोई नहीं जाते। जो जाते हैं वे जलते हैं।

2. नैरयिकों को– शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, गति, स्थिति, लावण्य, यशकीर्ति और उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम ये दसों अनिष्ट मिलते हैं। देवों को इष्ट मिलते हैं। मनुष्य तिर्यंच में इष्ट अनिष्ट दोनों तरह के होते हैं। शब्द रूप गंध और रस ये चार एकेन्द्रिय में नहीं होते हैं। अतः उनमें 6होते हैं, बेइन्द्रिय में 7, तेइन्द्रिय में आठ, चौरेन्द्रिय में 9 होते हैं।

छट्ठा उद्देशक–

1. शक्रेन्द्र इशानेन्द्र विषय भोग की इच्छा होने पर देवलोक में ही एक नूतन भवन (विमान) शय्या आदि की विकुर्वणा करते हैं एवं सनतकुमारेन्द्र आदि ऊपर के देवलोक के इन्द्र शय्या की विकुर्वणा नहीं किन्तु सिंहासन की विकुर्वणा करते हैं क्योंकि उनके काय परिचारणा नहीं होती। स्पर्श परिचारणा आदि होती है।

सातवां उद्देश्क–

1. एक बार गौतम स्वामी के मनोगत संकल्पों को जानकर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने व्याख्यानोपरांत परिषद के विसर्जित हो जाने पर इस प्रकार कहा कि हे गौतम ! तुम और हम आज के नहीं चिरकाल से जन्म जन्मांतर से परिचित एवं साथी हैं अर्थात् इस भव के पूर्व देवलोक में असंख्य वर्ष साथ थे, उसके पूर्व मनुष्य भव में भी अपना साथ था इत्यादि एवं इस भव के बाद आगे भी अपन दोनों मोक्ष स्थान में एक सरीखे-तुल्य आत्म स्वरूप में साथ रहेंगे।

इससे गौतम स्वामी को केवल ज्ञान न होने की अधैर्यता में बहुत शान्ति एवं आश्वासन मिला कि मुझे इसी भव से केवल ज्ञान और मुक्ति की प्राप्ति अवश्य होगी।

2. भगवान और गौतम की इस वार्त्ता या तत्त्व ज्ञान को अणुत्तर विमान के देव अपने अवधि ज्ञान की मनोवर्गणा लब्धि द्वारा जानते देखते हैं।

3. तुल्यता– छः प्रकार की तुल्यता कही गई है। 1. द्रव्य, 2. क्षेत्र, 3. काल, 4. भाव, 5 भव, 6.संस्थान।

1. परमाणु– परमाणु, द्विप्रदेशी- द्वि प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी अनंत प्रदेशी आपस में तुल्य होते हैं। एक शुद्ध आत्मा दूसरी शुद्ध आत्मा के साथ तुल्य होती है, यह द्रव्य तुल्यता है। 2. इसी तरह अवगाहन की अपेक्षा क्षेत्र तुल्यता, 3. स्थिति की अपेक्षा काल तुल्यता, 4. पुद्गल के वर्णादि की अपेक्षा एंव जीव के गुणों की अपेक्षा भाव तुल्यता हैं। 5. नरकादि दंडकों के भव की अपेक्षा तुल्यता हैं। 6. परिमंडल आदि आकृत्ति की अपेक्षा संस्थान तुल्यता होती है।

4. संथारे में आहारादि के त्याग में काल करने वाला व्यक्ति देवगति आदि में पहुंचने पर पहले विशिष्ट आसक्ति से तीव्रता से आहार ग्रहण करता है फिर क्रमशः तीव्रता में- आसक्ति में कमी हो जाती है।

5. अणुत्तर विमान में कई देव लवसत्तम संज्ञक होते हैं। उनकी उस संज्ञा का आशय यह है कि पूर्व के मनुष्य भव में उनकी उम्र 7 लव प्रमाण और होती तो वे सम्पूर्ण अवशेष कर्म क्षय करके उसी भव में मोक्ष चले जाते। 77 लव का एक मुहूर्त्त होता है। एक लव एक मिनट से छोटा होता है और सेकंड से बड़ा होता है।

अणुत्तर विमान के समस्त देव इतने अल्पकर्मी होते हैं कि यदि वे पूर्व भव में एक बेले की तपस्या और कर लेते, इतनी उम्र होती तो वे उसी भव में सब कर्मों को क्षय कर सकते थे।

वहां अणुत्तर देवों के शब्द रूप आदि सारे लोक से उत्तम, श्रेष्ठ, श्रेष्ठतम होते हैं उससे अधिक ऊंचे कहीं भी शब्दादि विषय नहीं होते हैं। अर्थात् उनके पौद्गलिक सुख संसार के समस्त जीवों के सुख से अणुत्तर होते हैं, इसीलिये वे अणुत्तर देव कहे जाते हैं।

आठवां उद्देशक-

1. सभी पृथ्वी और विमानों में आपस में असंख्य योजन का अंतर है। रत्नप्रभा पृथ्वी और ज्योतिषी का अंतर 790 योजन का है। सिद्ध शिला और अनुत्तर विमान का अंतर 12 योजन का है। सिद्ध शिला से अलोक का अंतर उत्सेधांगुल के देशोन एक योजन प्रमाण है।

2. राजगृही नगर में भगवान और गौतम स्वामी के सामने रहे हुए शालवृक्ष के सम्बन्ध में गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान ने फरमाया कि यह शालवृक्ष का जीव यहां से मरने के बाद इसी नगरी में पुनःशालवृक्ष रूप में जन्म लेगा। वहां वह लोगों द्वारा पूजित सम्मानित होगा, देवाधिष्ठित होगा। फिर वहां से महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध हो जायेगा।

इस शालवृक्ष की शाखा का मुख्य जीव मरकर विंद्याचल पर्वत की तलहटी में माहेश्वरी नगर में शालवृक्ष रूप में उत्पन्न होगा। वहां वह वंदित पूजित देवाधिष्ठित होगा। फिर वहां से महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जायेगा।

यह उम्बर वृक्ष की शाखा का जीव पाटलिपुत्र नगर में पाटली वृक्ष के रूप में उत्पन्न होगा। शेष वर्णन उपरोक्तवत् समझना।

2. अम्बड़ श्रावक का वर्णन औपपातिक सूत्र सारांश से जानना।

3. अव्याबाध देव- ये देव अपनी दैविक शक्ति के द्वारा किसी व्यक्ति की आंखों की पलक पर 32 प्रकार के नाटक दिखा सकते हैं। ऐसा करते हुए भी उस व्यक्ति को किंचित भी बाधा परेशानी नहीं होने देते हैं। ये सातवें लोकांतिक देव है।

शक्रेन्द्र देवेन्द्र अपनी शक्ति से किसी व्यक्ति का सिर छेदन कर चूर्ण चूर्ण कर कमंडल में डाल दे और फिर उसी समय चूर्ण को जोड़ दे। ऐसा सब इतनी शीघ्रता व सफाई के साथ करे कि उस पुरुष को किंचित भी तकलीफ नहीं होने दे।

दैविक शक्ति से स्वल्प दुःख भी उक्त कार्यों में नहीं होता है।

5. जृम्भक देव- ये देव क्रीड़ा में एवं मैथुन सेवन प्रवृत्ति में आसक्त बने रहते हैं। ये तिरछे लोक के वैताढ्य पर्वतों पर रहते हैं और नीचे भी आते रहते हैं। ये जिस मानव पर प्रसन्न हो जाय तो उसे धन माल आदि से भरपूर भर देते हैं और जिस पर रूष्ट हो जाय तो उसे कई प्रकार से हानि पहुंचाते हैं। ये एक प्रकार के व्यंतर जाति के देव ही हैं। 15 कर्म भूमि के क्षेत्रों में एवं देवकुरु उत्तर कुरू क्षेत्र के कंचन गिरी पर्वतों पर चित्र, विचित्र, यमक नामक पर्वतों पर रहते हैं। इनकी एक पल्योपम की उम्र होती है।

इन देवों का मनुष्य लोक के आहार, पानी, फल, फूल आदि पर अधिकार होता है। उनमें हानि वृद्धि कर सकते हैं। इनके दस नाम से ही इनके कार्य स्पष्ट होते हैं। **यथा-** 1. अन्न जृंभक, 2. पान जृंभक, 3. वस्त्र जृंभक, 4. लयन (मकान) जृंभक, 5. शयन जृंभक, 6. पुष्प जृंभक, 7. फल जृंभक, 8. फूल जृंभक, 9. विद्या जृंभक, 10. अव्यक्त या अधिपति जृंभक- सामान्य रूप से सभी पदार्थों पर अधिपत्य रखने वाले अव्यक्त जृंभक होते हैं।

नौवां उद्देशक-

1. भावितात्मा का अणगार कर्म लेश्या को अर्थात् भाव लेश्या को नहीं जान सकता है किंतु भाव लेश्या वाले सशरीरी जीव को जानते देखते हैं।

2. सूर्य चन्द्र के विमान से जो प्रकाश निकलता है वह रूपी द्रव्य लेश्या के पुद्गलों से प्रकाश निकलता है अर्थात् पृथ्वीकायिक जीवों के शरीर से प्रकाश निकलता है।

3. नारकी जीवों के अनिष्ट और दुःखकर पुद्गलों का संयोग होता है किन्तु देवों के इष्ट और सुखकारी पुद्गल संयोग होता है।

4. महर्द्धिक देव हजारों रूप बनाकर उन सब से एक साथ भाषा बोल सकते हैं। वह भाषा एक ही होती है, हजार नहीं होती है।

5. सूर्य विमान के पृथ्वीकायिक जीवों के आतप नामक पुण्य प्रकृति का उदय होता है, सूर्य ज्योतिषी देवों का इन्द्र भी है। अतः सूर्य को ओर सूर्य के अर्थ को शुभ माना गया है।

6. अणगार सुख-

1. एक महीना संयम पालन करने वाले अणगार व्यंतर देवों के सुख का उल्लंघन कर जाते हैं। इसी क्रम से दो महीने से 12 महीने तक समझना चाहिये।

एक महीना = व्यंतर। दो महीना = नवनिकाय। तीन महीना = असुरकुमार। चार महीना = ग्रह नक्षत्र तारा। पांच महीना = सूर्य चन्द्र । छः महीना = पहला दूसरा देवलोक। सात महीना = तीसरा चौथा देवलोक। आठ महीना = पांचवां छठ्ठा देवलोक। नौ महीना = सातवां आठवां देवलोक। दस महीना = 9 से 12 देवलोक। ग्याहर महीना = नवग्रैवेयक। बारह महीने- संयम पालन करने वाला अणगार अणुत्तर विमान के देवों के सुख का उल्लंघन कर लेता है।

यह संयम में भावित आत्मा के आत्मिक आनंद का एक अपेक्षित मध्यम दर्जे का मानदंड बताया गया है। क्योंकि कई जीव तो अंतर्मुहूर्त में ही मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

दसवां उद्देशक-

1. केवली और सिद्ध भगवान ज्ञान में सभी अपेक्षा से समान होते हैं। केवली बोलते हैं अर्थात् उस ज्ञान का कथन कर सकते हैं किंतु सिद्ध भगवान उत्थान कर्म बल वीर्य आदि के अभाव होने से वचन प्रयोग नहीं करते हैं। इसी प्रकार केवली उठना बैठना चलना आदि शारीरिक चेष्टाएं कर सकते हैं। सिद्ध भगवान शरीर के अभाव में ये क्रियाएं नहीं करते हैं।

	समानता असमानता-केवलज्ञानी	सिद्ध भगवान
1	छद्मस्थों को जानते देखते है	छद्मस्थों को जानते देखते है।
2	आधोवधिक, परमावधिक, केवली, सिद्धों को जानते देखते है	सिद्ध भी जानते देखते है।
3-4	बोलते है, प्रश्नों का उत्तर देते हैं	सिद्ध नहीं देते।
5	आँख बंद करते, खोलते, शरीर संकोचन, प्रसारण है	नहीं है।
6	रत्नप्रभा यावत् सिद्धशिला पृथ्वी जानते देखते हैं	सिद्ध भी जानते देखते हैं।
7	परमाणु पुद्गल यावत् अनन्त प्रदेशी स्कंध जानते देखते हैं	सिद्ध भी जानते देखते हैं।

पन्द्रहवां शतक

गोशालक वर्णन-

इस भरत क्षेत्र में शरवण नामक सन्निवेश नगर था। उस सन्निवेश में गोबहुल ब्राह्मण रहता था। जो वेद आदि का जानकार था। उसके एक बहुत बड़ी गोशाला थी। एक बार मंखलि नामक मंख भिक्षाचर अपनी भद्रा भार्या सहित घूमता हुआ उस शरवण नगरी में आया। यह चित्रफलक (फोटो की तसवीर) हाथ में रख कर भिक्षा मांगता था। चातुर्मास रहने के लिये उसे खोज करने पर कोई जगह नहीं मिली तो उसने गोबहुल ब्राह्मण की गौशाला में ही चातुर्मास किया। उसकी भद्रा भार्या गर्भवती थी। वहां पर ही उसने बालक को जन्म दिया। बारहवें दिन उसका अर्थ सम्पन्न नाम दिया ''गोशालक'' (गौशाला में जन्म लेने वाला)

यौवन अवस्था में पहुंच कर वह गौशालक भी पिता की तरह तस्वीर हाथ में लेकर आजीविका करने लगा।

भगवान महावीर- उस काल में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने माता-पिता के दिवंगत होने के बाद अपनी गर्भगत प्रतिज्ञा पूर्ण होने पर अकेले स्वयं ने ही दीक्षा अंगीकार की। विचरण करते हुए पहला चातुर्मास अस्थिक ग्राम में किया। उस वर्ष भगवान ने निरंतर 15-15 की तपस्या करने का संकल्प किया था। दूसरे वर्ष भगवान ने महीने-महीने की तपस्या प्रारम्भ की और दूसरा चौमासा राजगृही नगरी में नालंदा पाडे (पहाडे) के बाहर तंतुवायशाला के एक कमरे में किया।

गौशालक और भगवान का संयोग- संयोगवश गोशालक मंखलिपुत्र भी घूमते-घूमते उसी नगरी में उसी पहाड़े में पहुंच गया। कहीं पर भी रहने को स्थान नहीं मिलने से वह भी उसी तंतुवाय शाला में आकर किसी कमरे में ठहर गया।

भगवान का प्रथम मासखमण पूरा हुआ। पारणे के लिये राजगृही नगरी में गये गोचरी में भ्रमण करते हुए उन्होंने विजय सेठ के घर में प्रवेश किया। विजय सेठ ने भगवान को आते हुए देखा तो उठकर सामने गया और आदर सत्कार विनय वंदन के साथ भगवान को भोजनगृह में ले गया और शुद्ध भावों से पारणा कराया। तीनों योगो से शुद्ध निर्दोष सुपात्र दान देकर हर्षित हुआ, उस समय उन परिणामों में उसने देवायु का बंध किया और संसार परित्त किया। उसके घर में पंच दिव्य वृष्टि हुई, जिसमें धन का (सोनैया का) ढेर हो गया। देव दुंदुभी बजी।

नगर में बात फेल गई। गोशालक ने भी सुनी, वह तत्काल वहां देखने के लिये आया। उसने अच्छी तरह वह दृश्य आंखों से देखा एवं भगवान को भी पारणा करके उसके घर से निकलते हुए देखा। गोशालक अत्यंत प्रसन्न और आनंदित हुआ। भगवान

को वंदन नमस्कार करके बोला कि मैं आज से आपका शिष्य हूं आप मेरे धर्माचार्य हैं। भगवान ने उसे स्वीकार नहीं किया। नगरी में से होते हुए अपने स्थान पर आकर दूसरा मासखमण प्रारम्भ कर दिया। ध्यान में लीन बन गये। दूसरे मासखमण का पारणा आनंद सेठ के घर, तीसरा पारणा सुनंद सेठ के घर किया। चौथा पारणा चौमासा समाप्त होने पर वहां से विहार करके कोल्लाक सन्निवेश में बहुल ब्राह्मण के घर किया। सभी पारणों के स्थान पर पंच दिव्य वृष्टि हुई।

शिष्यत्व ग्रहण– गोशालक ने भगवान को वहां नहीं देखा तो नगरी में बहुत खोज की कहीं पता नहीं लगा। तब उसने तंतुवायशाला में आकर कपड़े जूते आदि ब्राह्मणों को देकर दाढ़ी मूंछ सहित मस्तक का मुडंन करवाया। पूर्ण निर्वस्त्र होकर भगवान की खोज में निकला और सीधा कोल्लाक सन्निवेश में पहुंचा। वहां उसने लोगों के मुख से भगवान के पारणे पर पंच दिव्य वृष्टि की वार्त्ता, सुनी, वह समझ गया सुना कि भगवान यहीं पर है। खोज करते करते वह उस नगरी के बाहर मार्ग में जाते हुए भगवान के पास पहुंच गया। पुनः विनय वंदन करके भगवान से निवेदन किया कि मैं आपका शिष्य हूं आप मेरे धर्माचार्य हैं। अत्यंत आग्रह लगन एवं नग्न देखकर भगवान ने उसे शिष्य के रूप में स्वीकार कर लिया। साथ साथ विचरण करते हुए समय बीतने लगा।

तिल का पौधा– एक बार कुछ वर्षा होने के बाद साथ में विहार करते हुए वे सिद्धार्थ ग्राम से कूर्म जा रहे थे। मार्ग में फूलों से युक्त एक तिल का पौधा देख कर गोशालक ने पूछा कि हे भगवन्! इस पौधे के ये सात फूल के जीव मर कर कहां जायेंगे। भगवान ने उत्तर दिया कि इस पौधे की एक फली में सात तिल रूप में उत्पन्न होंगे। गोशालक को यह उत्तर रूचिकर नहीं हुआ और उसे असत्य करने की बुद्धि उत्पन्न हुई। वह कपट पूर्वक भगवान से पीछे रह गया और पौधे को जड़ एवं मिट्टी सहित उखाड़ कर फेंक दिया और शीघ्र चलकर भगवान के साथ हो गया। थोड़ी देर में ही मूसलधार वर्षा हुई मिट्टी से वह पौधा पुनः जम गया और वे सात फूल के जीव मर कर एक फली में सात तिल रूप में उत्पन्न हो गये।

वैश्यायन तपस्वी– भगवान कूर्म ग्राम के बाहर पहुंचे, वहां वैश्यायन बाल तपस्वी बेले बेले पारणा करते हुए और आतापना लेते हुए रहता था। उसके मस्तक में बहुत जूंए पड़ गई थी। वे धूप के कारण इधर उधर पडती तो वह तपस्वी पुनः उन्हें मस्तक पर डाल देता था। गोशालक को उसे देखकर कुतुहल उत्पन्न हुआ। भगवान की नजर बचाकर वह उसके पास पहुंचा और बार-बार यों कह कर चिढाने लगा कि ''तुम साधु हो या जूंओं के घर हो।'' बार-बार कहते जाने पर उस तपस्वी की शांति भंग हुई, उसने गोशालक पर तेजोलेश्या फेंकी। उस लेश्या के गोशालक के पास पहुंचने के पूर्व ही भगवान ने शीत लेश्या से उसे प्रतिहत कर दिया। तब तपस्वी ने तेजो लेश्या को पीछी खींच ली और उसने भगवान को भी देख लिया और कहा मैं जान गया यह आपका प्रभाव है, आपने ही मेरी लेश्या को प्रतिहत किया है। फिर गोशालक ने भगवान से पूछा कि भगवन्! यह जुओं का घर आपको क्या कह रहा है? तब भगवान ने तेजोलेश्या की बात स्पष्ट करदी कि हे गोशालक ! तेरी अनुकंपा के लिये मैंने शीत लेश्या से उसकी तेजोलेश्या को प्रतिहत किया, जिससे तेरा कुछ बिगाड़ नहीं हुआ। अन्यथा अभी राख का ढेर हो जाता।

गोशालक सुनकर भयभीत हुआ। वंदन नमस्कार कर उसने भगवान से पूछा कि यह तेजोलेश्या कैसे प्राप्त होती है? भगवान ने उसे बेले-बेले पारणा करना आतपना लेना आदि संपूर्ण विधि बता दी।

गौशालक का पृथक्करण– कुछ समय कूर्म ग्राम में रहकर भगवान और गोशालक ने पुनः सिद्धार्थ ग्राम की तरफ विहार कर दिया। मार्ग में वह तिल के पौधे का स्थान आया। गोशालक ने पूर्व बात को स्मरण कराते हुए भगवान से कहा कि आपने जो कहा था वह तो मिथ्या हो गया है। यहां तिल का पौधा ही नहीं है। उत्तर देते हुए भगवान ने स्पष्ट कर दिया कि हे गोशालक ! तूने मेरे

कथन पर श्रद्धा रूचि नहीं करते हुए पीछे से जाकर उसे उखाड़ फेंका था इत्यादि सारी घटना कह सुनाई और कुछ ही दूरी पर खड़े उसी तिल के पौधे का निर्देश करके बताया यह वही पौधा है, इसकी अमुक फली में वे ही सात फूल के जीव मर कर तिल रूप में उत्पन्न हुए हैं। गोशालक ने फली तोड़ कर तिल गिन कर देखे। भगवान का कथन सत्य था। गोशालक अत्यन्त शर्मिन्दा हुआ और वहीं से भगवान को छोड़कर चला गया।

तेजोलब्धि साधना एवं प्रभाव– उसने सर्व प्रथम छः महिनों में तेजो लेश्या की साधना की। उसमें वह सफल रहा। फिर उसके पास भगवान पार्श्वनाथ की परंपरा के छः दिशाचर श्रमण आकर मिल गये। जिन्हें कुछ पूर्वों का ज्ञान भी अवशेष था। उन्होंने पूर्वों से अष्टांग निमित्त ज्ञान आदि का निर्यूहण किया। गोशालक का शिष्यत्व स्वीकार कर लिया। अब गोशालक स्वयं अपने को 24 वां तीर्थंकर कहते हुए विचरण करने लगा। अपना भक्त समुदाय, श्रमण समुदाय आदि भी उसने विस्तृत कर लिया। निमित्त ज्ञान आदि का बल उसके पास था ही। उसी से लोगों को प्रभावित करने लगा। कई पार्श्वनाथ भगवान के श्रमण भी उसके चक्कर में आये और उसे ही 24 वां तीर्थंकर समझ कर शिष्यत्व स्वीकारने लगे।

श्रावस्ती नगरी में गोशालक और भगवान– भगवान महावीर स्वामी स्वामी भी छद्मस्थ काल पूर्ण कर, केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न होने पर धर्मोपदेश देने लगे एवं गौतम आदि हजारों शिष्यों सहित विचरण करते हुए एक बार श्रावस्ती नगरी में पधारे एवं कोष्टक नामक उद्यान में समवसृत हुए।

गोशालक भी विचरण करते हुए भगवान से पहले ही श्रावस्ती नगरी में आ गया था। वहां पर हालाहला नामक कुंभारण रहती थी जो ऋद्धि सम्पन्न थी। वह गोशालक की अन्यन्य श्रद्धावान उपासिका थी। वहां गोशालक अपने आजीविक संघ के साथ उसी की दुकान में ठहरा एवं अपने आपको 24 वां तीर्थंकर कहते हुए प्रचार करने लगा।

सभा में गोशालक का जीवन परिचय– श्रावस्ती नगरी में गोशालक के कथन की चर्चा फेलने लगी। गौतम स्वामी भगवान की आज्ञा लेकर पारणे के लिये नगरी में गये। उन्होंने भी यह चर्चा सुनी। बगीचे में आकर भगवान से निवेदन किया और जिज्ञासा प्रगट की कि भगवान यह गोशालक कौन है और इसका जीवन वृत्तांत क्या है? वहां नागरिक जन की परिषद भी बैठी थी। भगवान ने गौतम स्वामी का समाधान करते हुए गोशालक का जन्म से लेकर वहां श्रावस्ती में पहुंचने तक का सारा वृत्तांत सुना दिया। गोशालक की सम्पूर्ण वार्त्ता सुन कर परिषद विसर्जित हुई। नगर में वार्त्ता चलने लगी। गोशालक तक भी बात पहुंचते देर न लगी। उसे अपनी वार्त्ता प्रकट होने पर गुस्सा आना स्वाभाविक था। वह आतापना भूमि से उतर कर अपने स्थान पर आकर बैठ गया।

गौशालक और आनंद श्रमण– भगवान की आज्ञा लेकर आनंद नामक स्थविर श्रमण बेले के पारणे हेतु नगरी में गोचरी के लिये गये। भ्रमण करते हुए वे गोशालक के स्थान के निकट से जा रहे थे। गोशालक ने आनंद श्रमण को अपने पास बुलाया और कहा- हे आनंद ! तुम मेरे से एक दृष्टान्त सुनो। गोशालक ने अपना कथन प्रारम्भ कर दिया।

व्यापारियों का दृष्टांत– किसी एक समय कुछ व्यापारी धन कमाने के लिये यात्रा करने निकले। मार्ग में भयंकर अटवी आई। आस-पास कोई गांव नहीं थे। उनके पास का पानी भी समाप्त हो गया पानी की शोध करते करते उन्हें एक वल्मीक (बांबी) दिखी। जिसके चार सुंदर शिखर लगे हुए थे। परस्पर विचार करके वे वहीं रूके और एक शिखर को पानी की आशा से तोड़ दिया। इच्छानुसार उन्हें सुन्दर मधुर जल प्राप्त हुआ। सब ने प्यास शांत की और अपने पास के जल कुंभों में प्रचुर पानी भर लिया।

परस्पर विचार वार्त्ता हुई और दूसरा शिखर सोने की इच्छा से तोड़ा। उसमें भी उन्हें इच्छित प्रचुर शुद्ध सोना हाथ लगा। अपने पास में रहे गाड़ों में उन्होंने यथेच्छ सोना भर लिया। फिर रत्नों की आशा से तीसरा शिखर तोड़ा। उसमें भी उन्हें सफलता मिली। इच्छित रत्नों की राशि भी अपने-अपने गाड़ों में भर ली। लोभ संज्ञा और बढ़ी, चौथा शिखर तोड़ने की विचारणा चली। तब एक अनुभवी हितप्रेक्षी व्यापारी ने इन्कार कर दिया कि हमें इच्छित सामग्री मिल चुकी है। अब चौथे शिखर को नहीं तोड़ना चाहिए। संभव है इसे तोड़ना आपत्ति का कारण बन सकता है। उस अनुभवी व्यक्ति ने अपना पूरा आग्रह किया किन्तु बहुमत के आगे उसकी नहीं चली।

चौथा शिखर तोड़ दिया। उसमें से दृष्टि विष सर्प निकला और वल्मीक के ऊपर चढ़कर सूर्य की तरफ देखा और फिर व्यापारी वर्ग की ओर अनिमेष दृष्टि से देखा। वणिकों को उनके सारे उपकरण सहित जलाकर भस्म कर दिया। जिसने चौथे शिखर को तोड़ने का मना किया था उस पर अनुकंपा करके उसे नागराज देव ने उसके सामान सम्पत्ति सहित उसे अपने नगर में पहुंचा दिया।

गौशालक द्वारा धमकी– हे आनंद ! इसी तरह तेरे धर्माचार्य ने बहुत की ख्याति आदर सन्मान प्राप्त कर लिया है। अब यदि मेरे विषय में कुछ भी कहेंगे तो उस सर्प राज के समान मैं भी अपने तप तेज से सबको जलाकर भस्म कर दूंगा और यदि तूनें मेरा संदेश पहुंचा कर मना कर दिया तो मैं भी उस हित सलाह देने वाले वणिक के समान तेरी रक्षा कर दूंगा। अतः जा तेरे धर्माचार्य को यह मेरी बात कह देना।

आनंद श्रमण ने आकर सम्पूर्ण वार्त्ता भगवान के समक्ष निवेदन कर दी और पूछा कि हे भगवन् ! क्या गोशालक के पास इतनी शक्ति है? भगवान ने उत्तर में स्पष्टीकरण किया कि गोशालक ऐसा करने में समर्थ है। किन्तु तीर्थंकर भगवंतों पर उसकी शक्ति नहीं चल सकती, केवल परिताप पहुंचा सकता है। हे आनंद ! गोशालक से अनंत गुणी शक्ति श्रमण निर्ग्रन्थों और स्थविरों के पास है किन्तु ये क्षमा श्रमण होते हैं, ऐसा आचरण नहीं करते। इनसे भी अनंत गुणी शक्ति तीर्थंकरों के पास होती है किन्तु वे भी क्षमाधारी होते हैं, ऐसे हिंसक आचरण वे नहीं करते। अतः हे आनन्द ! तुम गौतमादि सभी श्रमणों को सूचित कर दो कि कोई भी निर्ग्रन्थ गोशालक से किंचित भी धार्मिक चर्चा भी न करें, क्योंकि वह अभी विरोध भाव में चढ़ा हुआ है।

गौशालक का भगवान के सामने वक्तव्य– आनंद श्रमण ने अन्य श्रमणों को सूचना कर दी एवं सम्पूर्ण ब्यौरा भी बता दिया। गोशालक से न रहा गया। उसका क्रोध उग्र होता गया और वह अपने संघ के साथ में अत्यंत खार खाता हुआ वहां पहुंच गया। भगवान के सामने खड़ा होकर भगवान से कहने लगा- हे आयुष्मन काश्यप ! मेरे लिये तुम अच्छी बातें करते हो। अरे वाह ! ठीक बातें करते हो कि यह मेरा शिष्य गोशालक मंखलि पुत्र है। परन्तु आपको अभी तक पता ही नहीं है कि आपका शिष्य गोशालक कभी का मर चुका है मैं तो अन्य हूँ। तिल और फूल के जीवों के समान पउट्ट परिहर करते करते मैंने गोशालक के शरीर को पड़ा देखा तो उसमें प्रवेश कर दिया है। यह मेरा सातवां शरीरांतर प्रवेश (पउट्ट परिहार) है। मैं तो कोडिन्य गौत्रीय उदायी हूं। मैं गौशालक नहीं हूं। गोशालक का शरीर स्थिर मजबूत सहनशील देख कर मैंने इसमें यह सातवां प्रवेश किया है। अतः मैं उदायी हूं। मैं गौशालक नहीं हूं। सोलह वर्ष मुझे इस शरीर में तप साधना करते हुए हो गये हैं। 133 वर्ष की मेरी उम्र है इसमें मैंने यह सातवां पउट्ट परिहार शरीर परिवर्तन किया। इसलिये आपने बिना समझे ही ठीक कहना शुरू कर दिया कि यह गोशालक है और मेरा शिष्य है। इस तरह व्यंग भरे शब्दों में गोशालक मनमाना बोलता ही गया।

भगवान के द्वारा गोशालक को संबोधन– उसके रूकने पर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने गोशालक से इस प्रकार- हे गोशालक ! जैसे कोई चोर पराभव पाकर कहीं छिपने का अवसर नहीं होने से ऊन, सण, कपास,, तृण आदि से अपने को ढांक कर ऐसा समझता है कि '' मैं छिप गया ''। इस प्रकार वह अपने को गुप्त माने या छिपा हुआ माने, उसी प्रकार हे गोशालक ! तूं भी, वहीं गोशालक होते हुए भी अपने को अन्य बता रहा है, तू ऐसा मत कर, हे गोशालक ! तुझे ऐसा करना योग्य नहीं है तूं वही है। तेरी प्रकृति भी वही है। तूं अन्य नहीं है।

गोशालक का अनर्गल प्रलाप– गोशालक श्रमण भगवान महावीर स्वामी के उक्त वचन और दृष्टांत सुनकर अत्यन्त कुपित हुआ और भगवान को अनेक प्रकार के अनुचित आक्रोश पूर्ण शब्दों से तिरस्कार करने लगा। अनेक प्रकार के वचनों से अपमान करने लगा,भर्त्सना करने लगा। यह सब अनर्गल प्रलाप करके वह भगवान से बोला कि आज तूं मर गया है, नष्ट हो गया है, भ्रष्ट हो गया है, अब तूं जीवित नहीं रह सकता है, अब मेरे द्वारा तेरे को सुख नहीं होने वाला है।

सर्वानुभूति अणगार– सर्वानुभूति अणगार से अपने धर्माचार्य की यह अवहेलना सहन नहीं हो सकी। वह गोशालक के निकट जाकर इस प्रकार कहने लगा-हे गोशालक ! जो मनुष्य श्रमण ब्राह्मण के पास एक भी धार्मिक वचन सुनकर अवधारण करता है, वह उनका उपकार मानता है, आदर सत्कार विनय भक्ति भाव रखता है, तो तेरा तो कहना ही क्या? भगवान ने तुझे शिक्षा दी, दीक्षा दी, शिष्य बनाया, बहुश्रुत बनाया, इतने पर भी तूं भगवान के साथ विपरीत बना हुआ ऐसा अनार्यपना कर रहा है, तुच्छ व्यवहार, असभ्य वचन एवं तिरस्कार करते हुए अनर्गल भाषण कर रहा है। हे गोशालक ! तुझे ऐसा करना योग्य नहीं है। क्योंकि तू वही मंखलिपुत्र गोशालक है, दूसरा नहीं है।

गोशालक को ये शिक्षा वचन भी रोष भड़काने वाले बने। उसने एक ही बार में अपने तेजो लेश्या से वहीं जलाकर भस्म कर दिया। सर्वानुभूति अणगार का व्यवहार एवं भाषण सर्वथा उचित एवं मर्यादा मय था। उनके भाव भी पूर्ण शुद्ध थे। वे अणगार अचानक काल करके भी आराधक हुए और आठवें स्वर्ग में 18सागरोपम की उम्र में देव रूप में उत्पन्न हुए। वहां से एक भव महाविदेह क्षेत्र में करके मोक्ष जायेंगे।

सुनक्षत्र अणगार– सर्वानुभूति अणगार को भस्म करके गोशालक पुनः भगवान महावीर स्वामी को आक्रोश भरे अनर्गल शब्दों में पूर्ववत् बकने लगा। सुनक्षत्र नामक अणगार भी भगवान की ऐसा अवहेलना सहन नहीं कर सके और गोशालक को उन्होंने सर्वानुभूति के समान ही पुनः शिक्षा वचन कहे और सत्य बात स्पष्ट कही कि तूं वही गोशालक है अन्य नहीं है। इन वचनों को सुनते ही वह गोशालक अत्यन्त कुपित हुआ और तेजो लेश्या से उसे भी परितापित किया। परितापित सुनक्षत्र अणगार भगवान के पास पहुंचा वंदन नमस्कार कर पुनः महाव्रतारोपण एवं संथारा धारण किया, सभी से क्षमा याचना कर समाधि पूर्वक प्राण त्याग दिये। वे मुनि भी आराधक होकर 12वें देवलोक में 22 सागरोपम की उम्र में देव रूप में उत्पन्न हुए। वहां का आयुष्य पूर्ण होने पर एक भव करके महाविदेह क्षेत्र से मोक्ष प्राप्त करेंगे।

भगवान पर तेजोलेश्या का प्रहार– अब गोशालक पुनः भगवान को आक्रोश वचनों द्वारा अपमानित करने लगा, तिरस्कार एवं भर्त्सना करते हुए उसने पूर्वोक्त बकवास के वचनों को दोहराया।

तब शिक्षा वचन कहते हुए भगवान ने भी गोशालक के ऐसा व्यवहार करना अयोग्य बताया। अर्थात् भगवान ने भी यही कहा कि हे गोशालक मैंने तुझे शिक्षित किया, दीक्षित किया, बहुश्रुत किया और मेरे साथ ही विपरीत बना तूं ऐसा व्यवहार करता है। यह तुझे योग्य नहीं है क्योंकि तूं वही गोशालक ही है अन्य नहीं है। (केवल व्यर्थ की बातें घड़ कर छिपना चाहता है)।

गोशालक का गुस्सा प्रचंड होकर शिखर तक पहुंच गया। सात-आठ कदम पीछे सरक कर तैजस समुद्घात करके सम्पूर्ण शक्ति के साथ भगवान के ऊपर तेजोलेश्या का वार कर दिया। यह तेजोलेश्या का वार इतना समर्थ था कि एक ही क्षण में 16देशों को जलाकर भस्म कर दें। किन्तु तीर्थंकर भगवान पर उसका जोर नहीं चला। क्षति पहुंचाने में असमर्थ होकर वह तेजोशक्ति प्रदक्षिणा लगाकर आकाश में उछल गई एवं गिरते हुए गोशालक के शरीर में प्रवेश करके उसे ही परितापित करने लगी। जिससे गोशालक के शरीर में जलन होने लगी।

परस्पर भविष्य वाणी– गोशालक की शक्ति का वार खाली गया, फिर भी वह इस प्रकार कहने लगा कि हे आयुष्यमन काश्यप ! तुम अभी भले जीवित बच गये हो किन्तु छः महिनों में ही पित्त ज्वर एवं दाह की पीड़ा से छद्मस्थ ही मर जाओगे। प्रत्युत्तर में भगवान ने स्पष्ट किया कि- ''मैं तो अभी भी सौलह वर्ष तीर्थंकर रूप में विचरण करूंगा, हे गोशालक ! तू स्वयं ही अपनी तेजोलेश्या से परितापित होकर सात दिन में छद्मस्थ ही मर जायेगा।'' इस वार्तालाप से श्रावस्ती नगरी में चर्चा होने लगी कि कोष्टक उद्यान में दो तीर्थंकर परस्पर एक दूसरे को कहते हैं कि तू ''छः महिने मे मर जायेगा'', तूं सात दिन में मर जायेगा।''

गोशालक की पराजय– भगवान ने श्रमणों को संबोधित करते हुए कहा कि अब गोशालक निस्तेज हो चुका है, इसकी तेजोशक्ति समाप्त हो चुकी है, अब इसके साथ धार्मिक चर्चा प्रश्नोत्तर सारणा वारणा प्रेरणा आदि कर सकते हो एवं उसे निरस्त कर सकते हो। श्रमणों ने भगवान की आज्ञा पाकर भगवान को वंदन नमस्कार करके ऐसा ही किया। सभी प्रकार से गोशालक निरूत्तर ही रहा एवं प्रचंड गुस्सा करते हुए भी श्रमणों को किंचित भी बाधा पीड़ा पहुंचाने में समर्थ नहीं हो सका। ऐसा देखकर कई आजीविक स्थविर श्रमण गोशालक को छोड़कर भगवान की सेवा में वंदन नमस्कार करके वहीं रह गये।

गोशालक की दुर्दशा– गोशालक जिस प्रयोजन से आया था वह सिद्ध नहीं हो सका। वह हार गया। शर्मिन्दा होते हुए निःश्वास छोड़ते हुए पछताने लगा कि हा हा ! अहो मैं मारा गया। इस प्रकार करणी जैसी भरणी की उक्ति अनुसार वह शारीरिक मानसिक प्रचण्ड वेदना से स्वतः ही दुःखी हुआ और कोष्टक उद्यान से निकल कर अवशेष संघ के साथ अपने आवास स्थान में पहुंचा। इतना होने पर उसने अभी मिथ्या मति का त्याग नहीं किया। कई ढोंग एवं असत्य कल्पनाएं प्ररूपणाएं प्रचलित कर अपने पाप एवं प्रवृत्तियों के दोषों को ढांकने का प्रयत्न किया।

वह दिन भर 1. आम चूसता, शराब पीता, 2. बारंबार गाता, 3. बारंबार नाचता, 4. बारंबार हालाहली कुंभारण को प्रणाम करता था। दाह शान्ति के लिये मिट्टी मिले शीतल जल से निरंतर शरीर का सिंचन करता था। अपनी इस दुर्दशा को भी गुण के रूप में बताने के लिये वह प्ररूपणा करता कि ये सब चरम कृत्य है। ऐसे कुल आठ चरम कहे गये हैं जिसमें उसने चार तो अपने उक्त कृत्य जोड़ दिये और चार अन्य बातें जोड़कर तुक मिला दिया। अपने पापों को ढांकने के प्रयत्न में बुद्धि के दुरुपयोग से कई बेतुकी बातें उसने बनाई। आठ चरम, 4 पानक, 4 अपानक आदि। आठवें चरम में और चौथे अपानक में अपने को तीर्थंकर रूप में मोक्ष जाना बताया।

अयंपुल– ''अयंपुल'' नामक आजीविकोपासक गोशालक को सर्वज्ञ सर्वदर्शी मानता था। कुछ जिज्ञासा लेकर वह गोशालक की सेवा में दर्शन, वंदन करने के लिये आया। दूर से ही गोशालक की प्रवृत्तियों (हाथ में आम, नाच, गान, बारंबार हाथ जोड़ना आदि) एवं दुर्दशा को देख कर लज्जित हुआ, उदास हुआ अर्थात् अश्रद्धा भाव उत्पन्न होने लगे और वह आगे नहीं बढ़ सका, वंदन नमस्कार की बात ही नहीं रही, पीछे सरकने लगा। उसे ऐसा करते हुए देखकर स्थविरों ने उसे अपने पास बुलाया। आयंपुल ने स्थविरों के पास जाकर वंदना की। स्थविरों ने उसके मन की जिज्ञासा जान ली। उसे प्रकट करते हुए कहा

कि तुम्हें ऐसा विचार उत्पन्न हुआ और इसलिये तुम आये हो। अयंपुल खुश हुआ और सहर्ष स्वीकार किया। फिर स्थविरों ने आठ चरम, चार पानक, अपानक की बात करते हुए बताया कि ऐसा करते हुए तुम्हारे धर्माचार्य अब मोक्ष जायेंगे। तुम उन्हीं के पास जाओ, वे तुम्हारे प्रश्न का समाधान स्वतः ही कर देंगे। इस प्रकार स्थविरों ने उसे पुनः स्थिर किया।

अयंपुल गोशालक के पास गया। स्थविरों ने संकेत करके उससे आम हाथ से छुड़वा दिया। गोशालक ने भी अयंपुल उपासक को उसके मनोगत प्रश्न को बताकर समाधान दिया एवं अन्य प्रश्नों का भी समाधान दिया। साथ ही झूठ बोल कर सफाई दी कि मेरे हाथ में आम्रफल नहीं था केवल छिलका था। इस प्रकार अयंपुल की श्रद्धा को अपने प्रति सुरक्षित किया। वंदना नमस्कार करके अयंपुल चला गया।

मरण महोत्सव निर्देश– अपना आयुष्य निकट जानकर मिथ्याभिनिवेष में लीन उस गोशालक ने अपने संघ के स्थविर श्रमणों को कहा कि मेरा आदर सत्कार आडम्बर सहित निर्वाण महोत्सव करना। नगर में उद्घोषणा करना कि चरम तीर्थंकर सिद्ध हुए हैं।

गोशालक को सम्यक्तव की प्राप्ति– सातवी रात्रि में शुभ अध्यवसाय संयोगो से उसे सम्यक्त्व की प्राप्ति हुई जिससे उसका चिंतन सीधा चलने लगा कि मैं वास्तव में गोशालक ही हूं, श्रमणों का घातक हूं, गुरु द्रोही हूं, तीर्थंकर भगवान की आशातना करने वाला हूं और अनेक खोटे वाक्जालों, तर्कों,दलीलों, कल्पनाओं से अपने को और दूसरों को भ्रमित करने वाला हूं। अब स्वयं की तेजोलेश्या से तप्त होकर दाह ज्वर से सातवीं रात्रि में आज छद्मस्थ ही मर जाऊंगा। वास्तव में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ही अंतिम तीर्थंकर हैं, मैंने तो ढोंग ही किये हैं और खोटा प्रपंच रचा है।

गोशालक की सम्यक्त्व से देवगति– इस प्रकार के विचार आने पर उसने पुनः स्थविरों को अपने पास बुलाया और सही सत्य को उजागर करते हुए उन्हें शपथ दिला कर आदेश दिया कि तुम मेरे बाये पांव में मूंज की रस्सी बांध कर मुंह में तीन बार थूक कर घसीटते हुए श्रावस्ती नगरी के विविध स्थानों मार्गों में घोषणा करना कि यह गोशालक ही था, तीर्थंकर नहीं था। इसने झूठा प्रपंच किया था। वास्तव में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ही अंतिम तीर्थंकर हैं। इस प्रकार महान असत्कार पूर्वक मेरे शरीर का निष्कासन करना। ऐसा कहकर वह काल धर्म को प्राप्त हुआ। शुभ परिणामों में मरकर वह भी 12वें देवलोक में उत्पन्न हुआ।

दंभ पूर्वक शपथ का पालन– शपथ का निर्वाह करने हेतु एवं अपनी प्रतिष्ठा भी कायम रहे इसके लिये गोशालक के स्थविरों ने कुंभारशाला में ही श्रावस्ती नगरी चित्रित की और उसी के चौराहे आदि स्थानों में मंद मंद आवाज से घोषणा कर दी। यह सब कृत्य दरवाजे बंद करके किया गया। बाद में दरवाजे खोलकर महान ऋद्धि सत्कार सन्मान के साथ निर्वाण महोत्सव किया।

भगवान को रोगांतक– श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने यथा समय वहां से विहार कर दिया। विचरण करते हुए ''मेंढिक ग्राम'' नामक नगर में पधारे। पूर्व घटना को छः महिने करीब होने जा रहे थे। भगवान के शरीर में महान पीड़कारी दाहकारक पित्तज्वर उत्पन्न हुआ अर्थात् भगवान का शरीर महान रोगांतक से आक्रांत हो गया। उस रोग के कारण खून-रस्सी की दस्तें भी होने लगी। इस स्थिति को देख कर लोगों में चर्चा होने लगी कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी गोशालक के तप तेज से आक्रांत होकर दाह पित्त ज्वर से अब छद्मस्थ ही काल कर जायेंगे।

सिंहा अणगार का रूदन– बगीचे में एक तरफ भगवान का अंतेवासी भद्र, विनीत, सिंहा नामक अणगार आत्म ध्यान साधना कर रहे थे एवं आतापना ले रहे थे। उनके कानों में उक्त लोकोपवाद के शब्द पड़े। सिंहा अणगार को संकल्प विकल्प होने

लगे कि भगवान के शरीर में प्रचंड वेदना उत्पन्न हुई है और वे छद्मस्थ ही काल कर जायेंगे इत्यादि ऐसी मानसिक महान व्यथा से वे पीड़ित हुए। आतापना भूमि से बाहर आये और एक तरफ जाकर अपने दुख के अतिरेक में अत्यंत रूदन करने लगे।

भगवान ने श्रमणों को भेजकर सिंहा अणगार को अपने पास बुलाया और समझाया कि ऐसा आर्त्तध्यान करना उपयुक्त नहीं है। मैं अभी साढे पन्द्रह वर्ष विचरण करूंगा। तुम रेवती सेठानी के घर जाओ। उसने मेरे उद्देश्य से जो कोल्हापाक बनाया है, वह नहीं लाना किन्तु जो अपने घोड़ों के उपचार हेतु पहले से (कई दिन पहले), बिजोरा पाक बनाया था जिसमें से कुछ बचा हुआ पड़ा है, वह लेकर आओ।

रेवती का सुपात्र दान एवं रोग निवारण– भगवान की आज्ञा होने पर सिंहा अणगार रेवती सेठाणी के घर गये। सेठाणी ने आदर सत्कार के साथ आने का प्रयोजन पूछा। (क्योंकि उस समय भिक्षा का समय नहीं रहा था) सिंहा अणगार ने अपना प्रयोजन कह दिया कि भगवान के लिये जो कोल्हापाक बनाया वह तो नहीं चाहिये किन्तु बिजोरा पाक चाहिये। रेवती ने अपनी गुप्त वार्त्ता को जानने का हेतु पूछा। सिंहा अणगार ने भगवान के ज्ञान का परिचय दिया, फिर उसने भक्ति पूर्वक बिजोरापाक बहराया। भावों की, दान की एवं पात्र की यो त्रिकरण शुद्धि से उस रेवती सेठाणी ने देवायु का बंध किया एवं संसार परित्त किया। वहां भी पंच दिव्य प्रकट हुए। सिंहा अणगार भगवान की सेवा में पहुँचे एवं वह बिजोरापाक भगवान के कर कमलों में अर्पित किया। भगवान ने अमुच्र्छा भाव से उस आहार के पुद्‌गलों को शरीर रूपी कोठे में डाल दिया। उस आहार के परिणमन होने पर भगवान का रोग शीघ्र उपशांत हुआ। शरीर स्वस्थ होने लगा। अल्प समय में ही भगवान आरोग्यवान एवं शरीर से बल सम्पन्न हो गये। चतुर्विध संघ में प्रसन्नता की लहर फैल गई। यहां तक कि अनेक देव देवी भी खुश हो गये कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी स्वस्थ हो गये हैं। फिर भगवान पूर्ववत् धर्मोपदेश देते हुए ग्रामानुग्राम विचरण करने लगे।

गोशालक का दूसरा भव-राजा विमलवाहन– गोशालक का जीव देवलोक से आयु समाप्त होने पर इसी भरत में विंध्यगिरी पर्वत के निकट पुंड देश में शतद्वारा नगरी में जन्म लेगा। गुणों से एवं रूप से सम्पन्न होगा। यथा समय उसके माता-पिता उसका राज्याभिषेक करेंगे। वह महान बलशाली राजा होगा। यशस्वी होगा, दो देव उसकी सेवा में रहेंगे। उसके तीन नाम होंगे-1. जन्म नाम-महापद्म, 2. पूर्णभद्र और मणि भद्र दो देव सेवक होने से- देव सेन, 3. ''विमल'' नामक हस्तिरत्न का उपभोग करने वाला होने से ''विमलवाहन'' उसका तीसरा नाम होगा। इतना पुण्यशाली होते हुए भी वह श्रमण-निर्ग्रन्थों का महान विरोधी होगा, अनार्यता पूर्ण व्यवहार करेगा। यथा- हंसी करेगा, भत्सर्ना करेगा, कष्ट देगा, बांधेगा, मारेगा, छेदन-भेदन करेगा, उपद्रव करेगा, उपकरण छीन लेगा, अपहरण कर देगा, नगर से या देश से निकाल देगा, इस तरह का विभिन्न अभद्र व्यवहार समय-समय पर करता रहेगा। ऐसा करने पर एक बार नगर के प्रतिष्ठित लोक सामूहिक रूप से निवेदन करेंगे कि हे राजन्! ऐसा मत करो। क्योंकि ऐसा करना कभी आपके और हमारे लिये खतरनाक पीड़ाकारी बन सकता है। अतः आप ऐसे दुराचरण बंद कीजिये। राजा बिना मन के मिथ्याभाव से उस निवेदन को स्वीकार कर लेगा।

सुमंगल अणगार– एक बार सुमंगल नामक अणगार जो तीन ज्ञान और विपुल तेजोलब्धि के धारक होंगे वे वहां पधारेंगे और बगीचे के पास आतापना भूमि में आतापना लेंगे। वे विमलनाथ तीर्थंकर के प्रपौत्र शिष्य होंगे। विमलवाहन राजा रथ चंक्रमण हेतु उस बगीचे के पास से निकलेगा। मुनि को आतापना लेते देखकर स्वाभाविक ही क्रोध से प्रज्वलित होगा। रथ के अग्रभाग से टक्कर लगाकर ध्यान में खड़े मुनि को नीचे गिरा देगा। उठकर मुनि पुनः खड़े होंगे और वह फिर टक्कर लगाकर गिरा देगा। मुनि उठकर अवधिज्ञान में उपयोग लगाकर देखेंगे और उसका भूत काल जान देखकर उसे कहेंगे कि तूं श्रमणों की घात करने वाला मंखलि पुत्र गोशालक था। उस समय उन अणगारों ने और श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने समर्थ होते हुए भी तेरे

अन्याय को सहन किया, कुछ भी प्रतिकार नहीं किया किन्तु मैं सहन करने वाला नहीं हूं, तुझे एक क्षण में ही सारथी घोड़े सहित भस्म कर दूंगा।

ऐसा कहने पर विमलवाहन राजा तीसरी बार रथ की टक्कर लगाकर फिर सुमंगल अणगार को गिरा देगा। तब वे अणगार तैजस समुद्घात द्वारा उस राजा को भस्म कर देंगे। उसके बाद वे मुनि वर्षों तक संयम पालन कर आलोचना प्रतिक्रमण शुद्धि के साथ एक महिने के संथारे से सर्वार्थसिद्ध विमान में देव रूप में उत्पन्न होंगे। वहां से महाविदेह में जन्म लेकर मोक्ष जायेंगे।

गोशालक का नरकादि भव भ्रमण– विमलवाहन राजा (गोशालक का जीव) तेजोलेश्या के प्रहार से मरकर सातवीं नरक में उत्पन्न होगा और पश्चानुपूर्वी क्रम से एक-एक नरक में दो-दो भव करेगा, अंत में पहली नरक से निकल कर तिर्यंच पंचेन्द्रिय की विविध योनियों में जन्म मरण करेगा। फिर क्रमशः चौरेन्द्रिय तेइन्द्रिय, बेइन्द्रिय की योनियों में भव भ्रमण करके एकेन्द्रियों में भवभ्रमण करेगा। विमलवाहन के भव के बाद वह कहीं शस्त्रों से कहीं दाह से पीड़ित होकर मरता रहेगा। एकेन्द्रिय से निकल कर वेश्याओं के भव करेगा। फिर ब्राह्मण पुत्र होकर दावाग्नि की ज्वाला में मरेगा। अग्निकुमार देव रूप में उत्पन्न होगा। वहां से निकलकर मनुष्य देव के भव करेगा। जिसमें संयम धारण करेगा अनेक भवों (10 भवो) तक द्रव्य संयम क्रिया की विराधना करेगा। भाव से संयम को स्पर्श ही नहीं करेगा। और क्रमशः नौ असुरकुमार (अग्निकुमार को छोड़कर) का और एक ज्योतिषी का भव करेगा। उसके बाद संयम की सात भव में आराधना करेगा और क्रमशः पहले, तीसरे, पांचवें, सातवें, नौंवे, ग्यारहवें देवलोक और सर्वार्थ सिद्ध विमान में उत्पन्न होगा। फिर महाविदेह क्षेत्र में आठवी बार संयम की आराधना कर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त करेगा।

गोशालक की मुक्ति– केवल ज्ञान से अपने भवों को जानेगा और अपने शिष्यों को संबोधन करके कहेगा कि मैं पूर्व भव में ऐसा श्रमण घातक गुरु द्रोही था। जिसके फलस्वरूप मैंने ऐसे विविध जन्म मरण रूप संसार भ्रमण के फल को प्राप्त किया है। यह वृत्तांत सुना कर शिष्यों को शिक्षित करेगा कि कभी भी आचार्य आदि की आशातना न हो इसका पूर्ण विवेक रखना अन्यथा अनंत संसार की वृद्धि होगी, जैसी कि मेरी दशा हुई। इस तरह केवली द्वारा सम्पूर्ण वृत्तांत को सुन कर वे श्रमण भयभीत होंगे एवं अपनी आलोचना शुद्धि के साथ सावधानी पूर्वक संयम की आराधना करने लगेंगे। गौशालक का जीव केवली पर्याय में विचरण करते हुए अंत में आयु समाप्ति वेला जानकर भक्त प्रव्यारख्यान पंडित मरण स्वीकार करेगा। अवशेष कर्मों को क्षय कर सिद्ध बुद्ध मुक्त होगा।

शिक्षा एवं ज्ञातव्य–

1. निम्नस्तरीय व्यक्ति में भी अपार मनोबल एवं बुद्धि बल हो सकता है। एक भिक्षाचर के पुत्र गोशालक ने त्रिलोकीनाथ भगवान महावीर से विरोधी बनकर बराबरी की टक्कर ली थी।

2. पूर्ण असत्य पक्षी होते हुए भी गोशालक की ढ़ीढ़ता उत्कृष्ट दर्जे की थी कि आनंद को बुलाकर दृष्टांत द्वारा समझाया। भगवान के सामने आकर भी बेहद सीनाजोरी दिखाई। शक्ति विफल हो जाने पर भी यह कह गया कि छः महिने में मर जाओगे।

3. ढ़ोंगी व्यक्ति कितने कपट प्रपंच सिद्धांत कल्पनाएं घड़ सकते हैं यह गोशालक के जीवन से अनुभव करने को मिलता है। उसने अपने को छिपाने के लिये कितने शरीर प्रवेश, नाम, वर्ष आदि की कल्पनाएं जोड़ी। आठ चरम, पानक अपानक कल्पित घड़े और लोगों को आकर्षित करने हेतु कई झूठे प्रपोगंडे किये और लगभग जीवन में सर्वत्र उसे सफलता मिली। श्रमण भगवान के जहां 2-3 लाख उपासक थे तो गोशालक को तीर्थंकर मानकर उपासना करने वालों की संख्या 11 लाख हो चुकी

थी। फिर भी पाप का घड़ा एक दिन अवश्य फूटने वाला होता है। जब उसका पाप चरम सीमा में पहुंच गया, दो श्रमणों की हत्या के पाप से भारी बन गया तो स्वयं के लेश्या से ही मारा गया और अंत में हारा गया, असफल हो गया, फैल हो गया।

4. गोशालक और उसके स्थविरों के पास निमित्त ज्ञान के अतिरिक्त किसी के मन की बात जानने की अद्भुत शक्ति भी थी। तभी अयंपुल श्रावक के रात्रि में उत्पन्न हुए मन के प्रश्न को स्वतः जान लिया।

अंतिम उम्र तक भी गोशालक आतापना एवं तपस्या में संलग्न रहता था। आतापना भूमि से उतर कर ही वह कुंभारशाला में आया था तभी, आनंद श्रमण को बुला कर दृष्टांत सुनाया था।

5. भगवान के प्रति पूर्ण भक्ति और अर्पणता के साथ ही गोशालक ने शिष्यत्व स्वीकार किया था किन्तु वह 4-5 वर्ष तक भी उसे पूरा निभा नहीं सका। क्योंकि मूल में वह एक अयोग्य और अविनीत उद्दंड प्रकृति का व्यक्ति था। इसी कारण विहार काल में वेश्यायन तपस्वी की छेड़-छाड़ जैसे कई प्रसंग उसके साथ बने थे।

6. उसे दीक्षित करने में भगवान का कोई स्वार्थ नहीं था। उसका आग्रह और स्पर्शना (भावी) जानकर उसे स्वीकार किया। केवलज्ञान के बाद गौतम स्वामी के पूछने पर भी उसकी जो चर्चा चलाई गई उसमें भी वैसी स्पर्शना एवं गोशालक के अनेक श्रमण श्रावकों का शुद्ध धर्म में आना आदि अनेकों कारण रहे होंगे। वास्तव में सर्वज्ञ प्रभु त्रिकाल ज्ञाता होते है, वे ज्ञानके अनुसार यथोचित आचरण एवं भाषण ही करते हैं।

7. गोशालक के अनर्गल हिंसक क्रूर, व्यवहार पर भी भगवान का एवं उनके श्रमणों का जो भी वर्णन है, उसमें उनकी भाषा, व्यवहार एवं भावों का अनुप्रेक्षा करने से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि वे पूर्ण संयमित थे। कहीं भी गोशालक के प्रति असभ्य वचन तिरस्कार के व्यवहार या गलत मानस की गंध तक भी नहीं थी। एक उत्कृष्ट दर्जे के विरोधी एवं निरपराध श्रमणों की हत्या करने वाले के साथ भी छती शक्ति अत्यंत शांति पूर्ण उनका व्यवहार था। जो कि अपने आप में एक महान शांति का आदर्श है। गोशालक से भी विशिष्ट शक्ति और लब्धिधारी श्रमण वहां थे। किन्तु किंचित भी आवेष, रोष कर वातावरण भगवान की तरफ से नहीं हुआ था। दो श्रमण गोशालक के सामने आये भी किन्तु उनके व्यवहार में आवेश या आवेग का नामोनिशान भी नहीं था केवल शिक्षा वचन संबोधन था। उनके मरण प्रसंग को प्रत्यक्ष आंखों के सामने देखते हुए भी किसी ने आवेश का व्यवहार, धमकी, बदला लेना आदि कुछ भी नहीं किया।

यह है जिनवाणी के आराधकों की क्षमता, शांति का अद्भुत संदेश। यही संदेश हमारे जीवन में उतर जायेगा और उससे सच्ची शांति उत्पन्न होगी, तभी हमारा जिनवाणी प्राप्त करना, सच्चे अर्थों में सफल होगा।

गोशालक ने अनेक गाली गलोच, अनर्गल बकवास, क्रोधांध होकर किये। उसमें से किसी का भी जवाब सर्वानुभूति या सुनक्षत्र अणगार ने अथवा भगवान ने नहीं दिया अर्थात् उसकी बराबरी नहीं की किन्तु केवल सीमित शब्दों में उचित शिक्षा और सत्य कथन ही किया।

8. गोशालक के वर्णन में 18भवों में संयम ग्रहण का वर्णन है किन्तु भगवती सूत्र शतक 25 में बताया गया है कि कोई भी नियंठा आठ भव से ज्यादा प्राप्त नहीं होता है। सामायिक आदि चारित्र भी आठ भव से अधिक भव में नहीं हो सकते। अतः अभवी के संयम क्रियाराधन से नवगैवेयक में अनंतबार जाने के समान ही ये पूर्व के दस भव समझ लेने चाहिये और बाद के आठ भव संयम सहित अवस्था के समझने चाहिये। सूत्र में द्रव्य क्रिया की अपेक्षा ही ''विराधित श्रामण्य'' कहा गया है, ऐसा मानना चाहिये।

9. नृसंश प्रवृत्तियों से युक्त जीवन होते हुए भी गोशालक का जीवन महातपस्वी जीवन था एवं अंतिम समय में सम्यक्त्व युक्त शुद्ध परिणाम आ गये थे, जिस कारण से ही उसे अनंतर देव भव एवं परंपर मनुष्य भव में पुण्य का उपभोग प्राप्त हुआ और होगा। उसके बाद के भवों में सारे पाप कर्मों का साम्राज्य चलेगा।

10. गोशालक के मोक्ष जाने के अंतिम भव के वर्णन को औपपातिक सूत्र में वर्णित ''दृढ़ प्रतिज्ञ कुमार'' की भलावण है। किन्तु प्रतियों में भलावण देते-देते आगे उसी को ही दृढ़ प्रतिज्ञ नाम से कह दिया गया है, यह लिपि दोष मात्र है। ऐसा लिपि दोष अन्य सूत्र में भी हुआ है।

11. तीर्थंकर भगवान केवल ज्ञान के बाद भी श्रमणों के पात्र में नहीं खाते थे किन्तु उनसे मंगा कर हाथ में ही आहार करते थे।

12. भगवान के औषध ग्रहण का पाठ लिपिकाल में किसी भी दुर्बुद्धि मानसों के द्वारा विकृत किया गया है और कूर्कट मासं, कबूतर मांस ऐसे अर्थ वाले शब्दों को संयोजित किया गया है। ऐसे भ्रमपूर्ण अर्थ वाले शब्दों को गणधर रचित मानना एक भ्रम है, गहरी भूल है, चाहे कितने ही वनस्पति परक अर्थ किये जाय किन्तु शब्द और भाषा के कोविद (निष्णात) गणधरों द्वारा ऐसे भ्रममूलक शब्दों का गुंथन शास्त्र में मानना ही अपने आप में अयोग्य निर्णय है। मध्य काल में ऐसे अनेकों प्रक्षेप आदि के प्रहार धर्म एवं आगमों पर हुए हैं। उसी में की यह एक विकृति है। इसका संशोधन नहीं करना, मानो लकीर के फकीर बनने की उक्ति को चरितार्थ करने के समान ही है।

जैन आगम संपादकों, संशोधकों, अन्वेषकों को इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये। विशेष जिज्ञासा हेतु आगम निबंधों का अध्ययन करना चाहिये।

13. चौथे आरे में अर्थात् सतयुग में तीर्थंकरों की उपस्थिति में ऐसी घटनाएं हो जाने पर भी धर्मनिष्ठ लोग अपनी श्रद्धा टिकाए रखते थे, धर्म से पलायन नहीं करते थे। तो आज पँचम काल में ज्ञानियों की अनुपस्थिति में कोई घटित को देखकर हमें किसी के पीछे अपनी श्रद्धा, आचरण, त्याग तप आदि किंचित भी नहीं छोड़ना चाहिए और न ही कभी किं कर्त्तव्य विमूढ़ बनना चाहिए। यह संसार है इसमें कई होनहार होते ही रहते हैं। हमें गिरना नहीं अपितु चढ़ना ही सीखना चाहिए।

14. सौगंध शपथ दिलाने की व्यवहारिक प्रथा भी प्राचीन काल से चली आ रही है। गोशालक ने भी मरते समय अपने शिष्यों को सौगंध दिला कर आदेश दिया था। जिसका कि उन्होंने दंभ के साथ पालन किया था। सही रूप में पालन नहीं किया था।

15. गोशालक के निमित्त ज्ञान, आडम्बर एवं मन की बात को जानकर बताने की क्षमता से ही उसका शिष्य परिवार बढता गया था। यहां तक कि 23 वें तीर्थंकर के शासन के अनेक साधु भी उसे 24 वां तीर्थंकर ही समझ कर उसके शासन में मिल गये थे।

16. संक्षिप्त सारांश का लक्ष्य होने से अनेक विस्तृत वर्णन यहां नहीं दिये गये हैं, उसके लिये सूत्र वर्णन से जानना चाहिये। यथा- 8चरम, पानक, अपानक, गोशालक के शरीर परिवर्तन एवं विविध प्ररूपणाएं, कालमान प्ररूपणा, गंगा-प्रतिगंगा नदियों की विस्तृत प्ररूपणा आदि।

17. गौशालक भगवान के पास छद्मस्थ काल के दूसरे चौमासे में आया था, और कब तक रहा यह वर्णन यहां सूत्र में नहीं है। अन्यत्र दीक्षा के छट्ठे वर्ष तक साथ रहने का कथन मिलता है।

18. गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान ने गोशालक का भूत भविष्य वर्णन बताया था और वर्तमान घटना को तो उपस्थित श्रमणों ने प्रत्यक्ष देखा था। भूतकाल के छद्मस्थ काल की घटना के वर्णन करते हुए भगवान ने अनेक जगह

''अहं'' शब्द के प्रयोग से कथन किया है। वेश्यायन तपस्वी की तेजोलेश्या से गोशालक को बचाने के वर्णन में भी भगवान ने गौतम स्वामी से स्पष्ट कहा कि हे गौतम ! तब ''मैंने'' गोशालक मंखलिपुत्र की अनुकंपा के लिये शीत लेश्या से तेजोलेश्या का प्रतिहनन किया और आगे के वर्णन में गोशालक के पूछने पर उसको भी इन्हीं शब्दों में कहा कि- तब हे गोशालक ''मैंने'' तेरी अनुकम्पा के लिये वैश्यायन बाल तपस्वी की तेजोलेश्या को बीच में ही प्रतिहत किया। यों ऐसा कथन भी भगवान ने केवली अवस्था में दो बार किया। किन्तु कहीं यह नहीं कहा कि ''मैंने गोशालक को छद्मस्थता की भूल से मोहवश बचाया।'' अतः अनुकम्पा तो सर्वत्र आदरणीय ही समझनी चाहिये। अनुकंपा सम्बन्धी विवरण के लिये छेद सूत्र परिशिष्ठ देखना चाहिये।

19. भगवान और गोशालक के बीच हुए कई व्यवहारों से तर्क शील मानस में कई उलझन पूर्ण प्रश्न खड़े होते हैं- 1. चार ज्ञान सम्पन्न भगवान ने उसे अपने साथ रखा ही क्यों? 2. तिल सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर ही क्यों दिया जिससे विराधना हुई, 3. स्वतः अपने ही कर्त्तव्य से वह गोशालक वैश्यायन बाल तपस्वी की तेजोलेश्या से मर रहा था, उसे शीत लेश्या से भगवान ने बचाया ही क्यों? सुनक्षत्र और सर्वाणुभूति अणगार को बचाया नहीं तो इसमें भगवान को क्या दोष लगा? कुछ भी दोष नहीं लगा। इसी तरह गोशालक को नहीं बचाते तो भी भगवान को कोई दोष नहीं लगता। बचाने से तो वह जीवित रहा और स्वतः ही 24 वां तीर्थंकर बना, कितने ही लोगों को भ्रमित किया महा पाप किये।

जैसे सुमंगल अणगार विमलवाहन को भस्म करेगा ही और अणुत्तर विमान में जायेगा। वैसे ही कोई भगवान के लब्धिधारी श्रमण गोशालक को पहले ही कभी भी कुछ भी शिक्षा दे सकते थे। समवसरण में ऐसा प्रसंग आता ही नहीं। अनेक इन्द्र आदि भी गोशालक के प्रपोगंडों को रोक नहीं सके, ऐसा क्यों? जबकि सभी इन्द्र सम्यग्दृष्टि है, दृढधर्मी है, प्रियधर्मी है, एक भव करके मोक्ष जाने वाले हैं।

इत्यादि अनेकानेक प्रश्नों का समाधान यही है कि भगवान और गोशालक का कुछ ऐसा ही संयोग निबद्ध था। विशिष्ट ज्ञानियों के आचरणों के विषय में छद्मस्थों को संकल्प विकल्प करना ही नहीं चाहिये। क्योंकि वे शाश्वत ज्ञानी भवितव्यता को देख लेते हैं। भूत भविष्य को जानकर ही तदनुरूप वैसा आचरण करते हैं। यथा सुमंगल अणगार ने भी पहले ज्ञान से देखा कि यह राजा ऐसा दुर्व्यवहार क्यों कर रहा है, इसका भूत भविष्य क्या है? इसी प्रकार भगवान ने एवंता को दीक्षा दी। भले ही उसने कच्चे पानी में पात्री तिराई। जमाली को दीक्षा तो दे दी किन्तु अलग विचरण की आज्ञा मांगने पर मौन रखी इत्यादि ज्ञान में फरसना देख कर ही वे प्रवृत्ति करते हैं। छद्मस्थों के तर्क की यहां गति नहीं होती है। अतः ऐसे ऐसे विविध प्रश्न हमारे अनधिकार गत है। निश्चय ज्ञानियों का प्रत्येक व्यवहार ज्ञान सापेक्ष होता है और हमारा छद्मस्थों का व्यवहार बुद्धि सापेक्ष होता है एवं सूत्र सापेक्ष होता है। यह भिन्नता जानकर ज्ञानियों के ज्ञान सापेक्ष आचरणों सम्बन्धी उक्त प्रश्नों का या ऐसे और भी अन्य प्रश्नों का समाधान स्वतः कर लेना चाहिये।

20. भगवान पार्श्वनाथ के 6विशिष्ट शिष्यों को यहां दिशाचर शब्द से कहा गया है। वे पूर्वों के ज्ञाता थे उन्होंने जीवन में दिशा की प्रमुखता से कोई विशिष्ट तप ध्यान या विहार चर्या का आचरण किया होगा, जिससे वे दिशाचर के नाम से विख्यात हुए। उन्हीं के आगमन से गोशालक की शक्ति में विशेष अभिवृद्धि हुई, ऐसा सूत्र वर्णन से आभास होता है। अतः ये कोई विशिष्ट चमत्कारी ज्ञानी एवं लब्धि सम्पन्न श्रमण थे। अर्थ करने वाले कई विद्वान इन्हें भगवान महावीर के शिथिलाचारी पार्श्वस्थ श्रमण कह देते हैं, उनका यह कथन अनुपयुक्त एवं असंगत है।

21. मंख जाति के भिक्षाचर लोग भी चातुर्मास में भ्रमण नहीं करते थे और भिक्षाचर होते हुए भी सपत्नी भ्रमण करते थे एवं चित्रफलक दिखा कर भिक्षा प्राप्त करते थे।

सोलहवां शतक

पहला उद्देशक–

1. एरण पर हथोड़े की चोट लगाना आदि ऐसी कोई भी प्रवृत्ति करने पर अचित्त वायु उत्पन्न होती है, उससे सचित्त वायु की हिंसा होती है, फिर बाद में वह अचित्त वायु भी सचित्त हो जाती है। फिर वे जीव दूसरी अचित्त वायु के स्पर्श होने पर मरते हैं।

2. अग्नि भी वायु बिना नहीं जलती है। अग्नि के जीवों की उम्र तीन दिन रात की होती है। फिर वहां दूसरे अग्नि के और वायु के जीव उत्पन्न होते रहते हैं। तभी अग्नि लम्बे समय तक जलती है।

3. भट्टी में तप्त लोहे को इधर-उधर करने पकड़ने में लुहार को तथा काम आने वाले सभी उपकरणों को और भट्टी के जीवों को पांच क्रिया लगती है। एरण पर रखकर कूटते समय लुहार शाला एवं उपयोगी सभी उपकरणों के जीवों को और लुहार को पांच क्रिया लगती है।

4. जीव अधिकरणी है और इन्द्रिय आदि अधिकरणों से कथंचित अभेद की दृष्टि से अधिकरण भी है। साधिकरणी है निरधिकरणी नहीं। आत्माधिकरणी आदि तीनों हैं, चौबीस दंडक के जीव भी अविरति की अपेक्षा साधिकरणी आदि है। 5 शरीर, 5 इन्द्रिय 3 योग ये अधिकरणी है। जिस दंडक में जो है वे उसके निवर्त्तन में अधिकरणी होते हैं।

दूसरा उद्देशक–

1. ''जरा '' शारीरिक दुःख पीड़ा को कहते हैं। ''शोक'' मानसिक दुःख को कहते हैं। अतः एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय में जरा है, शोक नहीं है। शेष दंडकों में दोनों हैं।

2. श्रमणों के 5 प्रकार का अवग्रह होता है- 1. देवेन्द्र का, 2. राजा का, 3. गाथापति का, 4. शय्यातर का, 5. साधर्मिक श्रमणों का। ये पांच प्रकार के अवग्रह जानकर प्रथम देवलोक के इन्द्र शक्रेन्द्र ने भगवान को सभी श्रमणों के लिये अपने आधिपत्य के दक्षिण लोक में अर्थात् भरत क्षेत्र में विचरण करने की एवं कल्पनीय पदार्थों की आज्ञा दी एवं वंदन नमस्कार करके चला गया।

3. देव और इन्द्र सत्य आदि चारों भाषा बोलते हैं। सावद्य निर्वद्य दोनों भाषा बोलते हैं।

4. शक्रेन्द्र या अन्य कोई भी व्यक्ति वस्त्र से मुंह कपड़े से ढ़के बिना बोलता है, तो उसकी वह भाषा ''सावद्य भाषा'' कही गई है।

5. शक्रेन्द्र भवी और एक भवावतारी है।

6. कर्म चैतन्य कृत होते हैं अतः कर्मों से होने वाला सुख दुःख भी चैतन्यकृत ही है।

तीसरा उद्देशक–

1. कर्म प्रकृति आदि का वर्णन प्रज्ञापना पद 23 से 27 तक के अनुसार जानना चाहिये।

2. अभिग्रहधारी आतापना लेने वाले खड़े रहे हुए भिक्षु को कोई वैद्य सुलाकर नासिका में से अर्श-मस्से का छेदन करे तो काटने सम्बन्धी क्रिया वैद्य को लगती है। मुनि को केवल धर्म-ध्यान में अंतराय होता है। वैद्य को शुभ भावना होने से शुभक्रिया लगती है।

चौथा उद्देशक-

1. नीरस अंत प्राप्त अमनोज्ञ आहार करने वाला श्रमण जितने कर्मों का क्षय करता है नैरयिक सौ वर्ष में उतने कर्म अपार दुःख भोगते हुए भी क्षय नहीं कर सकता। इसी प्रकार उपवास- हजार वर्ष। बेला= लाख वर्ष। तेला = करोड़ वर्ष। चौला = क्रोड़ा क्रोड़ वर्ष में भी नैरयिक (तप के बराबर) कर्म क्षय नहीं कर सकता है।

अण्ण गिलाय = वासी, अमनोज्ञ आहार ऐसा अर्थ समझना चाहिये। औपपातिक सूत्र आदि से भी यही अर्थ परिलक्षित होता है। मति भ्रम से इस शब्द के अनुपयुक्त अर्थ किये जाते हैं वे अनुभव चिंतन से उपेक्षित अर्थ है। ऐसा समझना चाहिये।

वृद्ध पुरुष के द्वारा चिकनी गंठीली लकड़ी काटने के दृष्टांत से समझना चाहिये कि नैरयिक उतने कर्मों को क्षय नहीं कर सकता है क्योंकि उसके कर्म चिकने प्रगाढ़ होते हैं। जैसे जवान पुरुष तीक्ष्ण कुल्हाड़े से शीघ्र ही लकड़ी का छेदन-भेदन कर देता है, उसी प्रकार तपस्वी श्रमण भी कर्मों को शीघ्र नष्ट कर देते हैं।

पांचवा उद्देशक-

1. एक समय की बात है कि शक्रेन्द्र भगवान के दर्शन करते उल्लूकातीर नामक नगर में आया। तब उसने कुछ प्रश्न किये और उतावल से चला गया जब कि अन्य कभी भी आता है तब शांति से बैठता है। इसका कारण गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान ने बताया कि सातवें देवलोक के गंगदत्त देव यहां आने के लिये रवाना हुआ है, उसके दिव्य तेज ऋद्धि द्युति को शक्रेन्द्र देख नहीं सकने से, सहन नहीं कर सकने से, उतावल से चला गया है। नहीं देख सकने का कारण व्याख्याकार ने यह बताया कि पूर्व भव में दोनों सेठ थे- कार्तिक सेठ और गंगदत्त सेठ। वहां दोनों में परस्पर मात्सर्य भाव रहता था। पूर्व के मात्सर्य भाव के कारण शक्रेन्द्र को गंगदत्त की अपने से अधिक ऋद्धि सहन नहीं हुई और आतुरता से चला गया।

2. इन्द्र आदि देव मनुष्य लोक में- 1. आना, 2. वापिस जाना, 3. भाषा बोलना, 4. उन्मेष-निमेष करना, 5. अंगोपांग का संकोच विस्तार करना, 6. खड़ा होना बैठना, व सोना, 7. वैक्रिय करना, 8. परिचारणा करना आदि क्रियाएं बाहर के पुद्‌गलों के ग्रहण से कर सकते हैं अर्थात् अन्य पुद्‌गल ग्रहण करने पर ही उक्त क्रियाएं देवों के द्वारा की जा सकती है।

3. देवलोक में देवों के तात्त्विक चर्चाएं भी हो जाती है। सातवें देवलोक में एक मिथ्या दृष्टि देव और गंगदत्त सम्यग् दृष्टि देव के आपस में चर्चा हुई। इसके फलस्वरूप ही वह गंगदत्त देव भगवान के दर्शन करने उल्लुकातीर नगर में आया था।

4. ''चलमाणे चलिये'' सिद्धांत के अनुसार, परिणमन होते हुए पुद्‌गल ''परिणत'' कहलाते हैं। इसी विषय पर उक्त दोनों की चर्चा थी। गंगदत्त का उत्तर सही था। गंगदत्त देव ने भगवान का उपदेश सुना तदनंतर मैं भवी हूं या अभवी इत्यादि प्रश्न पूछे। समाधान पाकर खुश हुआ। बत्तीस प्रकार के नाटक दिखाकर चला गया।

5. गंगदत्त देव पूर्व भव में हस्तिनापुर में गंगदत्त नाम का सेठ था। श्रमणोपासक था। फिर मुनिसुव्रत भगवान के पास दीक्षा ली। ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। एक महीने का संथारा प्राप्त हुआ। वहां से सातवें देवलोक में उत्पन्न हुआ। सतरह सागरोपम की देव उम्र पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्र से मुक्त होगा।

छट्ठा उद्देशक-

1. निद्रा में या जागृत अवस्था में स्वप्न नहीं आता है, अर्द्ध जागृत अवस्था में स्वप्न आते हैं।

2. निद्रा लेना द्रव्य निद्रा है अविरति-भाव भावनिद्रा है। भाव-निद्रा की अपेक्षा 22 दंडक के जीव सुप्त कहे गये हैं। तिर्यंच सुप्त-जागृत और सुप्त दो तरह के हैं और मनुष्य सुप्त, जागृत एवं सुप्त-जागृत यों तीनों तरह के हैं।

3. साधु भी स्वप्न देखते हैं। सत्य स्वप्न भी देखते हैं, असत्य स्वप्न भी देखते हैं। सच्ची भाव साधुता में सत्य स्वप्न ही आते हैं अथवा तो नहीं आते हैं। असत्य स्वप्न देखने वाला असंवृत कहा गया है। अर्थात् उसके विशेष आश्रव चालू रहता है। एकांत असंयमी नहीं समझना।

4. स्वप्न 42 प्रकार के कहे गये हैं और महास्वप्न 30 कहे गये हैं। 30 महास्वप्न में से कोई भी 14 स्वप्न तीर्थंकर, चक्रवर्ती के गर्भ में आने पर उन की माता देखती है। वासुदेव की माता सात, बलदेव की माता चार स्वप्न देखती है। मांडलिक राजा की माता एक महास्वप्न देखती है। ये माताएं स्वप्न देखकर जागृत होती है। फिर पुनः नहीं सोती है, धर्म जागरणा करती है।

5. भगवान महावीर स्वामी को दस स्वप्न देखने के बाद केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था। बैठे बैठे ही भगवान को अंतर्मुहूर्त मात्र निद्रा आई थी उस समय अर्द्ध निद्रावस्था में ये स्वप्न देखे थे क्योंकि छद्मस्थ काल में भगवान ने शयनासन नही किया था।

दस स्वप्न परिणाम–

1. पिशाच को पराजित किया	-	मोह कर्म क्षय
2. सफेद नर कोयल	-	शुक्लध्यान
3. विचित्र पंख वाला नर कोयल	-	द्वादशांग प्ररूपण
4. स्वर्ण रत्न मय माला द्वय	-	द्विविध धर्म प्ररूपण
5. श्वेत गो वर्ग	-	चतुर्विध संघ रचना
6. महापद्म सरोवर	-	चार जाति के देवों का प्ररूपण
7. महासागर भुजा से तिरे	-	संसार सागर से तिरे
8. सूर्य	-	केवल ज्ञान प्राप्ति
9. मेरू पर्वत को आंतों से परिवेष्टित	-	सम्पूर्ण लोक में यश कीर्ति फैली।
10. मेरू चूलिका पर सिंहासन पर बैठे	-	परिषद् ने उपदेश दिया।

6. कुछ स्वप्न फल विज्ञान–

1. सोया हुआ व्यक्ति हाथी, घोड़ा या बैल समूह को देखकर उस पर चढ़ता है, चढ़ कर अपने को बैठे हुए देखता है, फिर जाग जाता है। वह उसी भव में मोक्ष जाता है। (जो सोया रह जाता है तो यह फल नहीं होता है। ऐसा सभी स्वप्नों में समझ लेना चाहिये), 2. जो व्यक्ति स्वप्न में महासमुद्र में पूर्व से पश्चिम फैली रस्सी को देख कर अपने हाथ में समेटता है। 3. लोकांत को पूर्व पश्चिम स्पर्श की हुई रस्सी को काटे, 4. काले या सफेद सूत के उलझे गुच्छे को सुलझावे ''मैंने सुलझा दिया'' ऐसा माने, 5. सोने-चांदी वज्र और रत्न राशि को देखे, 6. घास-कचरे के ढ़ेर को देखे और उसे बिखेर दे, 7. सरस्तंभ, वीरणस्तंभ, वंशस्तंभ, वल्लिस्तंभ (तना) को देख कर उखाड़ फेंके, 8. क्षीर कुंभ, घृत कुंभ, दधि कुंभ को देखे और उठावे, 9. पुष्प युक्त पद्म सरोवर में उतरे, 10. महासागर को देखे और उसे तैर कर पार करे, 11. रत्नों का भवन देखें और उसमें प्रवेश करें, 12. रत्नों का विमान देखें और उस पर चढ़ जाए। इस प्रकार के स्वप्न युक्त अपने को देखे माने और जागृत हो जाय, उठ जाय, वह व्यक्ति उसी भव में मोक्ष जाता है।

तेल, मदिरा, चर्बी के कुंभ देखे एवं फोड़ डाले और लोहे, तांबे, कथीर, शीशे के ढ़ेर को देखे एवं उस पर चढ़े। ये दो स्वप्न देखने वाला एक देव का और एक मनुष्य का भव करके मोक्ष जाता है।

7. कोई सुगंधी पदार्थ पड़े हैं और वायु चली तो सुगंधी पदार्थ नहीं चलते किंतु गंध के पुद्‌गल वहां से गति करते हैं व फैलते हैं।

उद्देशक 7-8-

1. प्रज्ञापना का उपयोग पद और पश्यता पद को सम्पूर्ण यहां समझना।

2. लोक के 6दिशाओं में चरमांत में जीव, अजीव, जीवदेश, प्रदेश, अजीव देश, प्रदेश रहे हुए हैं। उसी प्रकार सात नरक के पृथ्वी पिंडो के, देवलोकों के चरमांत में भी जीव अजीव रहे हुए हैं। एकेन्द्रियादि की अपेक्षा पांच स्थावर तो स्वस्थान रूप से रहे हुए हैं और त्रस जीव वाटे बहेता और मरण समुद्‌घात की अपेक्षा होते हैं। अनिंद्रिय जीव केवली समुद्‌घात की अपेक्षा होते हैं। नरक पृथ्वी के चरमांत में एवं देवलोकों में चरमांत में भी यथा योग्य संभव जीव, अजीव, उनके देश, प्रदेश में समझ लेना चाहिये। काल द्रव्य चरमांतो में नहीं है।3. परमाणु पुद्‌गल एक समय में लोक के पूर्वी चरमांत से पश्चिमी चरमांत तक स्वतः चला जाता है। इस तरह सभी दिशा में समझना।

4. वर्ष की जानकारी के लिये कोई हाथ को खुले आकाश में निकाल करके देखे तो पांच क्रिया लगती है।

5. कोई महर्द्धिक देव भी लोकांत में बैठ कर अलोक में हाथ पैर आदि नहीं निकाल सकता है। क्योंकि अलोक में धर्मास्तिकाय आदि नहीं है, वहां पर जीव और पुद्‌गल की गति नहीं होती है।

उद्देशक 9 से 14-

1. वैरोचन बलीन्द्र की बलि चंचा राजधानी उत्तर दिशा में है। शेष समुद्र दूरी, उत्पात पर्वत, राजधानी का विस्तार, सभा आदि वर्णन असुर कुमार चमरेन्द्र के वर्णन के समान है। देखें श. 2 उद्दे. 8

2. अवधिज्ञान का वर्णन प्रज्ञापना एवं नंदी सूत्र में देखें।

3. द्वीप कुमार देव सभी समान आहार वाले आदि नहीं होते हैं यह वर्णन पहले शतक के दूसरे उद्देशक के समान है। इसमें चार लेश्याएं होती है। तेजोलेश्या वाले अल्प होते हैं। उससे कापोत लेशी असंख्य गुणा, उससे नीललेशी विशेषाधिक, उससे कृष्णलेशी विशेषाधिक होते हैं। कृष्णलेशी अल्पर्द्धिक होते हैं फिर क्रमशः तेजोलेशी महर्द्धिक होते हैं।

उदधिकुमार, दिशाकुमार, स्तनित कुमार का वर्णन भी इसी तरह है।

सतरहवां शतक

पहला उद्देशक-

1. कोणिक राजा के दो प्रधान हाथी थे- 1. उदाई हस्तीरत्न, 2. भूतानंद हस्तीरत्न। दोनों असुरकुमार देवों से आकर जन्मे थे और मर कर के प्रथम नरक में जायेंगे वहां से महाविदेह में एक भव कर के मुक्त होंगे। यह उत्तर गौतम स्वामी के द्वारा राजगृही में भगवान को पूछने पर मिला था।

2. कोई व्यक्ति वृक्ष को हिलावे गिरावे तो उसे पांच क्रिया लगे। हिलने वाले ताड़ वृक्ष के शाखा, फल आदि के जीवों को भी पांच क्रिया लगे। तोड़ने के बाद जब फल या वृक्ष अपने भार से नीचे गिरता है तो पुरुष को चार क्रिया लगती है, वृक्ष आदि के जीवों को पांच क्रिया लगती है।

3. जीव को औदारिक शरीर आदि बनाते समय एवं उसका प्रयोग करते समय 3-4 या 5 क्रिया भजना से लगती है।

4. भाव 6 है- 1. औदयिक, 2. औपशमिक, 3. क्षायिक, 4. क्षयोपशमिक, 5. पारिणामिक, 6. सन्निपातिक मिश्र। इनका विशेष वर्णन अनुयोग द्वार सूत्र सारांश में देखें।

दूसरा उद्देशक-

1. **संयत-** विरत जीव धर्म में स्थित है, **असंयत-** अविरत जीव अधर्म में स्थित है अर्थात् वह धर्म आदि को स्वीकार करके रहने वाला है। समुच्चय जीव और मनुष्य में तीनों भेद है। तिर्यंच में दो भेद है। शेष दंडक में एक अधर्म स्थित ही है।

2. असंयत जीव बाल कहे जाते हैं, संयत जीव पंडित कहे जाते हैं और संयता-संयत जीव बाल पंडित कहे जाते हैं। 24 दंडक में धर्म-अधर्म के समान जानना।

3. अठारह पाप में, पाप की विरति में, चार बुद्धि में अवग्रहादि मतिज्ञान में, चार गति में, आठ कर्म में, लेश्या दर्शन, ज्ञान अज्ञान, संज्ञा, शरीर योग उपयोग में वर्त्तता हुआ जीव और जीवात्मा एक ही है अन्य नहीं। अन्यतीर्थिक (सांख्य मतावलंबी) प्रकृति और जीवात्मा को एकांत भिन्न मानते हैं। जैन सिद्धांत से कथंचित भेद स्वीकार किया जा सकता है किन्तु आत्यंतिक भेद नहीं माना जा सकता।

4. देवता रूपी रूप की विक्रिया कर सकते हैं अरूपी रूप वे नहीं बना सकते। किन्तु सामान्य मनुष्यों को न दिखे वैसा रूप बना सकते हैं वास्तव में तो वह भी रूपी ही होता है।

जीव पहले रूपी है। फिर केवली बनकर अरूपी बन सकता है। किन्तु कोई अरूपी सिद्ध होकर फिर रूपी संसारी नहीं बन सकता।

तीसरा उद्देशक-

1. शैलेशी अवस्था में रहा अणगार कम्पन्न, स्पंदन गमनादि नहीं करता है किन्तु पर प्रयोग की अपेक्षा शरीर का गमनादि हो सकता है अर्थात् कोई धक्का दे, गिरा दे, कहीं डाल दे, पानी में बहा दे इत्यादि प्रसंग से शरीर गतिमान होता है।

यह कम्पन्न (एजन) आदि 5 प्रकार का है, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भव ये पांचों चार गति की अपेक्षा चार-चार प्रकार के हैं।

सामान्य गतिमान होने को एजन (कंपन्न) कहा गया है और विशेष एजन को चलन कहा गया है। चलन के मुख्य तीन प्रकार एवं उसके 13 भेद हैं- 5 शरीर चलन, 5 इन्द्रिय चलन, 3. योग चलन- इन इन रूपों में पुद्‌गलों को परिणमन करना जीवों की चलना है।

2. संवेगादि 49 बोलों का अंतिम फल मोक्ष कहा गया है अर्थात् ये सभी गुण मोक्ष साधना में सहायक एवं गति देने वाले हैं। साधक को साधना काल में इन गुणों की वृद्धि एवं संरक्षण करते रहना चाहिये यथा-1. संवेग-वैराग्य भाव, 2. निर्वेद त्याग भाव, 3. गुरु आदि की सेवा। 4.स्व आलोचना, 5. स्वनिंदा, 6. स्वगर्हा, 7. क्षमापना भाव, 8. सुखशाता-अनुत्सुकता = उतावल रहितता = शांत भाव से प्रवर्त्तन, 9. उपशांतता। (सुखशाता में शारीरिक प्रवृत्तियों में शांति होती है उपशांतता मे मानसिक प्रवर्त्तन में शांति एवं गम्भीरता होती है।), 10. भाव अप्रतिबद्धता = अनासक्ति भाव, 11. पाप की पूर्ण निवृत्ति, = अक्रिय, 12.विविक्त शय्या सेवन, 13-17 पांच इंद्रिय संवर, 18-23 योग, शरीर, कषाय, संभोग, उपधि और भक्त का प्रत्याख्यान, 24. क्षमा, 25. वीतराग भाव, 26-28 भावों की करण की एवं योग सत्यता, 29-31. मन वचन काया का सम्यक् अवधारण (वश में रखना), 32-44 क्रोधादि 13 पाप का त्याग, 45-47. ज्ञान, दर्शन, चारित्र से सम्पन्न होना, 48. रोगादि की वेदना सहिष्णुता, 49. मारणांतिक कष्ट उपसर्ग में सहिष्णुता।

चौथा पांचवां उद्देशक-

1. प्राणातिपात आदि पांच पाप से स्पृष्ट होने पर जीव कर्म बंध करते हैं। शेष वर्णन पहला शतक छट्ठे उद्देशक के समान है अर्थात् कितनी दिशा से कर्म ग्रहण आदि होते हैं। 2. जिस समय में, 3. जिस क्षेत्र में और, 4. जिस प्रदेश में जीव प्राणातिपात आदि करता है वहां स्पृष्ट कर्मों का बंध करता है।

2. कर्मों के उदय से उत्पन्न दुःख स्वकृत दुःख है, उसका ही जीव वेदन करते हैं परन्तु पर कृत दुःख (कर्म का वेदन) नहीं होता है।

वेदना (पर निमित्त जन्य दुःख) भी अन्यकृत नहीं किन्तु स्वकृत कर्म जन्य ही होती है। वह साता असाता दोनों प्रकार की होती है।

3. इशानेन्द्र की सुधर्मा सभा का वर्णन शक्रेन्द्र की सुधर्मा सभा के समान है। दसवां शतक छट्ठा उद्देशक देखें। स्थिति साधिक दो सागरोपम की होती है।

उद्देशक 6-17 तक-

1. समवहत मरने वाले जीव का पहले आहार और फिर उत्पात होता है। असमवहत मरने वाले जीव का पहले उत्पात फिर आहार होता है। क्योंकि एक साथ आत्म प्रदेश पहुंचते हैं उसके बाद ही आहार होता है। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों का रत्नप्रभा आदि से सिद्ध शिला तक में आहार और उत्पाद (उत्पत्ति) जानना चाहिये।

2. इसी तरह अपकाय, वायुकाय, जीवों का अधो लोक से ऊर्ध्व लोक और ऊर्ध्व लोक से अधोलोक तक उत्पाद व आहार जानना चाहिये।

3. एकेन्द्रिय के सम विषम आहार शरीर आदि का वर्णन प्रथम शतक के दूसरे उद्देशक के समान है।

नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युतकुमार, वायुकुमार और अग्निकुमार इन पांचों का समआहार आदि सम्बन्धी वर्णन 16 वें शतक के 11 वें उद्देशक में आये द्वीपकुमार के वर्णन के समान जानना चाहिये।

अठारहवां शतक

पहला उद्देशक-

1. जो भाव अनादि से होता है उसे ''अपढम'' कहा जाता है। जो भाव जहां पहली बार होता है, वह भाव उस स्थान की अपेक्षा ''पढम'' कहा जाता है। जो भाव जहां कई जीवों में पहली बार और कई जीवों में दूसरी तीसरी यावत् संख्यातवीं बार आदि भी होता है उसे ''सिय पढमं सिय अपढमं'' कहा जाता है अर्थात् उभय भाव वाला कहा जाता है।

2. जो भाव जिस स्थान में अब फिर नहीं आने वाला है उसे ''चरम'' कहा जाता है। जो भाव जहां सदा रहने वाला है या पुनः होने वाला है उसे ''अचरम'' कहा जाता है। जो भाव जहां किसी जीव में चरम है किसी जीव में अचरम है, वह भाव स्थान की अपेक्षा ''सिय चरम सिय अचरम'' अर्थात् उभय भाव कहा जाता है।

14 द्वारों के 93 बोलों का 24 दंडक समुच्चय जीव और सिद्धों की अपेक्षा पढम अपढम चरम अचरम का वर्णन किया गया है। वे द्वार इस प्रकार हैः-

	द्वार	भेद विवरण	भेद संख्या
1.	जीव	24 दंडक, जीव, सिद्ध	26
2.	आहारक	आहारक, अनाहरक	2
3.	भवी	भवी, अभवी, नो भवी	3
4.	सन्नी	सन्नी, असन्नी, नो सन्नी	3
5.	लेश्या	सलेशी, 6 लेश्या, अलेशी	8
6.	दृष्टि	सम्यग्, मिथ्या, मिश्र	3
7.	संयत	संयत, असंयत, संयतासंयत, नो संयत	4
8.	कषाय	सकषायी, 4 कषाय, अकषायी	6
9.	ज्ञान	5 ज्ञान, 3 अज्ञान, सणाणी, अणाणी	10
10.	योग	सयोगी, 3 योग, अयोगी	5
11.	उपयोग	साकार, अणाकार	2
12.	वेद	सवेदी, 3 वेद, अवेदी	5
13.	शरीर	5 शरीर, अशरीरी	6
14.	पर्याप्ति	5 पर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति	10
		योग	**93**

चार्ट सम्बन्धी सूचना- 1. ''सभी'' ऐसा शब्द जहां है उस का अर्थ है जितने दंडक और समुच्चय जीव जो भी वहां पावे वे समझना।

2. ''दो बोल या तीन बोल'' जीव सिद्ध और मनुष्य में से दो या तीन समझना।

3. ''25 बोल या 24+1'' = समुच्चय जीव 24 दंडक। इसी प्रकार 19+1 आदि भी दंडक +जीव समझ लेना।

4. ''नो सन्नी0'' = नो सन्नी को असन्नी। इसी प्रकार नो भवी0 नो संयत0 आदि समझ लेना।

5. 4 अज्ञान 5 कषाय आदि में समुच्चय अज्ञानी, सकषायी आदि सम्मिलित है ऐसा समझना।

14 द्वार में प्रथम अप्रथम–

द्वार	प्रथम भाव		अप्रथम भाव		प्रथम अप्रथम उभय भाव	
	बोल	जीव	बोल	जीव	बोल	जीव
1	सिद्ध	–	जीव 24 दंडक	–	–	–
2	–	–	आहारक	24–1	–	–
	अनाहारक	सिद्ध	अनाहारक	24	अनाहारक	समुच्चय जीव
3	नो भवी	सिद्ध	भवी	24–1	–	–
	–	–	अभवी	24–1	–	–
4	नो सन्नी	3 बोल	सन्नी	16–1		
	–	–	असन्नी	22–1		
5	अलेशी	3 बोल	सलेशी	सभी	–	–
			6 लेशी			
6	सम्यग्दृष्टि	सिद्ध	मिथ्यादृष्टि	24–1	सम्यग्दृष्टि	19–1
	–	–	–	–	मिश्रदृष्टि	16–1
7	नो संयत	2 बोल	असंयत	24–1	संयत	2 बोल
	–	जीव सिद्ध	–	–	संयता संयत	3 बोल
8	अकषाय	सिद्ध	5 कषाय	24–1	अकषायी	2 बोल
9	केवलज्ञान	3 बोल	4 अज्ञान	24–1	सज्ञानी 4 ज्ञान	सभी
10	अयोगी	3 बोल	सयोगी 3 योग	सभी	–	–
11	उपयोग दो	सिद्ध	उपयोग दो	24 बोल	उपयोग दो	जीव
12	अवेदी	सिद्ध	सवेदी 3 वेद	सभी	अवेदी	2 बोल
13	अशरीरी	2 बोल	सशरीरी 4 शरीर	सभी	आहारक शरीर	2 बोल
14	–	–	5 पर्याप्ति 5 अपर्याप्ति	सभी	–	–

चार्ट से इस प्रकार समझें-14 द्वारों पर चरम अचरम-

द्वार	चरम भाव		अचरम भाव		चरम अचरम उभय भाव	
	बोल	जीव	बोल	जीव	बोल	जीव
1	-	-	जीव, सिद्ध	-	24 दंडक	-
2	- -	- -	अनाहारक -	जीव, सिद्ध -	आहारक अनाहारक	25 बोल 24 बोल
3	भवी -	जीव -	अभवी नो भवी	25 बोल जीव, सिद्ध	भवी -	24 बोल -
4	नो सन्नी.	मनुष्य	नो सन्नी.	2 बोल	सन्नी असन्नी	सभी
5	अलेशी	मनुष्य	अलेशी	2 बोल	लेश्या सात	सभी बोल
6	- - -	- - -	सम्यग्दृष्टि - -	जीव, सिद्ध	सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि मिश्रदृष्टि	19 दंडक 25 बोल सभी
7	-	-	नो संयत	जीव, सिद्ध	संयत आदि 3	सभी
8	- -	- -	- अकषायी	- जीव, सिद्ध	5 कषाय अकषायी	सभी मनुष्य
9	केवलज्ञानी - -	मनुष्य - -	ज्ञानी केवलज्ञानी -	जीव, सिद्ध 2 बोल -	सज्ञानी 4 ज्ञान 4 अज्ञान	19 दंडक 19-1 सभी
10	अयोगी	मनुष्य	अयोगी	2 बोल	4 योग	सभी
11	-	-	2 उपयोग	2 बोल	2 उपयोग	24 बोल
12	- -	- -	अवेदी -	2 बोल -	4 वेद अवेदी	सभी मनुष्य
13	-	-	अशरीरी	सिद्ध	6 शरीर	सभी
14	-	-	-	-	5 पर्याप्ति 5 अपर्याप्ति	सभी बोल

दूसरा उद्देशक–

कार्तिक सेठ– हस्तिनापुर में कार्तिक नाम का सेठ रहता था जो ऋद्धि सम्पन्न था। साथ ही 1008व्यापारियों का प्रमुख था। उसने बीसवें मुनिसुव्रत स्वामी के पास श्रावक व्रत स्वीकार किये थे। अतः जीवाजीव का ज्ञाता एवं श्रमणोपासक के गुणों से युक्त भी था। उसके अनेक वर्ष श्रमणोपासक पर्याय में व्यतीत हो गये।

एक बार विचरण करते हुए भगवान मुनिसुव्रत स्वामी हस्तिनापुर में पधारे। नगर के लोग एवं कार्तिक सेठ भगवान की सेवा में उपस्थित हुए। परिषद इकट्ठी हो गई, भगवान ने वैराग्यमय प्रतिबोध दिया। कार्तिक सेठ विरक्त हो गया। दीक्षा लेने की प्रबल भावना जागृत हुई। भगवान के समक्ष अपने विचार प्रगट किये। स्वीकृति मिलने पर घर जाकर अपने अधीनस्थ व्यापारियों को बुलाया एवं अपनी इच्छा उनके समक्ष रखी। 1008 व्यापारियों ने भी कार्तिक सेठ के साथ दीक्षा लेने का निर्णय रखा। सभी ने अपने अपने पुत्रों को कार्य भार संभलाया और दीक्षा की तैयारी करके कार्तिक सेठ के साथ महोत्सव पूर्वक सभी (1009) विरक्तात्माएं एक ही समय भगवान के समवसरण में पहुंची। अपनी वैराग्य भावना के दो शब्द कार्तिक सेठ ने सभा सहित भगवान के समक्ष प्रकट किये फिर वेश परिवर्तन करके पुनः सभा में आये। भगवान मुनिसुव्रत स्वामी ने सभी को एक साथ दीक्षा पाठ पढ़ाया। उन्हें शिक्षा दीक्षा दी। महाव्रत समिति गुप्ति समाचारी का ज्ञान दिया। इस प्रकार वे सभी श्रेष्ठी अणगार बन गये।

स्थविरों के पास उन्होंने शास्त्राभ्यास किया। तप संयम से अपनी आत्मा को भावित किया।

कार्तिक सेठ मुनि ने सामायिक आदि 14 पूर्वों का अध्ययन किया, 12 वर्ष दीक्षा पर्याय का पालन कर एक महिने के संथारे से आयुष्य पूर्ण किया और प्रथम देवलोक में इन्द्र रूप में उत्पन्न हुए। शेष सभी साथी अणगार भी संयमाराधन कर वहीं प्रथम देवलोक में उत्पन्न हुए।

गंगदत्त सेठ कार्तिक सेठ का पूर्ववर्ती हस्तिनापुर का सेठ था। उसने कार्तिक सेठ के प्रमुख व्यापारी बनने पर मुनिसुव्रत स्वामी के पास दीक्षा अंगीकार की थी और आराधना करके सातवें देवलोक में उत्पन्न हुआ था। व्यापारिक जीवन में गंगदत्त सेठ से कार्तिक सेठ स्पर्धा में अग्रणी रहे होंगे। उसी कारण शकेन्द्र की गंगदत्त देव के समक्ष मिलने में असह्यता शतक 16उद्देशक 5 में दिखाई गई है।

अर्थात् गंगदत्त देव के समवसरण में आने का शक्रेन्द्र को मालुम पड़ने पर शीघ्र ही वापिस चला गया। भगवान की सेवा में रुका नहीं।

इस वर्णन में अधीनस्थ साथी व्यापारियों का एक साथ दीक्षा लेने का आदर्श उपस्थित किया गया है। उन्होंने वास्तव में सच्चा साथ निभाया था, जिससे वे देवलोक में भी साथ ही रहे।

तीसरा उद्देशक–

1. कृष्ण नील कापोत लेश्या वाले पृथ्वी, पानी, वनस्पति के जीव मनुष्य भव करके मुक्त हो सकते हैं।

अणगार के चरम निर्जरा पुद्‌गल अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं, वे सर्व लोक में फैलते हैं। उन पुद्‌गलों को जानने, देखने, आहार करने सम्बन्धी वर्णन प्रज्ञापना पद 15 से जानना।

2. प्रयोगबंध और विश्रसा बंध को द्रव्य बंध कहा गया है एवं आठ कर्म 148(120) प्रकृति का बंध भावबंध कहा गया है।

प्रयोगबंध शिथिल और गाढ़ दो तरह का है। विश्रसा बंध सादि और अनादि दो प्रकार का है। भाव बंध भी मूल प्रकृति और उत्तर प्रकृति यों दो प्रकार का है।

3. भूतकाल में जीव ने कर्म बंध किया, वर्तमान में करता है, भविष्य में करेगा, उसमें प्रति समय विभिन्नता होती है अर्थात् अंतर होता है। क्योंकि गति परिणमन सभी में अंतर आता रहता है। पाप क्रिया करने में भी द्रव्य भाव में अंतर आता है और बंध में भी अंतर आता है (24 दंडक में समझ लेना)

4. निर्जरा पुद्गल आधार रूप नहीं होते हैं, उन पर कोई बैठना आदि नहीं कर सकता है। वे सूक्ष्म परिणाम में परिणत हो जाते है।

ये माकंदिय पुत्र अणगार के द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तरों का भाव है।

नोट- प्रवाह वश मूल पाठ में बीच-बीच में ''गोयमा'' लगा दिया गया है यह लिपि दोष है। इसे नहीं सुधारना संपादकों की भूल है, कर्तव्य परायणता नहीं है, उपेक्षा वृत्ति है। यह सम्पूर्ण उद्देशक माकंदिय पुत्र अणगार के प्रश्नों का है। अतः भगवान द्वारा कहे गये उत्तरों के सम्बोधन में ''मार्गेदियपुत्ता'' ऐसा ही सर्वत्र होना चाहिये।

चौथा उद्देशक-

1. अठारह पाप, पांच स्थावर एवं बादर कलेवर, ये जीव के उपभोग में आते हैं। अठारह पाप विरति, तीन अरूपी अस्तिकाय, परमाणु, अशरीरी जीव और शैलेशी अवस्था के अणगार ये किसी के उपभोग में नहीं आते हैं।

2. चार कषाय सम्बन्धी वर्णन प्रज्ञापना पद 14 के अनुसार समझना चाहिये।

3. युग्म (जुम्मा)- 1. चार का भाग देने से जिस राशि में कुछ भी अवशेष नहीं रहे वह कृतयुग्म (कडजुम्म) राशि कही जाती हैं। 2. चार का भाग देने पर जिस राशि में तीन अवशेष रहे वह, तेओग (त्र्योज) तेउग राशि कही जाती है। 3-4 इसी प्रकार दो या एक अवशेष रहने वाली राशि क्रमशः दावर जुम्म (द्वापर युग्म) और कल्योज (कलिओग) राशि कही जाती है।

नारकी, देवता, पंचेन्द्रिय, तिर्यंच और मनुष्य जघन्य पद की अपेक्षा कडजुम्म राशि होते हैं। उत्कृष्ट पद की अपेक्षा तेओग राशि होते हैं।

विकलेन्द्रिय, चार स्थावर, जघन्य पदे कडजुम्म राशि होते हैं और उत्कृष्ट पद में द्वापर युग्म (दावर जुम्म) राशि होते हैं। मध्यम पद में सभी में चारों भंग होते हैं।

वनस्पति और सिद्ध में जघन्य और उत्कृष्ट पद (संख्या) नहीं होती है क्योंकि वनस्पति में अनंत काल तक कम होते ही रहेंगे और सिद्धों में बढ़ते ही रहेंगे। अतः मध्यम पद ही होता है उसमें चारों जुम्मा हो सकते हैं।

स्त्रियों की संख्या जघन्य और उत्कृष्ट पद में कडजुम्म होती है। मध्यम में चारों हो सकती है। देवी तिर्यंचणी एवं मनुष्यणी भी ऐसे ही जानना।

जघन्य उम्र वाले (वरा) अग्निकाय के जीव की उत्कृष्ट जितनी संख्या होती है, उत्कृष्ट उम्र वाले (परा) अग्निकाय के जीवों की भी उत्कृष्ट संख्या उतनी ही होती है।

पांचवां उद्देशक-

1. जिस तरह मनुष्य अलंकृत विभूषित होने पर सुंदर दिखता है वैसे ही देव भी विभूषित अलंकृत होने पर सुंदर दिखते हैं। वस्त्रादि से अविभूषित मनुष्य सुन्दर मनोज्ञ नहीं दिखता है वैसे ही देव भी असुंदर दिखते हैं।

2. सभी दंडकों में सम्यक्त्व में उत्पन्न होने वाले अथवा सम्यग्दृष्टि जीव अल्पकर्मी हलुकर्मी होते हैं, मिथ्या दृष्टि महाकर्मी भारी कर्मा होते हैं। सम्यग्दृष्टि के नया बंध भी अत्यल्प ही होता है। एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय जीवों को इस अपेक्षा से लगभग समकर्मी कहा गया है।

3. मरण के चरम समय में भी जीव उसी भव का आयु वेदता है। अगले भव के आयु के सम्मुख होता है किंतु उसे वेदता नहीं है।

4. सम्यग् दृष्टि जीवों के इच्छित विकुर्वणा होती है। मिथ्यादृष्टियों के संकल्प से विपरीत विकुर्वणा भी हो जाती है।

छट्ठा उद्देशक-

1. प्रत्येक पुद्गल स्कंध में व्यवहारिक नय से वर्णादि एक एक होता है। निश्चय नय से वर्णादि 20 ही बोल होते हैं यथा- व्यवहार नय से गुड -पीला, सुगंधी, मीठा आदि होता है किन्तु निश्चय नय से उसमें 5 वर्ण 2 गंध 5 रस 8 स्पर्श होते हैं।

इसी प्रकार दिखने एवं अनुभव में आने वाले सभी वस्तुओं में व्यवहार नय से या मुख्यता से 1-1 और निश्चय नय से सभी वर्णादि है ऐसा समझना चाहिये यथा-हल्दी पीली है, कौआ काला है, शंख सफेद है, नीम कड़ुवा है, मयूर कंठ नीला है इत्यादि। राख-व्यवहार से रूक्ष है फिर भी उसमें आठ ही स्पर्श है।

2. एक परमाणु में	-	1+1+1+2 = 5 वर्णादि होते हैं।
एक द्विप्रदेशी में	-	उत्कृष्ट 2+2+2+4 = 10 वर्णादि होते हैं।
एक तीन प्रदेशी में	-	उत्कृष्ट 3+2+3+4 = 12 वर्णादि होते हैं।
एक चार प्रदेशी में	-	उत्कृष्ट 4+2+4+4 = 14 वर्णादि होते हैं।
एक पांच प्रदेशी में	-	उत्कृष्ट 5+2+5+4 = 16 वर्णादि होते हैं।

इसी प्रकार असंख्य प्रदेशी तक 16 वर्णादि होते हैं। सूक्ष्म परिणत अनंत प्रदेशी में भी 16 वर्णादि होते हैं, बादर अनंत प्रदेशी में 20 वर्णादि होते हैं।

सातवां उद्देशक-

1. केवली यक्षाविष्ट नहीं होते हैं।

2. उपधि के तीन प्रकार- 1. कर्मोपधि, 2. शरीरोपधि, 3. बाह्योपकरण उपधि। एकेन्द्रिय और नारकी के दो उपधि है बाह्योपकरण नहीं है। शेष सभी दंडक में तीनों उपधि है।

सचित्त अचित्त मिश्र की अपेक्षा सर्वत्र तीनों उपधि है। नारकी में सचित्त =शरीर। अचित्त =उत्पत्ति स्थान और मिश्र- श्वासोच्छ्वास आदि है।

3. उपधि के समान परिग्रह के भी ये ही 3-3 भेद समझना।

4. प्रणिधान = स्थिर योग। सुप्रणिधान और दुष्प्राणिधान दो भेद हैं। और दोनों के पुनः मन वचन काया यों तीन-तीन भेद हैं। जिस दडंक में जितने योग हैं उतने प्रणिधान समझ लेना।

5. मद्रुक श्रावक-

राजगृही नगरी के बाहर गुणशील उद्यान में भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे। ''मद्रुक'' श्रावक दर्शन करने के लिये घर से पैदल ही निकला। बीच में अन्यतीर्थिकों के निवास स्थान आश्रम के पास होकर जा रहा था कि कुछ सन्यासी उसके पास

आये और पूछने लगे कि तुम्हारे भगवान पंचास्तिकाय बताते हैं, तुम उसको जानते देखते हो तो हमें भी बताओ कि वे कहां हैं। कैसी है ? हम भी देखें ?

प्रत्येक्ष देखने का तर्क एवं समाधान– मद्रुक ने कहा कई वस्तुओं के कार्य से ही उसका अस्तित्व जाना व देखा जाता है। सभी वस्तुएं प्रत्यक्ष नहीं देखी जाती। अन्य तिर्थिक संन्यासी आक्षेप पूर्वक कहने लगे कि अरे ! तुम भी कैसे श्रावक हो कि जानते नहीं, देखते नहीं, फिर भी मानते हो?

मद्रुक श्रावक ने जवाब में अनेक प्रश्न खड़े कर दिये– 1. वायु काय चलती है उसे तुम देखते हो? सुगन्ध आ रही है उसे देखते हो? (मेरे शब्द सुन रहे हो उसे देखते हो), अरणि काष्ट में अग्नि है उसे देखते हो? समुद्र के उस पार भी पदार्थ है उन्हें देखते हो? देवलोक भी उन्हें देखते हो? सभी प्रश्नों का उत्तर निश्चित है कि ''नहीं देखते हैं।''

मद्रुक ने उन्हें समझाया कि आयुष्मन ! ऐसा करोगे तो लोक के कितने ही पदार्थों का अभाव हो जायेगा अर्थात् उन सब का निषेध करना पड़ेगा। अतः कई वस्तु को मैं, तुम या छद्मस्थ मनुष्य देख नहीं सकते फिर भी उसके गुण धर्म कार्य से उस पदार्थ के अस्तित्व को स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार अन्यतीर्थिकों के आक्षेप का समाधान कर उन्हें निरुत्तर किया एवं भगवान की सेवामें पहुंचा। वंदन नमस्कार कर पर्युपासना करने लगा।

सिद्धान्त का ज्ञान आवश्यक– भगवान ने परिषद के समक्ष उसके सही उत्तर देने की प्रशंसा की और कहा कि जो बिना जाने अज्ञानवश गलत प्ररूपण आदि करते हैं, वे केवलज्ञानी की एवं धर्म की आशातना करते हैं। तात्पर्य यह है कि श्रमण हो,या श्रमणोपासक उसे यथासमय अपने धर्म सिद्धान्तों का ज्ञान एवं उसका अर्थ परमार्थ हेतु प्रश्न उत्तर सहित प्राप्त करना चाहिये। अपने मिले समय का सदुपयोग करके शास्त्राभ्यास में समय अवश्य लगाना चाहिये।

शास्त्र अभ्यास नहीं बढ़ाने वाला स्वयं के धर्म की स्थिरता का पूर्ण रक्षक भी नहीं हो सकता है एवं समय-समय पर सिद्धांत विपरीत प्ररूपण चिंतन करने वाला भी बन सकता है। उत्तराध्ययन सूत्र के 29वें अध्ययन के 19 वें प्रश्न उत्तर में भी यही भाव बताया गया है और प्रस्तुत प्रकरण में भगवान ने मद्रुक की प्रशंसा के बाद यही भाव प्रकट किये हैं।

मद्रुक श्रावक का भविष्य– गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान ने कहा कि यह मद्रुक श्रावक श्रावक पर्याय की आराधना करके प्रथम देवलोक के अरुणाभ विमान में उत्पन्न होगा। वहां से महाविदेह क्षेत्र में एक भव करके मुक्त होगा।

6. कोई व्यक्ति हजार रूप बनाकर युद्ध करता है तो भी उन सब रूपों में एक ही जीव होता है और उनके बीच में आत्म प्रदेश भी सम्बन्धित ही होते हैं।

7. असुरों और देवों के युद्ध हों तो वैमानिक देव जो भी तिनका, पत्ता, लकड़ी का स्पर्श करे वे सब शस्त्र रूप में परिणत हो जाते हैं किन्तु असुरकुमारों को तो शस्त्रों की विकुर्वणा करनी पड़ती है।

8. कोई भी महर्द्धिक देव किसी भी द्वीप समुद्र की शीघ्र ही परिक्रमा लगाकर आ सकता है। जम्बूद्वीप से रूचकवर द्वीप तक ऐसा जानना। आगे के द्वीप समुद्रों में जा सकते हैं और आ सकते हैं किन्तु प्रयोजनाभाव होने से परिक्रमा नहीं लगाते।

9. देव पुण्य का अनुपात– जितने पुण्यांश को व्यंतर देव 100 वर्ष में क्षय करते हैं। नवनिकाय के देव 200 वर्ष में। असुरकुमार- 300 वर्ष में। ग्रह नक्षत्र तारा आदि ज्योतिषी- 400 वर्ष में। सूर्य चन्द्र- 500 वर्ष में। पहला दूसरा देवलोक के देव हजार वर्ष में। 3-4 देवलोक में 2000 वर्ष, 5-6देवलोक में 3000 वर्ष, 7-8देवलोक में- 4000 वर्ष में, 9 से 12 देवलोक में 5000 वर्ष में। प्रथम ग्रैवेयक त्रिक में- एक लाख वर्ष में, दूसरी ग्रैवेयक त्रिक में- दो लाख वर्ष में तीसरी ग्रैवेयक त्रिक में- 3 लाख वर्ष में, चार अणुत्तर विमान में- 4 लाख वर्ष में और सर्वार्थ सिद्ध के देव 5 लाख वर्ष में उतने पुण्यांश को क्षय करते हैं।

क्रमांक	पुण्य	देवता	वर्ष में (पुण्य खपावे)
1	अनंत शुभ पुण्य	वाणव्यंतर देव	100 वर्ष में खपावे
2	इतने पुण्य	नव निकाय के देव	200 वर्ष में खपावे
3	इतने पुण्य	असुरकुमार के देव	300 वर्ष में खपावे
4	इतने पुण्य	ग्रह, नक्षत्र, तारा देव	400 वर्ष में खपावे
5	इतने पुण्य	चन्द्र, सूर्य देव	500 वर्ष में खपावे
6	इतने पुण्य	पहले, दूसरे देवलोक के देव	1000 वर्ष में खपावे
7	इतने पुण्य	तीसरे, चौथे देवलोक के देव	2000 वर्ष में खपावे
8	इतने पुण्य	पाँचवे, छठे देवलोक के देव	3000 वर्ष में खपावे
9	इतने पुण्य	सातवे, आठवे देवलोक के देव	4000 वर्ष में खपावे
10	इतने पुण्य	नौवे से बारहवे देवलोक के देव	5000 वर्ष में खपावे
11	इतने पुण्य	पहली त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	एक लाख वर्ष में खपावे
12	इतने पुण्य	दूसरी त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	दो लाख वर्ष में खपावे
13	इतने पुण्य	तीसरी त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	तीन लाख वर्ष में खपावे
14	इतने पुण्य	चार अणुत्तर विमान के देव	चार लाख वर्ष में खपावे
15	इतने पुण्य	सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव	पाँच लाख वर्ष में खपावे

आठवां उद्देशक-

1. अकषायी छद्मस्थ श्रमण के उपयोग पूर्वक चलते हुए भी कभी कूकड़े का छोटा बच्चा, बतक का छोटा बच्चा, इसी तरह के छोटे बच्चे अचानक उड़कर कूद कर पांव के नीचे आ सकते हैं। उसमें उनकी गलती नहीं होती है किन्तु वे बच्चे स्वयं अनायास आ जाते हैं। केवली के ऐसा अनायास प्रसंग नहीं होता है। उन कषाय रहित श्रमण को इरियावहि क्रिया ही लगती है। सांपरायिक क्रिया नहीं लगती है।

2. जो भी श्रमण देख कर विशेष ध्यान पूर्वक गमनागमन करते हैं, वे संयत विरत एवं पंडित है और जो कोई श्रमण या अन्यतीर्थिक बिना देखे या बिना पूर्ण ध्यान रखे गमनागमन आदि क्रिया करते हैं वे असंत आदि एवं बाल होते हैं। राजगृही नगरी में श्रमणों के ठहरने के बगीचे के पास ही अन्यतीर्थिकों का आश्रम आ गया था। अतः वे अन्यतीर्थिक रास्ते चलते श्रमण, श्रमणोपासक से भी चर्चा छेड़छाड़ कर लेते थे। एवं कभी उद्यान में आकर के भी प्रश्नोत्तर या आक्षेपात्मक चर्चा कर लेते हैं। प्रस्तुत विषय नं. 2 बगीचे में आकर गौतम स्वामी के साथ आक्षेपात्मक चर्चा का सार है। यहां भी भगवान ने गौतम स्वामी की प्रशंसा की। सातवें उद्देशक में मद्रुक के साथ की चर्चा भी इसी नगरी की है।

3. परमाणु आदि को परमावधिज्ञानी और केवली जान देख सकते हैं। सामान्य अवधिज्ञानी आदि अनंत प्रदेशी को जान देख सकते हैं। मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, परमाणु आदि सभी को जान सकते हैं किन्तु देख नहीं सकते। बादर स्कंधों को देख सकते हैं।

जानना और देखना एक समय में नहीं होता है केवली के अनंतर समय में होता है शेष सभी अनंतर अंतर्मुहूर्त से देखते हैं।

नौवा उद्देशक-

1. जिस जीव ने जहां का आयु बंध कर लिया है तब फिर वह उसका भवी द्रव्य कहलाता है। इस तरह भवी द्रव्य नारकी भी होते हैं यावत् भवी द्रव्य वैमानिक भी होते हैं। भवि द्रव्य नारकी आदि कौन हो सकते हैं और उनकी उम्र कितनी होती है वह चार्ट से जाने-

(3-4-5) स्थिति-नाम	भव्य द्रव्य	स्थिति जघन्य	उत्कृष्ट
भव्य द्रव्य नारकी	सन्नी असन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य	अन्तर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व
भव्य द्रव्य देव	सन्नी असन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य	अन्तर्मुहूर्त	3 पल
भव्य द्रव्य पृथ्वी पानी वनस्पति	22 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	साधिक 2 सागर
भव्य द्रव्य तेउ, वायु, विकलेन्द्रिय	10 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व
भव्य द्रव्य तिर्यंच पंचेन्द्रिय	24 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	33 सागरोपम
भव्य द्रव्य मनुष्य	24 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	33 सागरोपम

दसवां उद्देशक-

1. भावितात्मा का अणगार वैक्रिय लब्धि के सामर्थ्य से तलवार की धार पर चले, अग्नि में से निकले, पुष्कल संवर्तक मेघ में से पार होवे तो भीजे नहीं। गंगा नदी के पूर में सामने चले तो किसी प्रकार की बाधा नहीं आवे।

2. छोटी वस्तु बड़ी वस्तु से व्याप्त होती है। अतः परमाणु आदि वायुकाय से व्याप्त (स्पर्शित) होते हैं। मशक के चौतरफ वायु होती है अतः वह भी वायु से व्याप्त (स्पर्शित) होती है।

3. नगर एवं देवलोकों में तथा उनके बाहर अर्थात् लोक में सर्वत्र वर्णादि 20 बोल वाले पुद्गल भरे हुए हैं।

4. सोमिल ब्राह्मण- वाणिज्यग्राम नामक नगर में सोमिल नामक ब्राह्मण रहता था। वह 4 वेद आदि ब्राह्मण मत के सिद्धांतों मे निष्णात था। उसके 500 शिष्य थे। वह धन कुटुम्ब से सम्पन्न था। सुखपूर्वक कुटुम्ब का स्वामित्व निर्वाह करते हुए रहता था।

एक बार उसने जाना कि भगवान महावीर स्वामी नगरी के बाहर द्युतिपलास उद्यान में पधारे हुए हैं। तब उसे ऐसे मनोगत संकल्प उत्पन्न हुए कि मैं भी जाऊं और कई प्रश्न पूछूं। यदि वे मेरे प्रश्नों का उत्तर दे सकेंगे तो मैं उन्हें वंदना नमस्कार करके पर्युपासना करुंगा। यदि उत्तर न दे सकेंगे तो मैं इन प्रश्नों द्वारा उन्हें निरूत्तर करूंगा। तदनुसार वह उद्यान में पहुंचा और प्रश्न प्रारम्भ किया।

सोमिल- हे भंते ! आपके यात्रा, यापनीय, अव्याबाध और प्रासुक विहार है?

भगवानः - हे सोमिल ! तप, संयम, नियम, स्वाध्याय, ध्यान आदि योग, यतना प्रवृत्ति हमारी यात्रा (संयम यात्रा) है। पांच इन्द्रिय एवं कषाय को विवेक पूर्वक स्ववश में नियंत्रण में रखना यह हमारा यापनीय हैं वात पित्त कफ जन्य शारीरिक रोग आतंक मेरे उपशांत है यह मेरा अव्याबाध (सुख) है। आराम, उद्यान, सभा, प्याऊ, देवस्थान आदि स्त्री, पशु पंडक रहित स्थानों में शय्या संस्तारक ग्रहण कर रहना, यह हमारा प्रासुक विहार है।

सोमिल- ''सरिसव'' भक्ष्य है अभक्ष्य?

भगवान- सोमिल! सरिसव भक्ष्य भी है अभक्ष्य भी। ब्राह्मण मत में सरिसव दो प्रकार के कहे हैं- 1. मित्र सरिसव (सरीखे), 2. धान्य सरिसव (सरसों)। साथ में जन्में,साथ खेले और साथ में बड़े हुए, सरीखे मित्र रूप ''सरिसव'' अभक्ष्य होते हैं। धान्य सरिसव (सरसों) अचित्त हो, ऐषणा नियमों से युक्त हो, याचित हो, और प्राप्त हो तो श्रमण निर्ग्रन्थों को भक्ष्य= खाने योग्य है किन्तु जो सचित्त हो, अनेषणीय हो, अयाचित या अप्राप्त हो वह सरिसव धान (सरसों) अभक्ष्य = श्रमण निर्ग्रन्थों के खाने के अयोग्य है।

सोमिल- ''मास'' भक्ष्य है या अभक्ष?

भगवान- ब्राह्मण मत में ''मास'' दो प्रकार के कहे हैं उनमें से श्रावण आदि आषाढ़ पर्यन्त मास अभक्ष्य है। सोने चांदी के माप करने के मास अभक्ष्य है। धान्य मास (उड़द) अचित्त, ऐषणीय याचित प्रदत्त हो तो श्रमणों को भक्ष्य है और सचित्त, अनेषणीय, अयाचित अप्राप्त हो तो अभक्ष्य है।

सोमिल- ''कुलत्थ'' अभक्ष्य है या भक्ष्य ?

भगवानः ब्राह्मण मत में ''कुलत्था'' दो प्रकार के कहे हैं उनमें से कुलवान स्त्री ''कुलत्था'' है वह अभक्ष्य है। धान्य कुलत्था यदि अचित्त, ऐषणीय, याचित और प्रदत्त है तो श्रमणों का भक्ष्य है अन्यथा अभक्ष्य होता है।

विवेक पूर्ण यथार्थ उत्तर सुनकर सोमिल झुक गया, बोध को प्राप्त कर उसने 12 श्रावक व्रत स्वीकार किये। अनेक वर्ष व्रताराधन कर सद्गति को प्राप्त किया एवं एकाभवावतारी बना। महाविदेह से मोक्ष जायेगा।

नोट- सोमिल के प्रश्न जिज्ञासा के नहीं किन्तु परीक्षा मूलक थे।

उन्नीसवां शतक

उद्देशक 1-3 तक-

1. लेश्या वर्णन प्रज्ञापना के सत्रहवें पद के चौथे उद्देशे आदि के समान जानना। गर्भगत जीव की लेश्या वर्णन भी वहीं से जानना।

2. कई वनस्पति जीव ही साधारण (सम्मिलित) शरीर बांधते (बनाते) हैं। वे भी अनंत जीव मिलकर ही बनाते हैं, असंख्य संख्यात या 4-5 मिलकर नहीं बनाते हैं। शेष 23 दंडक के जीव और प्रत्येक शरीरी वनस्पति के जीव सभी अपना अपना व्यक्तिगत शरीर ही बनाते हैं।

उन जीवों के लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, योग, उपयोग, आहार, समुद्घात, गति, आगति, स्थिति आदि का वर्णन जीवाभिगम सूत्र पुष्प 24 के प्रथम प्रतिपति के अनुसार है।

द्वार		तीन स्थावर-अग्नि, वायु वनस्पति	तीन विकलेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
1	स्याद् द्वार	वनस्पति साधारण शरीर बांधते हैं	प्रत्येक शरीर	प्रत्येक शरीर
2	लेश्या द्वार	अग्नि-3	लेश्या 3	6 लेश्या
3	दृष्टि द्वार	पृथ्वीकायवत्	दो दृष्टि	तीन दृष्टि
4	ज्ञान द्वार	पृथ्वीकायवत्	2 ज्ञान 2 अज्ञान	4 ज्ञान 3 अज्ञान
5	योग	पृथ्वीकायवत्	2 योग (काय, वचन)	3 योग
6	उपयोग	पृथ्वीकायवत्	2 उपयोग	2 उपयोग
7	किमाहार	बादर वनस्पति (निगोद) नियमा 6 दिशा	नियमा 6 दिशा	नियमा 6 दिशा
8	प्राणातिपातादि	पृथ्वीकायवत्	18 पाप पाये जाते हैं	18 पाप की भजना
9	उत्पाद	अग्नि तिर्यंच मनुष्य	मनुष्य, तिर्यंच से	चारों गति से सर्वार्थ सिद्ध से भी
10	स्थिति	अग्नि 3 दिन रात, वायु 3000 वर्ष, वनस्पति 10000 वर्ष	बेइन्द्रिय 12 वर्ष, तेइन्द्रिय-49 दिन, चौइन्द्रिय 6 माह	उत्कृष्ट 33 सागर
11	समुद्घात	वायु में 4	3 समुद्घात (दोनों मरण)	6 समुद्घात (दोनों मरण)
12	उद्वर्त्तना	अग्नि-तिर्यंच	मनुष्य, तिर्यंच	चारों गति सर्वार्थ सिद्ध तक मनुष्य-मोक्ष

3. अवगाहना 44 बोलों की-एकेन्द्रिय के सम्पूर्ण जीव के भेद 22 कहे गये हैं। (प्रज्ञापना सूत्र के पहले पद में) उनकी जघन्य अवगाहना और उत्कृष्ट अवगाहना यों दो विकल्प करने से 44 बोल होते हैं उन 44 अवगाहनाओं का अल्पबहुत्व इस प्रकार है।

1. अपर्याप्त सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना = सबसे छोटी
2. अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुणी है।
3. अपर्याप्त सूक्ष्म अग्निकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
4. अपर्याप्त सूक्ष्म अप्काय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
5. अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
6. अपर्याप्त बादर वायुकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
7. अपर्याप्त बादर अग्निकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
8. अपर्याप्त बादर अप्काय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
9. अपर्याप्त बादर पृथ्वीकाय की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।
10. अपर्याप्त प्रत्येक शरीरी वनस्पति की जघन्य अवगाहना = असंख्यगुण है।

11.	अपर्याप्त बादर निगोद की जघन्य अवगाहना	=	आपस में तुल्य है।
12.	पर्याप्त सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना	=	असंख्यगुण है।
13.	अपर्याप्त सूक्ष्म निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना	=	विशेषाधिक है।
14.	पर्याप्त सूक्ष्म निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना	=	विशेषाधिक है।
15.	पर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की जघन्य अवगाहना	=	असंख्यगुण है।
16.	अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की उत्कृष्ट अवगाहना	=	विशेषाधिक है।
17.	पर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की उत्कृष्ट अवगाहना	=	विशेषाधिक है।
18.	पर्याप्त सूक्ष्म अग्निकाय की जघन्य अवगाहना	=	असंख्यगुण है।

इस तरह 18-19-20 सूक्ष्म अग्निकाय, 21-22-23 सूक्ष्म अपकाय के, 24-25-26सूक्ष्म पृथ्वीकाय के, 27-28-29 बादर वायुकाय के, 30-31-32 बादर अग्निकाय के। 33-34-35 बादर अपकाय के, 36-37-38बादर पृथ्वीकाय के, 39-40-41 बादर निगोद के जीवों की अवगाहना है। 42-43-44 प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय के तीनों बोल असंख्य गुण असंख्यगुण कहना।

सबसे अधिक अवगाहना प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति के पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना 1000 योजन साधिक है। सबसे छोटी सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना है। शेष सभी बोलों की क्रमशः कुछ अधिक अवगाहना है। प्रत्येक शरीरी वनस्पति और बादर निगोद के अपर्याप्त की अवगाहना एक सरीखी (तुल्य) है।

समुच्चय बोल से- पृथ्वी से पानी सूक्ष्म है। पानी से अग्नि, अग्नि से वायु और वायु से वनस्पति सूक्ष्म है।

समुच्चय बोल से - वायु से अग्नि बादर (बड़ी) है अग्नि से पानी बादर है पानी से पृथ्वी बादर है और पृथ्वी से वनस्पति बादर (बड़ी) है।

चार स्थावर की जघन्य उत्कृष्ट सभी अवगाहनाएं अंगुल के असंख्यातवें भाग की है अर्थात् उक्त 43 बोलों में अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग की ही है। केवल 44वें बोल में उत्कृष्ट एक हजार योजन साधिक है।

4. उक्त 44 बोलों में बादर पृथ्वीकाय का नौंवा नम्बर है अर्थात् आठ बार असंख्य गुणा करे इतनी अवगाहना है। फिर भी चक्रवर्ती की जवान स्वस्थ दासी वज्रमय शिला और शिलापुत्रक (लोढे) से लाख के गोले जितनी पृथ्वीकाय को 21 बार पीसे तो कई जीव मरते हैं, कई नहीं मरते, कई संघर्ष को प्राप्त होते हैं, कई को संघर्ष नहीं होता, कई को स्पर्श होता है, कई को स्पर्श मात्र भी नहीं होता है। इस प्रकार कुछ पीसे जाते हैं, कुछ नहीं पीसे जाते हैं। ऐसी छोटी पृथ्वीकाय की अवगाहना होती है।

5. कोई जवान स्वस्थ पुरुष वृद्ध असक्त पुरुष को मस्तक पर जोर जोर से प्रहार करे उसे जैसी वेदना होती इससे भी अनिष्टतर वेदना पृथ्वीकाय जीवों को स्पर्श मात्र से होती है। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय जीवों को स्पर्श मात्र से वेदना होना समझ लेना चाहिये।

चौथा उद्देशक-

1. आश्रव, क्रिया, वेदना, निर्जरा इन चार के ''महा'' और अल्प विशेषण लगाने से 16 भंग बनते हैं। पहला भंग- महाश्रव महाक्रिया महा वेदना महा निर्जरा का बनता है। दूसरा भंग- महाश्रव महाक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा का बनता है यों क्रमशः भंग विधि से 16वां भंग- अल्पाश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना अल्प निर्जरा का बनता है। इन सौलह भंग में से नारकी में केवल एक दूसरा भंग ही पाया जाता है शेष भंग वहां नहीं पाये जा सकते हैं।

1. महाआश्रव, महाक्रिया, महावेदना, महानिर्जरा
2. महाआश्रव, महाक्रिया, महावेदना, अल्पनिर्जरा
3. महाआश्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, महानिर्जरा
4. महाआश्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, अल्पनिर्जरा
5. महाआश्रव अल्पक्रिया महावेदना महानिर्जरा
6. महाआश्रव अल्पक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
7. महाआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
8. महाआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा
9. अल्पआश्रव महाक्रिया महावेदना महानिर्जरा
10. अल्पआश्रव महाक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
11. अल्पआश्रव महाक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
12. अल्पआश्रव महाक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा
13. अल्पआश्रव अल्पक्रिया महावेदना महानिर्जरा
14. अल्पआश्रव अल्पक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
15. अल्पआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
16. अल्पआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा

पांचवा उद्देशक-

1. चरम नैरयिक अल्पायु वाले परम नैरयिक = अधिक आयुष्य वाले। नारकी में ज्यादा उम्र वाले भारी कर्मा होते हैं और देवता में ज्यादा उम्र वाले हलुकर्मी होते हैं, कम उम्रवाले भारी कर्मा होते हैं, वे शीघ्र मनुष्य तिर्यंच में जाने वाले होते हैं। इसलिये भारी कर्मा कहे गये हैं। औदारिक के 10 दंडक नरक के समान जानना।

2. व्यक्त वेदना, अव्यक्त वेदना का वर्णन प्रज्ञापना सूत्र से जानना। सन्नी के निदा वेदना होती है असन्नि के अनिदा (अव्यक्त) वेदना होती है।

उद्देशक 6 से 10 तक-

1. द्वीप समुद्रों का वर्णन जीवाभिगम सूत्र से जानना।

2. ज्योतिषी देवों के विमान सर्वस्फटिक रत्नमय है। शेष तीन जाति के देवों के भवन, विमान, नगर सर्वरत्न मय है। शाश्वत है। उनमें जीव, पुद्गलों का स्वतः चय और उपचय होता रहता है।

3. जीव निवृत्ति = जीव के द्वारा उत्पादित भाव अनेक विध है जो जीव के भेद रूप से मूल एकेन्द्रिय आदि पांच एवं उत्कृष्ट 563 भेद है।

कर्म रूप से निवृत्ति मूल 8, उत्तर 148 यावत् असंख्य प्रकार की होती है। 24 दंडक की यथा योग्य जानना। शरीर 5, इन्द्रिय 5, भाषा 4, मन, 4, कषाय 4, वर्णादि 20, संस्थान 6, संज्ञा 4, लेश्या 6, दृष्टि 3, ज्ञान अज्ञान 8, योग 3, उपयोग 2 ये सब जीव निवृत्ति 24 दंडक में यथायोग्य जान लेना चाहिये।

क्रम	जीव	बोल	खुलासा (विवरण)
1	नारकी	70	82 में से 2 शरीर, 5 संस्थान, 3 लेश्या, 2 ज्ञान ये 12 कम हुए
2	भवनपति वाणव्यंतर देव	71	70 में एक तेजो लेश्या बढ़ी
3	ज्योतिषी, 12 देवलोक	68	ऊपर 71 में 3 लेश्या कम हुई
4	नवग्रैवेयक	67	68 में से मिश्रदृष्टि कम हुई।
5	पाँच अणुत्तर विमान	63	67 में से 3 अज्ञान और 1 मिथ्यादृष्टि ये 4 कम हुई
6	पृथ्वी, अप्काय, वनस्पतिकाय	51	8 कर्म, 3 शरीर, 1 इंद्रिय, 4 कषाय, 20 वर्णादि, 1 हुंडक संस्थान,
			4 संज्ञा, 4 लेश्या, 1 मिथ्यादृष्टि, 2 अज्ञान, 1 योग, 2 उपयोग = 51
7	तेउकाय	50	51 में से 1 लेश्या कम (तेजोलेश्या)
8	वायुकाय	51	50 में एक वैक्रिय शरीर बढ़ा
9	बेइन्द्रिय	56	51 में 1 इंद्रिय, 1 भाषा, 1 दृष्टि, 2 ज्ञान ये 5 बढ़े
10	तेइन्द्रिय	57	56 में 1 इन्द्रिय बढ़ी
12	चौइन्द्रिय	58	57 में 1 इन्द्रिय बढ़ी
13	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	79	82 में से आहारक शरीर, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान ये तीन कम
14	मनुष्य	82	सभी बोल पावे
15	पहले और तीसरे गुणस्थान	74	82 में से 1 शरीर, 2 दृष्टि, 5 ज्ञान ये 8 बोल समुच्चय से कम
16	2-4-5 गुणस्थान में	74	82 में से 1 शरीर, 2 दृष्टि, 2 ज्ञान, 3 अज्ञान ये 8 बोल कम
17	छठे गुणस्थान में	76	74 में 1 आहारक शरीर, 1 मन:पर्यवज्ञान दो बोल बढ़े
18	सातवें गुणस्थान	69	76 में से 4 संज्ञा, 3 अशुभ लेश्या ये 7 बोल कम हुए
19	8-9 गुणस्थान में	65	69 में से 2 शरीर वैक्रिय, आहारक, 2 लेश्या तेजो पदम कम हुए
20	दसवें गुणस्थान में	62	65 में से 3 कषाय कम हो गई
21	11वें 12वें गुणस्थान में	60	62 में से 1 मोहनीय कर्म, 1 लोभ कषाय दो बोल कम हुए
22	13वें गुणस्थान में	45	4 कर्म, 3 शरीर, 2 भाषा, 2 मन, 20 वर्णादि, 6 संस्थान, 1 लेश्या, 1 दृष्टि, 1 ज्ञान, 3 योग, 2 उपयोग ये 45 बोल पावे
23	14वें गुणस्थान में	37	45 में से 2 भाषा, 2 मन, 1 लेश्या, 3 योग ये 8 बोल कम हुए

4. करण– द्रव्यादि की अपेक्षा करण के 5 प्रकार है- द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव और भव करण। करण= क्रिया का प्रारम्भ। निवृत्ति = निष्पत्ति।

शरीर 5, इन्द्रिय 5, भाषा 4, मन 4, कषाय 4, समुद्घात 7, संज्ञा 4, लेश्या 6, दृष्टि 3, वेद, 3, हिंसा 5 (एकेन्द्रियादि की), 5 व्रतादि ये 55 करण कहे गये हैं। इन करणों में पौद्गलिक संयोग की नियमा और निवृत्ति में जीव संयोग की नियमा होती है पुद्गल संयोग की भजना होती है अर्थात् किसी में होते हैं किसी में नहीं होते हैं। चौबीस दंडक के करण यथायोग्य कहने चाहिये। जीव और कर्म के भेद के अतिरिक्त निवृत्ति 74 कही है करण 77 कहे हैं।

क्रम	जीव	बोल	खुलासा (विवरण)
1	नारकी में	45	55 में से 2 शरीर, 3 समुद्घात, 3 लेश्या, 2 वेद ये 10 कम
2	भवनपति वाणव्यंतर में	48	45 में 1 समुद्घात, 1 लेश्या, 1 वेद ये तीन बढ़े
3	ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक	45	48 में से 3 लेश्या कम हो गई
4	3 से 12 देवलोक	44	45 में 1 वेद कम (स्त्री वेद कम)
5	नवग्रैवेयक में	41	44 में से 2 समुद्घात, मिश्रदृष्टि कम ये तीन कम
6	पाँच अणुत्तर विमान में	40	ऊपर 41 में 1 मिथ्यादृष्टि कम हो गया
7	पृथ्वी, पानी, वनस्पति में	31	5 द्रव्य, 3 शरीर, 1 इंद्रिय, 4 कषाय, 3 समुद्घात, 4 संज्ञा, 4 लेश्या, 1 दृष्टि, 1 वेद, 5 प्राणातिपातादि ये 31 बोल
8	तेउकाय में	30	31 में से 1 लेश्या कम
9	वायुकाय में	32	ऊपर 30 में 1 वैक्रिय शरीर, 1 वैक्रिय समुद्घात बढ़ा
10	बेइन्द्रिय	33	ऊपर के 30 में 1 इन्द्रिय, 1 व्यवहार भाषा, 1 समदृष्टि बढ़े
11	तेइन्द्रिय	34	33 में 1 इन्द्रिय बढ़ी
12	चौइन्द्रिय में	35	34 में एक इन्द्रिय बढ़ी
13	तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	52	55 में से 1 शरीर, 2 समुद्घात कम हो गये
14	मनुष्य में	55	सभी 55 बोल पावे
15	पहले और तीसरे गुणस्थान	50	55 में से 1 आहारक शरीर, आहारक समुद्घात केवली समुद्घात, समदृष्टि ये 4 और पहले गुणस्थान में मिश्रदृष्टि, तीसरा में मिथ्यादृष्टि कम ये 5-5 कम
16	2-4-5 गुणस्थान में	50	55 में 1 शरीर, 2 समुद्घात, 2 दृष्टि ये 5 कम
17	छठे गुणस्थान में	47	55 में से 1 समुद्घात, 2 दृष्टि, 5 प्राणातिपात ये 8 कम
18	सातवें गुणस्थान में	34	47 में से 6 समुद्घात, 4 संज्ञा, 3 अशुभ लेश्या ये 13 कम
19	8-9 गुणस्थान में	30	34 में से 2 शरीर, 2 लेश्या ये 4 कम
20	दसवाँ गुणस्थान में	24	30 में से 3 (तीन) कषाय, 3 वेद ये 6 बोल कम
21	11-12 गुणस्थान में	23	24 में से लोभ कषाय कम
22	13वाँ गुणस्थान में	15	23 में से 5 इंद्रिय, 2 मन, 2 भाषा ये 9 कम (5 द्रव्यादि, 3 शरीर, 2 भाषा, 2 मन, 1 केवली समुद्घात, 1 शुक्ल लेश्या, समदृष्टि ये 15 बोल)
23	14वाँ गुणस्थान में	9	5 द्रव्यादि, 3 शरीर, 1 समदृष्टि ये 9 बोल पावे
24	सिद्ध भगवान में	6	5 द्रव्यादि, 1 समदृष्टि ये 6 बोल पावे

5. व्यंतर देवों का सम आहार आदि वर्णन 16 वें शतक के द्वीप कुमार के समान जानना।

बीसवां शतक

उद्देशक- 1 से 4-

1. एकेन्द्रियादि आहार करते समय रस स्पर्श आदि संवेदन करते हैं किन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं होता है हम आहार कर रहे हैं, इष्ट अनिष्ट रस आदि का सेवन कर रहे हैं। पंचेन्द्रिय में कईयों को उक्त संज्ञा, प्रज्ञान, वचन होता है, कईयों को नहीं होता है।

2. जिनकी हिंसा की जाती है उन जीवों को मारे जाते हुए यह ज्ञान नहीं होता कि हम मारे जा रहे हैं। सन्नी पंचेन्द्रिय में कईयों को होता है, कईयों को नहीं होता।

3. धर्मास्तिकाय के पर्याय नाम- धर्म, धर्मास्तिकाय, प्राणातिपात आदि विरमण क्रोधादि विरमण यावत् मिथ्यादर्शन विरमण, इर्यासमिति आदि, गुप्ति आदि। अन्य भी इस तरह के नाम है।

4. अधर्मास्तिकाय के पर्याय नाम- अधर्म आदि धर्म के प्रतिपक्षी।

5. आकाशास्तिकाय के पर्याय नाम- आकाश, गगन, नभ, सम, विषम, खह, विहायस, वीचि, विवर, अम्बर, अम्बरस, छिद्र, झुषिर, मार्ग विमुख, अर्द, आधार, व्योम, भाजन, अन्तरिक्ष, श्याम, अवकाशांतर, अगम, स्फटिक, (स्वच्छ) अनंत।

जीवास्तिकाय के पर्याय नाम- जीव, प्राण, भूत, सत्व, विज्ञ, चेत्ता, जेता, आत्मा, रंगण (रागयुक्त)

हिंडुक, पुद्गल, मानव, कर्ता, विकर्ता, जगत, जन्तु, योनि, स्वयंभू, शरीरी, नायक, अंतरात्मा।

7. पुद्गलास्तिकाय के पर्याय नाम- पुद्गल, परमाणु पुद्गल, द्विप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी, इत्यादि ये सब अभिवचन है, पर्याय नाम है।

8. पाप, पाप त्याग, बुद्धि ज्ञान, दृष्टि, उपयोग, संज्ञा, शरीर, योग आदि ये सब आत्मा के परिणमन होते हैं, आत्मा के सिवाय अन्यत्र इनका परिणमन नहीं होता है।

9. इन्द्रिय उपचय आदि प्रज्ञापना पद 15 से जानना।

पांचवा उद्देशक-

1. परमाणु में 2 स्पर्श चार प्रकार के होते हैं- 1. शीत -रूक्ष, 2.शीत- स्निग्ध, 3. उष्ण-रूक्ष, 4.उष्ण- स्निग्ध। द्विप्रदेशी में- 2 या 3 या 4 स्पर्श हो सकते हैं। सूक्ष्म अनंत प्रदेशी स्कंध तक चार स्पर्श इसी प्रकार होते हैं। शेष वर्णादि का वर्णन शतक 18उद्देशक 6 में किया है। भंग संख्या इस प्रकार है।

विकल्प	वर्ण के भंग	गंध के भंग	रस के भंग	स्पर्श के भंग	कुल भंग
परमाणु	5	2	5	4	16
द्वि प्रदेशी	15	3	15	9	42
तीन प्रदेशी	45	5	45	25	120
चार प्रदेशी	90	6	90	36	222
पाँच प्रदेशी	141	6	141	36	324
छ प्रदेशी	186	6	186	36	414
सात प्रदेशी	216	6	216	36	474

आठ प्रदेशी	231	6	231	36	504
नौ प्रदेशी	236	6	236	36	514
दस प्रदेशी	237	6	237	36	516
संख्यात प्रदेशी	237	6	237	36	516
असंख्यात प्रदेशी	237	6	237	36	516
सूक्ष्म अनंत प्रदेशी	237	6	237	36	516
बादर अनंत प्रदेशी	237	6	237	1296	1776
कुल	2350	73	2350	1694 कुल	6470

संख्या	कर्कश	मृदु	गुरु	लघु	शीत	उष्ण	स्निग्ध	रूक्ष
1	3		3		3		1	1
2	3		3		3		1	2
3	3		3		3		2	1
4	3		3		3		2	2
5	3		3			3	1	1
6	3		3			3	1	2
7	3		3			3	2	1
8	3		3			3	2	2
9	3				3		1	1
10	3				3		1	2

11	3				3		2	1
12	3				3		2	2
13	3					3	1	1
14	3					3	1	2
15	3					3	2	1
16	3					3	2	2
17		3	3		3		1	1
18		3	3		3		1	2
19		3	3		3		2	1
20		3	3		3		2	2
21		3	3			3	1	1
22		3	3			3	1	2
23		3	3			3	2	1
24		3	3			3	2	2
25		3		3	3		1	1
26		3		3	3		1	2
27		3		3	3		2	1
28		3		3	3		2	2
29		3		3		3	1	1
30		3		3		3	1	2
31		3		3		3	2	1
32		3		3		3	2	2

7 संयोगी 512 भंग–(128x4) चार एक सौ अठाइसी इस प्रकार–

3111111	3111112	3111121	3111122	3111211
3111212	3111221	3111222	3112111	3112112
3112121	3112122	3112211	3112212	3112221
3112222	3121111	3121112	3121121	3121122
3121211	3121212	3121221	3121222	3122111
3122112	3122121	3122122	3122211	3122212
3122221	3122222			

8 संयोगी 256 भांगे–

11111111	11111112	11111121	11111122	11111211
11111212	11111221	11111222	11112111	11112122
11112121	11112122	11112211	11112212	11112221
11112222	11121111	11121112	11121121	11121122
11121211	11121212	11121221	11121222	11122111
11122112	11122121	11122122	11122211	11122212
11122221	11122222	11211111	11211112	11211121
11211122	11211211	11211212	11211221	11211222
11212111	11212112	11212121	11212122	11212211
11212212	11212221	11212222	11221111	11221112
11221121	11221122	11221211	11221212	11221221
11221222	11222111	11222112	11222121	11222122
11222211	11222212	11222221	11222222	

नोट– उक्त भंग पूर्व में बताई गई भंग विधियों से जानने चाहिये।

2. एक परमाणु ''द्रव्य परमाणु'' एक आकाश प्रदेश ''क्षेत्र परमाणु'' है। एक समय ''काल परमाणु'' है और एक गुण काला आदि ''भाव परमाणु'' है।

परमाणु का छेदन, भेदन, दहन, ग्रहण नहीं होता है। सम अवयव नहीं होने से आधा नहीं होता है। विषम अवयव नहीं होने से अप्रदेश कहलाता है। विभाग नहीं होने से अविभाग कहलाता है।

छट्ठा सातवां आठवां उद्देशक–

1. आहार एवं उत्पत्ति सम्बन्धी वर्णन शतक 17 उद्देशक 6 में किया गया है।

2. जीव प्रयोग बंध, उसके अंतरबंध, उसके परंपर बंध ऐसे तीन प्रकार का बंध सभी जीवों के संभावित सभी अवस्थाओं में होता है।

3. भरत एरावत में ही उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल है। अकर्मभूमि में नहीं है। महाविदेह क्षेत्र में अवस्थित काल है।

4-5. भरत 5 एरावत में पहले और अंतिम तीर्थंकर पंचमहाव्रत रूप धर्म एवं सप्रतिक्रमण धर्म का प्ररूपण करते हैं। शेष 22 तीर्थंकर और महाविदेह क्षेत्र के तीर्थंकर चातुर्याम धर्म का प्ररूपण करते हैं।

5. भरत एरावत में 24 तीर्थंकर क्रमशः होते हैं उन के 23 जिनांतर होते हैं। वर्तमान चौबीसी के पहले से आठवें एवं 16से 23 वें के शासन में कालिक श्रुत का विच्छेद नहीं हुआ। बीच के नौंवे से 15 वें तीर्थंकर के शासन में अर्थात् सात जिनांतर में कालिक श्रुत का विच्छेद हुआ।

दृष्टिवाद का विच्छेद तो सभी तीर्थंकरों के शासन में होता है। चौबीसवें तीर्थंकर के शासन में दृष्टिवाद का पूर्वगत सूत्र 1000 वर्ष तक चलेगा (रहा था) शेष 23 तीर्थंकरों के संख्यात या संख्यात काल तक पूर्व श्रुत चला था।

6. 24 वे तीर्थंकर का वर्तमान शासन कुल 21 हजार वर्ष चलेगा। उत्सर्पिणी के 24 वें तीर्थंकर का शासन एक लाख पूर्व में 1000 वर्ष कम तक चलेगा।

7. अरिहंत तीर्थंकर है, चतुर्विध संघ तीर्थ है। तीर्थंकर प्रवचनी है। द्वादशांग (शास्त्र) प्रवचन है। इस धर्म का अवगाहन करने वाले सम्पूर्ण कर्म क्षय कर मुक्त होते हैं अथवा कर्म शेष रहने पर देवलोक में जाते हैं।

नौवां उद्देशक–

विद्याचारण मुनि– पूर्वगत श्रुत के अभ्यासी तपोलब्धि सम्पन्न अणगार को बेले बेले निरंतर तप करने से विद्याचारण नामक लब्धि उत्पन्न होती है। तीन चुटकी बजावे जितने समय में कोई देव जम्बू द्वीप की तीन परिक्रमा लगा लेवे इतनी शीघ्र गति विद्याचरण की होती है। इस लब्धि वाला अणगार पहली उड़ान में मानुषोत्तर पर्वत पर जाकर ठहरता है दूसरी उड़ान में नंदीश्वर द्वीप में जाता है। आते समय एक उड़ान में आ जाता है।

ऊंचे जाना हो तो पहली एक उड़ान में मेरू के नंदन वन में दूसरी उड़ान में मेरू के पंडक वन में जाता है, आते समय एक उड़ान में आता है। इतना उत्कृष्ट गति विषय है। फिर इस गमनागमन की आलोचना प्रतिक्रमण करे तो आराधना होती है। आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना काल कर जाय तो आराधना नहीं होती है।

2. जंघाचारण मुनि– तपोलब्धि सम्पन्न पूर्वधारी को तेले-तेले निरंतर तप करने से जंघाचारण लब्धि उत्पन्न होती है। विद्याचारण से इसकी गति सातगुणी अधिक होती है।

यह पहली उड़ान में रूचक वर द्वीप में पहुंच जाता है। वापिस आते समय दूसरी उड़ान में नंदीश्वर द्वीप में ठहरता है तीसरी उड़ान में अपने स्थान में पहुंच जाता है। ऊंचे जाना हो तो पहली उड़ान में पंडग वन में जाता है, फिर आते समय दूसरी उड़ान में नंदन वन में और तीसरी उड़ान में स्वस्थान में आ जाता है। इतना उत्कृष्ट गति विषय है। लब्धि के उपयोग करने की आलोचना प्रतिक्रमण करने पर ही आराधना होती है।

उक्त लब्धिधारी मुनिराज द्वीप समुद्र पर्वत आदि के आगम कथित वर्णन के अनुसार स्थानों को देखने के प्रयोग से इस लब्धि का प्रयोग करते हैं अथवा अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करने, तीर्थंकरों का दर्शन करने हेतु भी उक्त लब्धि वाले मुनिराज उस लब्धि का प्रयोग करते हैं।

नोट– लिपिकाल में मनः कल्पित प्रक्षेपों की परिपाटी के अंतरंग भगवती सूत्र का यह पाठ भी अंतरभावित होता है। श्रमण निर्ग्रन्थ या श्रावक के वर्णन वाले आचार शास्त्रों में कहीं भी चैत्य वंदन का उल्लेख नहीं है फिर भी यहां मानुषोत्तर आदि पर्वतों पर मुनिराज के साथ चैत्य वंदना का पाठ प्रक्षिप्त कर दिया गया है। जबकि जीवाभिगम सूत्र में मानुषोत्तर पर्वत का पूरा वर्णन है। वहां कोई मूर्ति नहीं बताई गई है फिर भी इस पाठ में प्रक्षेप करने वालों ने मानुषोत्तर पर्वत आदि सभी जगह चैत्य वंदन का पाठ रख दिया है। चैत्यवंदन के पाठ या चैत्य शब्द अथवा णमोत्थुणं का पाठ आदि के प्रक्षेप अन्य आगमों में भी किये गये हैं यथा राजप्रश्नीय सूत्र, व्यवहार सूत्र, ज्ञाता सूत्र, उपासक दशा आदि। इस विषयक विशेष जानकारी के लिये उक्त सूत्रों के सारांशों को देखना चाहिये।

दसवां उद्देशक–

1. जिन जीवों का आयुष्य व्यवहार से असमय (अकाल) में ही समाप्त हो सकता है, वह सोपक्रमी आयुष्य कहलाता है और जो पूर्ण समय पर ही समाप्त होता है, वह निरूपक्रमी आयुष्य कहलाता है। दूसरे शब्दों में सोपक्रमी आयुष्य बीच में टूट सकता है निरूपक्रमी आयुष्य बीच में नहीं टूटता है।

नारकी देवता युगलिया (मनुष्य और तिर्यंच), 63 उत्तम पुरुष (तीर्थंकर चक्रवर्ती आदि) एवं चरम शरीरी जीवों के निरूपक्रमी आयुष्य होता है। शेष सभी के सोपक्रमी आयुष्य होता है, जो 1/3 उम्र अवशेष रहने पर कभी भी टूट सकता है।

2. आयु को स्वयं घटा देना– आत्मघात करना ''आत्मोपक्रम'' है। दूसरे के द्वारा मारा जाना ''परोपक्रम'' है और तीसरा भेद ''निरूपक्रम'' है।

दस औदारिक दंडकों में तीनों उपक्रम है। नारकी देवता में निरूपक्रम है। चौबीस दंडक में उत्पन्न होने की अपेक्षा (आगत की अपेक्षा) तीनों उपक्रम है। मरण की अपेक्षा (गत की अपेक्षा) 14 दंडक में निरूपक्रम है और दस दंडक में तीनों।

जन्म मरण जीवों का आत्मृद्धि, आत्मकर्म, आत्मप्रयोग से होता है पर ऋद्धि, पर कर्म, पर प्रयोग से नहीं।

3. कतिसंचय = संख्याता। अकतिसंचय = असंख्याता। 1.अवक्तव्यसंचय =एक। पांच स्थावर में उत्पन्न होने की अपेक्षा एक अकतिसंचय है। शेष सभी में तीनों प्रकार होते हैं। सिद्धों में दो प्रकार है-अकतिसंचय नहीं है।

पांच स्थावर के अतिरिक्त में अल्पबहुत्व होती है- सबसे कम अवक्तव्य, उससे कतिसंचय संख्यात गुणा, उससे अकति संचय असंख्यात गुणा। सिद्धों में कति संचय अल्प है, उससे अवक्तव्य संख्यात गुणा।

4. एक दो तीन चार पांच संख्या ''नो छक्क'' है। छह संख्या छक्क है। सात से 11 छक्क और नो छक्क है। 12, 18आदि संख्या अनेक छक्क है। 13, 14 आदि एवं 19-20 आदि अनेक छक्क एवं नो छक्क है। ये पांच भंग है।

पांच स्थावर में चौथे पांचवें दो भंगों से जीव उत्पन्न होते हैं। शेष दंडकों में पांचों भंग से जीव उत्पन्न होते हैं। शेष दंडकों में पांचों भंग से जीव उत्पन्न होते हैं। सिद्धों में भी पांचों भंग से उत्पन्न होते हैं।

अल्पबहुत्व- भंग के क्रम से ही संख्यातगुणे संख्यातगुणे होते हैं। सिद्धों में उल्टे क्रम से संख्यात गुणा कहना।

''छक्क'' के समान ''बारस'' के पांच भंग होते हैं उनमें भी उत्पत्ति एवं अल्पबहुत्व इसी प्रकार होती है। केवल छक्क के स्थान पर ''बारस'' कहना है संख्या 12 के पहले की बाद की एवं 12 से दुगुनी तिगुनी आदि समझना। उत्पन्न होने की अपेक्षा ''छक्क सम्मर्जित एवं बारस सम्मर्जित'' ऐसे शब्दों का प्रयोग मूल का पाठ में किया गया है।

इसी तरह ''चौरासी सम्मर्जित'' भी कहा गया है। उसके भंग आदि वर्णन छक्क सम्मर्जित के समान है किन्तु सिद्ध में चौरासी सम्मर्जित के पांच भंगों में से प्रारम्भ के तीन भंग होते हैं। चौथा पांचवां भंग नहीं होता है।

शतक इक्कीसवां

पहला वर्ग-

चावल, गेहूं, जौ, जवार, आदि धान्य के दस विभाग है- 1. मूल, 2. कंद, 3. स्कंध, 4. त्वचा, 5. शाखा, 6. प्रवाल, 7. पत्र, 8. पुष्प, 9. फल, 10. बीज। इन दसों विभागों में जीव आकर उत्पन्न होते हैं।

इन दस विभाग के जीवों की 1. उत्पत्ति संख्या, 2. आगति, 3. अपहार समय, 4. अवगाहना, 5.बंध, 6. वेदन, 7. उदीरणा, 8. लेश्या, 9. दृष्टि, 10. कायस्थिति, 11. भवादेश कालादेश, 12. सर्वजीव उत्पन्न आदि द्वारों का वर्णन ग्यारहवें शतक के पहले उद्देशक के समान जानना चाहिये।

कुछ विशेषता निम्न है-

1. अवगाहना - जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट अनेक धनुष ।

2. स्थिति - जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अनेक वर्ष (3 वर्ष)

3. कायस्थिति - जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंख्य काल।

4. आगति - मूल कंद आदि सात विभागों में देव नहीं आते हैं। पुष्प फल बीज में देव आते हैं। उनकी अपेक्षा लेश्या 4 और भंग 80 होते हैं।

5. पुष्प फल बीज की अवगाहना - जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अनेक अंगुल की होती है।

इससे **पहले वर्ग-** के कंद, मूल, स्कंध आदि के 10 उद्देशक होते हैं। सात उद्देशक का वर्णन समान है। फल, फूल, बीज के वर्णन में आगति और अवगाहना में उपर्युक्त अंतर है।

दूसरा वर्ग- चना, मसूर, तिल, मूंग, उड़द, कुलत्थ आदि वर्णन प्रथम वर्ग के समान है स्थिति उत्कृष्ट अनेक वर्ष की है उसमें पांच वर्ष जानना।

तीसरा वर्ग- अलसी, कुसंभ, कोद्रव, कंगु सण सरसों आदि बीजों की जाति। इनका वर्णन भी प्रथम वर्ग के समान है। स्थिति सात वर्ष की है।

चौथा वर्ग- बांस, वेणु, दंड, कल्कावंश, चारूवंश आदि का वर्णन प्रथम वर्ग के समान है किन्तु इनके दसों विभाग में देव उत्पन्न नहीं होते हैं। आगति में अंतर एवं लेश्या भी तीन ही कहना जिससे लेश्या के भंग 26ही होंगे।

पांचवा वर्ग– इक्षु, वीरण, इक्कड, भमास, सूंठ, तिमिर सतपोरग और नल आदि का वर्णन बांस आदि के चौथे वर्ग के समान है किन्तु इनके स्कंध उद्देशक में देव आकर उत्पन्न होते हैं। शेष 9 विभागों में देव नहीं आते हैं। देवों की अपेक्षा 4 लेश्या 80 भंग भी कहना।

छट्ठा वर्ग– दर्भ, कोतिय, पर्वक, पौदिना, अर्जुन, भुस, एरंड, कुरूकंद, मधुरतृण आदि का वर्णन तीसरे वंश वर्ग के समान है।

सातवां वर्ग– अध्यारोह (एक वृक्ष में दूसरा वृक्ष), वत्थुल, मार्जारक, चिल्लि, पालक, शाक, मंडुकी, सर्षप, आंबिल शाक आदि का वर्णन बांस के वर्ग के समान जानना।

आठवां वर्ग– तुलसी, चूयणा, जीरा, दमणा, मरूया, इन्दीवर, शतपुष्पी आदि का वर्णन बांस के समान है।

विशेष– 1-2-3 वर्ग में अंतिम तीन उद्देशक में देव उत्पन्न होते हैं। पांचवें वर्ग में स्कंध के तीसरे उद्देशक में देव उत्पन्न होते हैं। शेष वर्ग एवं उद्देशकों में देव उत्पन्न नहीं होते हैं। स्थिति सभी की 8×10=80 उद्देशकों में ''अनेक वर्ष'' है। चावल आदि की तीन वर्ष आदि स्थिति पहले इसी सूत्र में कही गई है जो यहां पर कहे गये अनेक वर्ष से अबाधित है।

बावीसंवा शतक

पहला वर्ग– ताल, तमाल, कदलि (केला), तेतलि, तक्कली, देवदारू, केवड़ा, गूंद, हिंग, लवंग, सुपारी खजूर नारियल आदि का वर्णन शालि वर्ग के समान है किन्तु निम्न विशेषता है-

1. मूल आदि पांच विभाग में देव उत्पन्न नहीं होते हैं अतः लेश्या तीन है।
2. प्रवाल आदि पांच में देव उत्पन्न होते हैं। अतः लेश्या चार है।
3. स्थिति- मूल आदि पांच की जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट 10000 वर्ष है।
4. शेष पांच की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनेक वर्ष की है।
5. **अवगाहना उत्कृष्ट–** मूल और कंद की अनेक धनुष, त्वचा शाखा की अनेक कोश है। प्रवाल और पत्र की अनेक धनुष है। पुष्प की अनेक हाथ, फल बीज की अनेक अंगुल की है। जघन्य और मध्यम विविध प्रकार की अवगाहना हो सकती है।

दूसरा वर्ग– नीम, आम्र, जम्बू, पीलू, सेलु, सल्लकी, पलाश, करंज, पुत्रंजीवक, अरीठा, हरड़ा, बहेड़ा, चारोली, नागकेशर, श्रीपर्णी, अशोक आदि। इनका वर्णन भी प्रथम ताल वर्ग के समान है।

तीसरा वर्ग– अस्थिक, तिंदुक, बोर, कपित्थ, अम्बाडग, बिजोरा, आंवला, फणस, दाडिम, पीपल, उंबर, वड, न्यग्रोध, नंदीवृक्ष, पीपर, सतर, सप्त पर्ण, लौद्र, धव, चन्दन, कुटज, कदंब, आदि का वर्णन भी ताड़ वृक्ष वर्ग के समान है।

चौथा वर्ग– बंगन, पोंडई गंज, अंकोल्ल आदि का वर्णन बांस वर्ग के समान है।

पांचवा वर्ग– श्रियक, सिरियक, नवनालिक, कोरंटक, बन्धुजीवक, मणोजा, नलिनी कुंद इत्यादि का वर्णन शालि वर्ग के समान है।

छट्ठा वर्ग– पूसफलिका, तुम्बी त्रपुषी (ककड़ी) एलवालुंकी आदि वल्लियों का वर्णन ताड़ वर्ग के समान है किन्तु स्थिति उत्कृष्ट अनेक वर्ष ही है। फल की अवगाहना उत्कृष्ट अनेक धनुष की है।

छः वर्ग के 60 उद्देशक इस शतक में है।

तेवीसवां शतक

पहला वर्ग- आलू, मूला, अदरक, हल्दी, क्षीर विराली, मधुश्रृंगी, सर्पसुगन्धा, छिन्नरूहा, बीजरूहा, आदि का वर्णन वंश के समान है विशेषता निम्न है-

1. परिमाण - एक समय में एक दो तीन उत्कृष्ट अनंता जीव उत्पन्न होते हैं।

2. स्थिति - अनंत जीव उत्पन्न होने वालों की जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है। शेष की बांस के समान है।

दूसरा वर्ग- लोही, नीहू, थीहू, अश्वकर्णी, सिंहकर्णी, सिउंढी, मुसुंढी आदि आलू वर्ग के समान है ''अवगाहना ताड़ वर्ग'' के समान है।

तीसरा वर्ग- आय, काय, कुहुणा, सफा, सज्जा, छत्रा, कुन्दुरूक्क आदि दूसरे वर्ग के समान है।

चौथा वर्ग- पाठा, मृगवालुंकी, मधुर रसा, राजवल्ली, पद्मा, मोढरी, दंती, चंडी आदि का वर्णन आलू वर्ग के समान है। अवगाहना वल्ली वर्ग के समान है।

पांचवां वर्ग- माषपर्णी, मुद्गपर्णी, जीवक, काकोली, क्षीर काकोली, कृमिराशि, भद्रमुस्ता आदि का वर्णन आलु वर्ग के समान है।

कुल पांच वर्ग के 50 उद्देशक इस शतक में है। इनमें कहीं भी देव उत्पन्न नहीं होते हैं। अतः तीन लेश्या ही होती है।

चौबीसवां शतक (गम्मा वर्णन)

घर- चौबीस दंडक जीवों के घर के रूप में है। इन्हीं के 44 स्थान है- 22 दंडक के 22, सात नारकी के 7, वैमानिक के 15 = (12 देवलोक के 12, नवगैवेयक, चार अणुत्तर विमान और सर्वार्थ सिद्ध का एक-एक स्थान।) ये दो दंडक के 7+15 = 22 स्थान है। 22 दंडक के 22 और दो दंडक के 22 मिलाने पर 22+22 = 44 स्थान घर होते हैं। 24 दंडक के ही ये 44 घर कहे गये हैं।

जीव- 42 घर के 42 जीव है। मनुष्य और तिर्यंच के घर में 3-3 जीव है- सन्नी, असन्नी और युगलिया। अतः कुल 42+6= 48 जीव है। आगति-प्रत्येक घर में 48 जीवों में से जितने जीवों की आगति होती है उनका योग करने पर 321 होता है। इन 321 का खुलासा चार्ट में देखें-

6. गति द्वार- 23 पदवी वाले किस किस गति में जा सकते हैं-

23 पदवी के जीव की गति	पदवी	विवरण
1 से 4 नरक तक	11	7 पंचेन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, वासुदेव, मांडलिक राजा, सम्यग्दृष्टिये जावे
5 से छठी नरक तक	9	11 में से हाथी घोड़ा छोड़कर
सातवी नरक तक में	7	श्रीदेवी और सम्यक् दृष्टि छोड़कर
भवनपति से 12वें देवलोक तक	4	साधु, श्रावक, सम्यक्दृष्टि, मांडलिकराजा
नव ग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर में	2	साधु, सम्यक् दृष्टि
पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य	8	सात एकेन्द्रिय रत्न, मांडलिक राजा
विकलेन्द्रिय, सन्नी ति.पं., सन्नी मनुष्य, असन्नी ति.पं.	9	सात एकेन्द्रिय रत्न, मांडलिकराजा, सम्यक् दृष्टि

(5) भव के स्थान–पाँचवे बोल में भव के 16 स्थान है–

क्र. सं.	भव का स्थान	स्थानों (घरों) में जावे	स्थिति वाला जावे	स्थिति पावे	भव करे
(1)	असंज्ञी तिर्यंच मरकर	12 घर–10 भवनपति 1 वाणव्यंतर पहली नरक (वैक्रिय के)	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	ज. दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग	जघन्य उत्कृष्ट दो भव करे
(2)	संज्ञी तिर्यंच मरकर	26 स्थान–वैक्रिय के पहली से छठी नरक, 20 देवता (आठवें तक)	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने–अपने स्थान अनुसार	जाने–आने आसरी जघन्य 2 उत्कृष्ट 8
(3)	संज्ञी तिर्यंच मरकर	सातवीं नरक में	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	ज. 22 सागरोम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जाने आसरी 6 गम्मा से ज. 3 उत्कृष्ट 7 (3, 6, 9 छोड़कर) तीन गम्मा से ज. 3 उ. 5 (3, 6, 9 गमा) आने आसरी 1 से 6 गम्मा ज. 2 उ. 6 भव आने आसरी 3 गम्मा (7, 8, 9) ज. 2 उ. 4 भव
(4)	संज्ञी मनुष्य मरकर	15 स्थान वैक्रिय 10 भवनपति 1 व्यंतर, 1 ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक 1 पहली नरक	ज. पृथकत्व मास उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने–अपने स्थान से	जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव

(5)	सन्नी मनुष्य	11 वैक्रिय के-दूसरी से छठी पाँच नरक, 3 से 8, ये 6 देवलोक	ज. प्रत्येक वर्ष उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने-अपने स्थान के अनुसार	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव
(6)	संज्ञी मनुष्य	5 वैक्रिय-9 से 12वां देवलोक के 4, नवग्रैवेयक का एक ये 5 स्थान	"	"	जाने का जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 7, आने का ज. 2 भव उत्कृष्ट 6 भव
(7)	संज्ञी मनुष्य	4 अणुत्तर विमान	"	जघन्य 31 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जाने का ज. 3 उत्कृष्ट 5 भव आने का ज. 2 भव उत्कृष्ट 4 भव
(8)	संज्ञी मनुष्य	सर्वार्थ सिद्ध विमान	"	33 सागरोपम	जाने का 3 भव आने का 2 भव
(9)	संज्ञी मनुष्य	सातवीं नरक	"	ज. 22 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव
(10)	दो प्रकार के युगलिया	वैक्रिय के 14 घर-10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक	10 भवन, वाणव्यंतर में ज. करोड़ पूर्व झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम ज्योतिषी-ज. पल्योपम का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 3 पल्योपम पहला देव-1 पल्य उत्कृष्ट 3 पल्योपम दूसरा देव-1 पल झाझेरी 3 उत्कृष्ट 3 पल्य	असुरकुमार-ज. 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट 3 पल्य। नौ निकाय में उ. देशोन दो पल्य। व्यंतर में उत्कृष्ट 1 पल्योपम (ज. एक सरीखा) पल्योपम का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष जघन्य 1 पल्य उत्कृष्ट 3 पल्योपम ज. 1 पल्य झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव

(11)	14 देवता 10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक	पृथ्वी, पानी, वन स्पति में 9 गम्मे से जावे	अपने-अपने स्थान की स्थति से जावे	अपने-अपने स्थान की स्थिति पावे	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव करे
(12)	4 स्थावर (पृथ्वी पानी तेउ वायु) वनस्पति मरकर वनस्पति मरकर	5 स्थावर में 5X4=20 बोल 4 बोल 24 बोल 4 स्थावर में वनस्पति में	अपनी-अपनी स्थिति दो अन्तर्मुहूर्त अनन्ता काल	दो अन्तर्मुहूर्त और असंख्याता काल दो अन्त.अनन्ता काल	4 गम्मे से (1, 2 4, 5) ज. 2 उत्कृष्ट असंख्याता भव 4 गम्मे (1, 2 4, 5) से ज. 2 उत्कृष्ट अनंत 5 गमे से (3,6,7 8,9) ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव
(13)	पाँच स्थावर 3 विकलेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय 5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय	तीन विकलेन्द्रिय 3X5=15 '' 3X3=9 पाँच स्थावर में 5X3=15=39 तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अपनी-अपनी स्थिति '' '' '' '' ''	अपने-अपने स्थान से '' '' '' '' ''	4 गम्मे से ज. 2 भव और संख्याता भव 5 गम्मे से ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव
(14)	संज्ञी, असंज्ञी तिर्यंच	10 स्थान औदारिक पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने-अपने स्थान से	जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव
(15)	पृथ्वी पानी वनस्पति, 3 विकलेन्द्रिय सन्नी असन्नी मनुष्य	मनुष्य आठ औदारिक पृथ्वी पानी, वनस्पति, 3 विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य	अपनी-अपनी स्थिति वाले	अपने-अपने स्थिति से	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव
(16)	संज्ञी असंज्ञी मनुष्य	तेउकाय वायुकाय	''	''	2 भव

14 चौदहवां द्वार- आगति-अन्य भवों से विवक्षित भव में आने की योग्यता 'आगति' कहलाती है। मृत्यु और उत्पत्ति की एक समय की संख्या, अन्तर इसी द्वार से ज्ञातव्य होगी।

	तीर्थंकरादि की आगत	**नारकी**	**देवता**	**तिर्यंच**	**मनुष्य**	**कुल भेद**
1	तीर्थंकर	प्रथम तीन नरक	35 वैमानिक देव	×	×	38 की आगत
2	चक्रवर्ती	प्रथम नरक	15 परमा धामी 3 किल्विषी छोड़ 81 देव	×	×	82 की आगत
3	बलदेव	प्रथम दो नरक	81 जाति के देव	×	×	83 की आगत
4	वासुदेव	प्रथम दो नरक	पांच अणुत्तर छोड़ 30 वैमानिक देव	×	×	32 की आगत
5	मांडलिक राजा	1 से 6 नरक	99 जाति के देव	तेउवायु छोड़ 40 भेद	15 कर्मभू. के पर्याप्त अप., 101 समु. अप. ये 131 भेद	276 की आगत
6	पांच पंचेन्द्रिय रत्न सेनापति से श्री देवी आदि	प्रथम 6 नरक	5 अणुत्तर छोड़कर 94 जाति के देव	40 भेद उपर जैसे	131 भेद पूर्ववत्	271 की आगत
7	अश्वरत्न, हस्तिरत्न	सात नरक	आठवें देवलोक तक 81 जाति के देव	48 भेद	131 भेद	267 की आगत
8	सात एकेन्द्रिय रत्न	×	दूसरे देवलोक तक 64 जाति के देव	48 भेद	131 भेद	243 की आगत

आगत जीव	**नरक गति में 5**	**देवगति बोल में 5**	**संज्ञीति. में 6 बोल**	**मनुष्य में 10 बोल**	**विवरण**
पहली चार नरक से	×	×	6	10	यथा योग्य सभी बोल
पांचवी नरक से	×	×	6	7	मनःपर्यवादि तीन नहीं पाते
छठी नरक से	×	×	6	6	संयमादि चार नहीं पाते
7वीं नरक से	×	×	5	×	तिर्यंच में ही जाते है 5 बोल देशविरति नहीं
भवनपति से 8वें देव.	×	×	6	10	यथा योग्य सभी
9वें देव से सर्वार्थ सिद्ध	×	×	×	10	सिर्फ मनुष्य गति, यथा योग्य बोल पावे.
पृथ्वी पानी वनस्पति	×	×	6	10	यथा योग्य सभी
तेउकाय वायुकाय	×	×	6	×	एक तिर्यंच गति
विकलेन्द्रिय से	×	×	6	8	तिर्यंच के 6, मनुष्य के अन्तिम दो नहीं
तिर्यंच पंचेन्द्रिय से	5	5	6	10	चारों गति में यथा योग्य
मनुष्य से	5	5	6	10	चारों गति में यथा योग्य

5. आगति द्वार– 24 दंडक में से आकर कितनी पदवी पाता है, 23 में से इस प्रकार–

आगत जीव	पदवी	विवरण
पहली नरक से	16	सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़कर
दूसरी नरक से	15	सोलह में से चक्रवर्त्ती छोड़कर
तीसरी नरक से	13	पन्द्रह में से बलदेव-वासुदेव छोड़कर
चौथी नरक से	12	तेरह में से तीर्थंकर कम करना
पांचवी नरक से	11	बारह में से केवली कम करना
छठी नरक से	10	ग्यारह में से साधु कम
सातवीं नरक से	3	हाथी, घोड़ा, सम्यग्दृष्टि पावे
भवनपति से ज्यो. तक	21	तीर्थंकर, वासुदेव छोड़ शेष 23 में से
1-2 देवलोक	23	सभी
3 से 8 देवलोक	16	सात एकेन्द्रिय छोड़कर
9 देव. से 9 ग्रैवेयक	14	16 में से हाथी, घोड़े छोड़कर
पांच अणुत्तर	8	नो मोटी पदवी में से वासुदेव छोड़कर
पृथ्वी, पानी, वनस्पति, सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य	19	23 में से तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव वासुदेव छोड़कर
विकले. असनीति. असन्नी मनुष्य	18	उन्नीस में से केवली पदवी छोड़कर
तेउ वायु	9	सात एकेन्द्रिय, हाथी, घोड़ा ये 9 पदवी

आगति के 321 स्थान

घर	जीव	आगत संस्था	विवरण (आगत संख्या)
1	पहली नरक	3X1=3	असन्नी तिर्यंच, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य।
6	शेष 6 नरक	2X6=12	सन्नी तिर्यंच, मनुष्य।
10	दस भवनपति	5X10=50	सन्नी असन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य, दो युगलिया
1	व्यंतर देव	5X1=5	सन्नी असन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य, दो युगलिया
1	ज्योतिषी देव	4X1=4	उक्त पाँच में एक असन्नी तिर्यंच कम हुआ
2	पहला दूसरा देवलोक	4X2=8	उक्त पाँच में एक असन्नी तिर्यंच कम हुआ
6	3 से 8 देवलोक	2X6=12	सन्नी तिर्यंच मनुष्य
7	शेष देवता	1X7=7	मनुष्य
3	पृथ्वी पानी वनस्पति	26X3=78	भवनपति आदि 14 देवता (दूसरे देव तक) 12 औदारिक
2	तेउकाय, वायुकाय	12X2=24	12 औदारिक
3	विकलेन्द्रिय	12X3=36	12 औदारिक
1	तिर्यंच	39X1=39	48 में से 7 देवता (ऊपर के) दो युगलिया कम ये 39
1	मनुष्य	43X1=43	48 में से तेउ, वायु, 7वीं नरक, दो युगलिया कम ये 43
योग	44	आगत 321	वैक्रिय में 101, औदारिक में 220 की आगति है।

गम्मा– प्रत्येक आगति के बोल के विषय में 9 प्रकार- गमक- अपेक्षाएं पृच्छाएं होती है। ये 9 गमक (प्रकार) स्थिति की अपेक्षा होते हैं। आने वाले जीव की समुच्चय, जघन्य, और उत्कृष्ट स्थिति एवं उत्पन्न होने के स्थान = घर में प्राप्त होने वाली समुच्चय जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति की अपेक्षा से 9 गमक बनते हैं वे इस प्रकार हैं-

1. औघिक (समुच्चय) औघिक,	2. औघिक जघन्य,	3. औघिक उत्कृष्ट
4. जघन्य औघिक	5. जघन्य जघन्य	6. जघन्य उत्कृष्ट
7. उत्कृष्ट औघिक	8. उत्कृष्ट जघन्य	9. उत्कृष्ट उत्कृष्ट

321 आगति में प्रत्येक के 9 गमक होने से 321 × 9 = 2889 गमक होते हैं। इन गमक को ही ''गम्मा'' कहते हैं जिसका अर्थ है वस्तु तत्त्व के पूछने के समझने के तरीके। इसका तात्पर्य यह है कि एक-एक आगति के बोल में स्थिति की अपेक्षा 9-9 प्रश्नों द्वारा उनके विषय में ऋद्धि जानना एवं समझना।

शून्य गम्मा– सर्वत्र जघन्य उत्कृष्ट स्थिति हों तो 2889 गम्मा बनते हैं किन्तु कहीं तो एक ही स्थिति है और कहीं एक स्थिति ही प्राप्त होती है तो वहां उस आगति के स्थान से 9 गम्मा नहीं बनते हैं यथा-

1. असन्नि मनुष्य की स्थिति केवल अंतर्मुहूर्त ही है। अतः तीन गम्मा (स्थिति सम्बन्धी तीन प्रश्न) ही होते हैं 6 कम हुए। औदारिक के दस घरों में असन्नि मनुष्य जाता है उन सभी जगह 6-6 कम होने से 10 × 6= 60 गम्मा शून्य है अर्थात् ये प्रश्न नहीं बनते हैं।

2. सर्वार्थ सिद्ध में 33 सागर की एक ही स्थिति है। वे देव केवल मनुष्य में ही जाते हैं और केवल मनुष्य ही उनमें आता है अतः इन 2 आगत स्थान में 6-6गम्मा कम होने से 12 गम्मा शून्य है।

3. तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया ये दो जीव ज्योतिषी और पहला दूसरा देवलोक में जाते हैं। तब जघन्य स्थिति के युगलिये वहां एक ही स्थिति में उत्पन्न होते हैं जिससे एक चौथा गम्मा ही बनता है किन्तु पांचवा छट्ठा गम्मा नहीं बनता है। अतः युगलिया × स्थान × गम्मा = 2×3×2 =12 गम्मा शून्य है।

उक्त तीनों को मिलाकर 60+12+12 = 84 गम्मा शून्य है। इन्हें टूटे गम्मे भी कहा जाता है।

2889 -84 = 2805 वास्तविक सही गम्मा = प्रश्न उत्तर, विकल्प होते हैं, जो 44 घर में 48 जीवों के 321 आगति स्थानों में 9-9 गम्मा करने से एवं उक्त 84 घटाने से 2805 होते हैं।

ऋद्धि– इन 2805 गम्मा अथवा प्रश्न विवक्षा में से प्रत्येक पर 20 द्वारों का वर्णन है। इन बीस द्वारों के सम्पूर्ण वर्णन को ऋद्धि कहा जाता है। वे द्वार इस प्रकार हैः-

1. उपपात, 2. परिमाण, 3. सहंनन, 4. अवगाहना, 5. संस्थान, 6. लेश्या, 7. दृष्टि, 8. ज्ञान-अज्ञान, 9, योग, 10. उपयोग, 11. संज्ञा, 12. कषाय, 13. इन्द्रिय, 14. समुद्घात, 15. वेदना, 16. वेद, 17. आयु, 18. अध्यवसाय, 19. अनुबंध, 20. काय संवेध।

समऋद्धि (स्थिर ऋद्धि)– इन बीस द्वारों में आठ द्वार ऐसे हैं जिनका वर्णन समान रहता है। अर्थात् 48 जीव 321 में से किसी भी आगति स्थान से जावे या 9 गम्मों में से किसी भी गम्मे से जावे तो भी आठ द्वारों का वर्णन स्थिर रहता है वे इस प्रकार है-

जीव	जीव	1	2	3	4	5	6	7	8
संख्या	नाम	संहनन	संस्थान	संज्ञा	कषाय	इन्द्रिय	वेदना	वेद	उपयोग
7	नारकी	नहीं	हुंडक	4	4	5	2	1	2
14	देवता	नहीं	समचोरस	4	4	5	2	2	2
13	देवता	नहीं	समचोरस	4	4	5	2	1	2
5	स्थावर	सेवार्त	हुंडक	4	4	1	2	1	2
3	विकलेन्द्रिय	सेवार्त	हुंडक	4	4	2-3-4	2	1	2
1	असन्नी मनुष्य	सेवार्त	हुंडक	4	4	5	2	1	2
1	असन्नी तिर्यंच	सेवार्त	हुंडक	4	4	5	2	1	2
1	सन्नी तिर्यंच	6	6	4	4	5	2	3	2
1	सन्नी मनुष्य	6	6	4	4	5	2	3	2
2	दो युगलिया	1	1	4	4	5	2	2	2
48									

विशेष- (1) यहां भवनपति से दूसरे देवलोक तक 14 देवता कहे हैं, शेष तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक 13 देवता होते हैं।

(2) पहली दूसरी नरक में जाने वाले तिर्यंच मनुष्य में 6सहंनन, इसी प्रकार तीसरी में = 5, चौथी में = 4, पांचवी में = 3, छट्ठी में = 2, सातवीं में = 1, चौथे देवलोक तक जाने वाले में = 6 संहनन, पांचवे छट्ठे में = 5, सातवें-आठवें में = 4, नौंवे से 12 वें तक = 3, ग्रैवेयक में -2, अणुत्तर में-1, सहंनन वाला जाता है।

2805 गम्मों में आठ द्वारों की यह उक्त स्थिर ऋद्धि है।

विभिन्न- परिवर्तनीय ऋद्धि- शेष 12 द्वारों में से किसी आगत के स्थान में और किसी गम्मे में कुछ द्वारों में समानता रहती है कुछ में अंतर पड़ता है, भिन्नता रहती है अर्थात् 12 द्वारों में सर्वत्र भिन्नता ही रहे ऐसा नहीं समझना। किसी आगत स्थान एवं गम्मे में 2 द्वारों (बोलों) में अंतर पड़ता है किसी आगत स्थान एवं गम्मे में 3-4-5-6-7-8-9 बोलों में अंतर पड़ता है। वे बारह द्वार ये हैं- 1. उपपात- प्राप्त करने की स्थिति, 2. परिमाण- उत्पन्न होने वालों की संख्या, 3. अवगाहना, 4. लेश्या, 5. दृष्टि, 6. ज्ञान-अज्ञान, 7. योग, 8. समुद्घात, 9. आयु, 10. अध्यवसाय, 11. अनुबंध, 12. काय संवेध के दो प्रकार- भवादेश और कालादेश। इन 12 द्वारों में पड़ने वाले अन्तर= फर्क= विशेषताएं= परिवर्तन = णाणत्ते इस प्रकार है-

उद्देशक	नाम	विवरण नाणत्ता		योग
1	नरक में	असन्नी तिर्यंच के 5, सन्नी तिर्यंच के 70, मनुष्य के 44 (6X6+8)		119
2 से 11	भवनपति में	असन्नी के 50, सन्नी ति. 100 मनुष्य के 80 युगलिया के 110		340
12	पृथ्वीकाय में	औदारिक के 89 वैक्रिय के 56 (14X4)		145
13	अप्काय में	औदारिक के 89 वैक्रिय के 56 (14X4)		145
14	तेउकाय में	औदारिक के 89		89
15	वायुकाय में	औदारिक के 89		89
16	वनस्पति में	पृथ्वीकाय के समान औदारिक 89 वैक्रिय के 56		145
17 से 19		तीन विकलेन्द्रिय तेउकाय के समान 89X3 औदारिक के		267
20		तिर्यंच पंचेन्द्रिय औदारिक के 89 वैक्रिय के 108 (27X4)		197
21	मनुष्य में	औदारिक के 78, वैक्रिय के 128 (32X4)		206
22	व्यंतर में	आसन्नी के 5 सन्नी के 10 मनुष्य के 8 युगलिया के 11		34
23	ज्योतिषी में	सन्नी के 10, मनुष्य के 8 युगलिया के 11		29
24	वैमानिक	दो देवलोक में 29X2=58	58	58
		6 देवलोक में 6+10=16X6=96–3	93	93
		ऊपर के 7 देवस्थानों में 6X7	42	42
			193	
		24 उद्देशकों में कुल णाणत्ता		1998

1. उपपात– उत्पत्ति स्थान में प्राप्त की जाने वाली स्थिति को यहां उपपात कहा गया है। पहले चौथे और सातवें गम्मे से जाने वाला उत्पत्ति स्थान की जघन्य से उत्कृष्ट तक की सभी स्थितियें प्राप्त करता है। दूसरे पांचवें और आठवें गम्मे से जाने वाले उत्पत्ति स्थान की योग्य जघन्य स्थिति प्राप्त करते हैं। तीसरे, छट्ठे और नवें गम्मे से जाने वाले उत्पत्ति स्थान की उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त करते हैं। किन्तु तिर्यंच मनुष्य के युगलिये ज्योतिषी और पहले दूसरे देवलोक में उत्पन्न होवे तो चौथे पांचवें छट्ठे तीनों गम्मों में वहां की जघन्य स्थिति ही प्राप्त करते हैं। किन्तु उपरोक्त कथन (नियम) के अनुसार चौथे गम्मे में सभी स्थितियाँ और छट्टे में उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त नहीं करते इसी कारण ये 2×3×2 = 12 गम्में नहीं होते हैं। ये टूटे गम्मों की गिनती में है।

2. परिमाण– 1. सातवीं नारकी में तीसरे नौवें गम्मे में आने वाले सन्नी तिर्यंच उत्कृष्ट संख्याता होते हैं। 2. सन्नी मनुष्य सर्वत्र उत्कृष्ट संख्याता ही उत्पन्न होते हैं। 3. युगलिया मनुष्य युगलिया तिर्यंच भी देवों में ही जाते हैं और वे उत्कृष्ट संख्याता ही उत्पन्न होते हैं। 4. सन्नी मनुष्य में उत्पन्न होने वाले नारकी देवता उत्कृष्ट संख्याता ही उत्पन्न होते हैं। 5. शेष सभी बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौरेन्द्रिय पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य नारकी देवता जहां भी जितने गम्मों से उत्पन्न होते हैं वे उत्कृष्ट असंख्याता उत्पन्न होते हैं। उक्त सभी में जघन्य 1-2-3 आदि संख्या से उत्पन्न हो सकते हैं।

6. पृथ्वी आदि चार स्थावर में पांच स्थावर उत्पन्न होवे तो पहले, दूसरे, चौथे, पांचवें, गम्मे से निरंतर असंख्य ही उत्पन्न होते हैं। शेष पांच गम्मों में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्य उत्पन्न होते हैं।

7. वनस्पति में चार स्थावर उत्पन्न होवे तो उक्त चार गम्मों से प्रति समय असंख्य असंख्य और शेष पांच गम्मों से जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्य उत्पन्न होते हैं। वनस्पति वनस्पति में उक्त चार गम्मों से प्रतिसमय अनंत उत्पन्न होते हैं शेष पांच गम्मों में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्य उत्पन्न होते हैं।

3. अवगाहना– 1. नारकी देवता जहां भी जितने भी गम्मों से उत्पन्न होते हैं उनकी जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना सर्वत्र एक सरीखी होती है जो कि उनकी अवगाहना प्रज्ञापना सूत्र जीवाभिगम सूत्र में कही गई है।

2. पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय सन्नी असन्नी तिर्यंच एवं सन्नी असन्नी मनुष्य, औदारिक के दस स्थानों में उत्पन्न होते हैं तो चौथे पांचवें छट्ठे तीन जघन्य गम्मों में अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग ही होती है। शेष गम्मों में उनकी जीवाभिगम सूत्र कथित जघन्य उत्कृष्ट सभी अवगाहना होती है। किन्तु सन्नी मनुष्य के सातवें आठवें, नौवें गम्में में सर्वत्र अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट 500 धनुष होती है और तीसरे गम्मे से मनुष्य एवं तिर्यंच में जावे तो अवगाहना जघन्य अनेक अंगुल और उत्कृष्ट 500 धनुष होती है।

3. असन्नी तिर्यंच मरकर नारकी देवता में जहां भी जितने भी गम्मों से उत्पन्न होता है सर्वत्र उसकी अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट जीवाभिगम कथित ही होती है, कोई फर्क नहीं होता है।

4. सन्नी तिर्यंच मरकर नारकी देवता में उत्पन्न होता है तो उसके चौथे पांचवें छट्ठे गम्में में अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अनेक धनुष की होती है। शेष 6 गम्मों में उसके आगमोक्त जघन्य उत्कृष्ट सभी अवगाहनाएं होती है।

5. सन्नी मनुष्य भवनपति व्यंतर ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक और पहली नरक में उत्पन्न होता है तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्में में अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट अनेक अंगुल की होती है शेषनरक देवों के 19 स्थान में जावे तो इन तीन जघन्य के गम्मों में अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट अनेक हाथ की होती है। सातवें आठवें नौवें गम्मे से जावे तो अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट 500 धनुष होती है। शेष तीन (1-2-3) गम्मों से जावे तो उक्त दोनों अवगाहनाओं के मध्य की सभी अवगाहनाएं होती है। उसके अतिरिक्त कम या अधिक अवगाहना नहीं होती है।

6. युगलिया तिर्यंच चौथे, पांचवें छट्ठे गम्मे से भवनपति, व्यंतर में जाता है तो अवगाहना जघन्य अनेक धनुष उत्कृष्ट हजार धनुष होती है। ज्योतिषी में चौथे गम्मे से (पांचवां छट्ठा गम्मा शून्य है) जाता है तो अवगाहना जघन्य अनेक धनुष उत्कृष्ट 1800 धनुष होती है। पहले दूसरे देवलोक में चौथे गम्मे से (पांचवा, छट्ठा गम्मा शून्य है) जाता है तो अवगाहना जघन्य अनेक धनुष उत्कृष्ट क्रमशः 2 कोश और 2 कोश साधिक होती है। शेष 6 गम्मों में अवगाहना जघन्य अनेक धनुष उत्कृष्ट 6 कोश होती है।

7. मनुष्य युगलिया चौथे पांचवे छट्ठे गम्में से भवनपति व्यंतर में जावे तो अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट 500 धनुष साधिक होती है। ज्योतिषी में चौथे गम्मे से (पांचवा छट्ठा गम्मा शून्य है) जावे तो अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट 1000 धनुष साधिक होती है। पहले दूसरे देवलोक में चौथे गम्मे से (पांचवा छट्ठा गम्मा शून्य है) जावे तो अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट क्रमशः एक कोश और एक कोश साधिक होती है। सातवें आठवें नौवें गम्मे से जावे तो अवगाहना सर्वत्र जघन्य उत्कृष्ट 3 कोश की होती है। शेष पहले दूसरे दो गम्मों से जावे तो अवगाहना सर्वत्र जघन्य 500 धनुष साधिक उत्कृष्ट 3 कोश होती है। तीसरे गम्मे से भवनपति और पहला दूसरा देवलोक में जावे तो जघन्य उत्कृष्ट 3 कोश की होती है। व्यंतर में जावे तो जघन्य एक कोश उत्कृष्ट3 कोश होती है। ज्योतिषी में जावे तो जघन्य एक कोश साधिक उत्कृष्ट 3 कोश होती है।

4. लेश्या– 1. नारकी देवता जहां भी जितने भी गम्मों से जावे उनकी सर्वत्र जीवाभिगम कथित लेश्या ही होती है कोई भिन्नता नहीं होती है।

2. पृथ्वी पानी वनस्पति औदारिक के दस स्थान में चौथे पांचवे छट्ठे गम्मे से उत्पन्न होवे तो लेश्या तीन होती है, शेष 6गम्मों से उत्पन्न होवे तो लेश्या 4 होती है। तेउ वायु तीन विकलेन्द्रिय असन्नि तिर्यंच मनुष्य जहां भी जितने भी गम्मों से उत्पन्न होवे तो लेश्या 3 होती है।

3. सन्नी तिर्यंच चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे से नारकी में जावे तो तीन लेश्या, भवनपति से दूसरे देवलोक तक जावे तो 4 लेश्या एवं तीसरे चौथे पांचवें देवलोक में जावे तो 5 लेश्या होती है। शेष 6 गम्मों से जावे तो 6 लेश्या होती है। छट्ठे सातवें आठवें देवलोक में जावे तो सभी गम्मों में 6 लेश्या होती है। औदारिक के दस दंडकों में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में सर्वत्र तीन लेश्या होती है शेष 6 गम्मों में 6 लेश्या होती है।

4. सन्नी मनुष्य नारकी देवता में जितने गम्मों से जावे सर्वत्र लेश्या 6होती है। औदारिक के दस स्थानों में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में तीन लेश्या होती है शेष 6 गम्मों में 6 लेश्या होती है।

5. मनुष्य तिर्यंच दोनों युगलिया भवनपति व्यंतर में जितने गम्मों से जावे सर्वत्र 4 लेश्या, ज्योतिषी पहला दूसरे देवलोक में जावे तो भी सर्वत्र चारों लेश्या होती है।

5. दृष्टि– सभी नरक एवं नौ गैवेयक तक देव जहां भी जितने भी गम्मों से जाते हैं उनमें सर्वत्र दृष्टि तीन होती है। अणुत्तर विमान के देवों में तीनों गम्मों में (6 गम्मे रिक्त है) एक दृष्टि ही होती है।

पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य जहां जितने गम्मों से जाते हैं उनमें एक दृष्टि ही होती है। तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय औदारिक के दस स्थान में जाते हैं तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में एक दृष्टि होती है शेष 6 गम्मों में दो दृष्टि होती है। असन्नी तिर्यंच नारकी देवता में जाता है सभी गम्मों में एक मिथ्या दृष्टि ही होती है।

सन्नी तिर्यंच नारकी देवता में (आठवें देवलोक तक) जाता है तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे से नारकी सहित ज्योतिषी तक जाने वाले में एक दृष्टि होती है उसके आगे के देवों में जाने वालों में दो दृष्टि होती है। शेष 6 गम्मों में सर्वत्र 3 दृष्टि होती है। औदारिक के दस स्थानों में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्में में 1 दृष्टि। शेष 6 गम्मों में तीन दृष्टि होती है।

सन्नी मनुष्य नारकी देवता जहां भी जितने भी गम्मा में जाते हैं, सर्वत्र तीन दृष्टि होती है। औदारिक के 10 स्थानों में जावे तो चौथे पांचवे छट्ठे गम्मे में एक दृष्टि शेष 6 गम्गों में 3 दृष्टि होती है। दोनों प्रकार के युगलिया भवनपति व्यंतर ज्योतिषी में जाते हैं उनमें सभी गम्मों में एक मिथ्या दृष्टि होती है पहले दूसरे देवलोक में जाते हैं उनमें दो दृष्टि होती है।

6. ज्ञान– नारकी देवता जहां भी जितने भी गम्मों से जाते हैं 3 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं। अणुत्तर विमान में केवल 3 ज्ञान होते हैं।

पांच स्थावर असन्नी मनुष्य जहां भी जितने भी गम्मों से जाते हैं, 2 अज्ञान होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय औदारिक के दस स्थान में जाते हैं तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में 2 अज्ञान होते हैं शेष 6गम्मों में 2 ज्ञान 2 अज्ञान होते हैं। असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय नारकी देवता में जाता है सभी गम्मों में 2 अज्ञान होते हैं।

सन्नी तिर्यंच नरक देव में ज्योतिषी तक जाता है तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में 3 अज्ञान होते हैं शेष 6 गम्मों में 3 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं। पहले देवलोक से आठवें देवलोक तक जाता है तो सभी गम्मों में 3 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं। औदारिक के दस घरों में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में 2 अज्ञान। शेष 6 गम्मों में 3 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं।

सन्नी मनुष्य पहली नरक भवनपति से दूसरे देवलोक तक जाता है तो चौथे पांचवे छट्ठे गम्मे से 3 ज्ञान, 3 अज्ञान होते हैं शेष गम्मों से 4 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं। आगे के देवलोकों में जाता है तो सभी गम्मों में 4 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं। औदारिक के दस घरों में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में 2 अज्ञान होते हैं शेष 6 गम्मों में 4 ज्ञान 3 अज्ञान होते हैं।

दोनों प्रकार के युगलिया देवों में ज्योतिषी तक जावे तो सभी गम्मों में 2 अज्ञान होते हैं। पहला दूसरा देवलोक में जावे तो सभी गम्मों में दो ज्ञान 2 अज्ञान होते हैं।

7. योग– नारकी देवता जहां भी जावे सर्वत्र 3 योग होते हैं।

पांच स्थावर असन्नी मनुष्य जहां भी जावे सर्वत्र एक योग होता है। तीन विकलेन्द्रिय असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय औदारिक के स्थान में जावे तो चौथा पांचवां छट्ठा गम्मा में एक योग, शेष 6गम्मों में दो योग होते हैं। असन्नी तिर्यंच नरक देव में जाता है सर्वत्र दो योग होते हैं।

सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य औदारिक के दस स्थान में जावे चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में एक योग शेष 6गम्मों में तीन योग होते हैं। सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य नरक देव में जहां भी जावे सभी गम्मों से 3 योग होते हैं। दोनों युगलियों में सर्वत्र 3 योग होते हैं।

8. समुद्घात– नारकी देवता जहां भी जितने भी गम्मों से जावे तो समुद्घात नारकी में चार देवता में 5 होती है। नौ ग्रैवेयक एवं अणुत्तर देवों में तीन होती है।

वायुकाय जहां जावे चौथे पांचवें छट्ठे गम्मे में समुद्घात 3 होती है। शेष 6 गम्मों में समुद्घात 4 होती है। चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असन्नी तिर्यंच असन्नी मनुष्य जहां भी जावे सभी गम्मों में समुद्घात 3 होती है।

सन्नी तिर्यंच जहां भी जावे चौथे पांचवें छट्ठे गम्में में समुद्घात 3 होती है शेष 6 गम्मों में समुद्घात 5 होती है।

सन्नी मनुष्य औदारिक के दस स्थान में जावे तो चौथे पांचवें छट्ठे गम्में में समुद्घात 3 होती है भवनपति से दूसरे देवलोक तक एवं पहली नरक में जावे तो उक्त तीन गम्मों में पांच समुद्घात होती है शेष 6 गम्मों में समुद्घात 6 होती है। 6 नरक और शेष देवलोकों में जावे तो सभी गम्मों में समुद्घात 6 होती है। दोनों युगलिया जहां भी जावे उनमें तो समुद्घात 3 ही होती है।

9. आयु– जो भी जीव जहां भी जाता है तो 1-2-3 गम्मों में सूत्रोक्त अपनी जघन्य उत्कृष्ट सभी आयुष्य होती है। 4-5-6 गम्मों में अपनी जघन्य आयु होती है। अर्थात् नरक देव में 10000 वर्ष आदि और तिर्यंच में अंतर्मुहूर्त होती है। किन्तु मनुष्य में औदारिक के दस स्थानों में जावे तो अंतर्मुहूर्त होती है वैक्रिय के 15 स्थानों में जावे तो अनेक मास की आयु होती है शेष 6नरक और ऊपर के देवता (19 स्थानों) में जावे तो अनेक आयु अनेक वर्ष होती है। 7-8-9 गम्मों में सभी के अपनी सूत्रोक्त उत्कृष्ट आयु होती है। मनुष्य तीसरे गम्में से मनुष्य तिर्यंच में जावे तो आयु जघन्य अनेक मास उत्कृष्ट करोड़ पूर्व होती है।

दोनों प्रकार के युगलिये भवनपति व्यंतर में जावे तो पहले दूसरे दो गम्मों में अपनी सूत्रोक्त सभी आयु होती है, तीसरे गम्मे से भवनपति में जावे तो 3 पल्योपम, व्यंतर में जावे तो जघन्य एक पल्योपम उत्कृष्ट 3 पल्योपम, आयु होती है। 4-5-6गम्मे में करोड़ पूर्व साधिक आयु होती है। 7-8-9 गम्मे में 3 पल्योपम की आयु होती है।

दोनों प्रकार के युगलिये ज्योतिषी में जावे तो 1-2 गम्मों में जघन्य पल्योपम का आठवां भाग उत्कृष्ट 3पल्योपम की आयु होती है तीसरे गम्मे में जघन्य एक पल्योपम साधिक उत्कृष्ट 3 पल्योपम की आयु होती है। तीसरे गम्मे से जावे तो 3 पल्योपम की आयु होती है। चौथे गम्मे (पांचवां छट्ठा गम्मा शून्य है) में पल्योपम का आठवां भाग आयु होती है। 7-8-9 गम्में में 3 पल्योपम की आयु होती है।

दोनों प्रकार के युगलिये पहले दूसरे देवलोक में जावे तो 1-2 गम्मों में क्रमशः जघन्य एक पल्योपम और एक पल्योपम साधिक आयु होती है। उत्कृष्ट 3 पल्योपम होती है। तीसरे गम्मे में जावे तो तीन पल्योपम की आयु होती है। चौथे गम्मे (पांचवा छट्ठा गम्मा शून्य है) से जावे तो दोनों में क्रमशः एक पल्योपम और एक पल्योपम साधिक आयु होती है। 7-8-9 गम्मे से जावे तो 3 पल्योपम की आयु होती है।

10. अनुबंध- आयुष्य के अनुसार ही सर्वत्र अनुबंध होता है अर्थात् 1. गति, 2. जाति, 3. अवगाहना, 4. स्थिति, 5. अनुभाग, 6. प्रदेश इन 6बोलों का अनुबंध आयु के साथ तद्नुरुप होता है।

11. अध्यवसाय- नारकी देवता जहां भी जावे सर्वत्र शुभ अशुभ दो अध्यवसाय होते हैं। सन्नी मनुष्य नरक में जावे तो सर्वत्र अध्यवसाय दो होते हैं।

पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असन्नी सन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य औदारिक के दस स्थानों में जावे चौथे पांचवें छट्ठे में अध्यवसाय एक अशुभ होता है। शेष 6गम्मों में दोनों अध्यवसाय होते हैं।

सन्नी तिर्यंच 4-5-6 गम्मे से नारकी में जावे तो अशुभ और देवता में जावे तो शुभ अध्यवसाय होते हैं शेष 6 गम्मों में दोनों अध्यवसाय होते हैं।

असन्नी मनुष्य औदारिक के 10 स्थानों में जावे तीनों गम्मों (शेष 6 गम्मे शून्य है) में अशुभ अध्यवसाय होते हैं। सन्नी मनुष्य नारकी देवता में जावे सर्वत्र दो अध्यवसाय होते हैं।

दोनों युगलिये देवों में जाते हैं सर्वत्र अध्यवसाय दोनों होते हैं।

12.काय संवेध-भवादेश- 6 नारकी 20 देवता (आठवें देवलोक तक) ये 26 जीव मनुष्य तिर्यंच में जावे तो सभी गम्मों में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8भव करे। सातवीं नारकी का जीव तिर्यंच में जावे 7-8-9 गम्मे से जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 4 भव करे, शेष 6 गम्मों में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 6 भव करे।

9-12 देवलोक ग्रैवेयक के देव मनुष्य में जावे तो सभी गम्मों से जघन्य 2 उत्कृष्ट 6 भव करे। चार अणुत्तर विमान के देव मनुष्य में जावे तो सभी गम्मों से जघन्य 2 उत्कृष्ट 4 भव करे। सर्वार्थ सिद्ध के देव मनुष्य में जावे तो सभी पहले दूसरे तीसरे गम्मे (शेष 6 गम्मे शून्य है) से 2 भव करे। 14 देवता पृथ्वी पानी वनस्पति में जावे सभी गम्मों से जघन्य उत्कृष्ट 2 भव करे।

पृथ्वी आदि चार स्थावर पांच स्थावर में जावे और वनस्पति चार स्थावर में जावे पहले दूसरे चौथे पांचवें गम्मे से जघन्य 2 भव उत्कृष्ट असंख्य भव करे शेष पांच गम्मों में जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव करे। वनस्पति वनस्पति में जावे तो उक्त चार गम्मों से जघन्य 2 उत्कृष्ट अनंत भव करे, शेष पांच गम्मों में जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव करे।

पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में जावे और तीन विकलेन्द्रिय औदारिक के आठ स्थान (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय) में जावे तो पहले दूसरे चौथे पांचवें गम्मे में जघन्य दो भव उत्कृष्ट संख्याता भव करें। शेष 5 गम्मों में जघन्य दो भव उत्कृष्ट 8 भव करे।

पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय आठ जीव मनुष्य तिर्यंच के घर में जावे सन्नी मनुष्य सन्नी तिर्यंच और असन्नी तिर्यंच ये तीन जीव पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में जावे सभी गम्मों में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8भव करे। तेउ वायु के जीव मनुष्य में नहीं आवे।

असन्नी मनुष्य औदारिक के दस स्थान में जावे पहला दूसरा तीसरा तीन गम्मों (6 गम्मे शून्य है) में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव करे।

असन्नी तिर्यंच सन्नी तिर्यंच मनुष्य औदारिक के दो घर (मनुष्य तिर्यंच) में जावे तीसरे नौवें गम्मे से जघन्य उत्कृष्ट दो भव करे शेष 7 गम्मों में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव करे।

असन्नी तिर्यंच 11 देवता एक नरक में जावे जघन्य उत्कृष्ट दो भव करे।

सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य 6 नरक 20 देवता में जावे जघन्य दो उत्कृष्ट 8भव करे। मनुष्य सातवीं नरक में जावे सभी गम्मों में दो भव करे। सन्नी तिर्यंच सातवीं नरक में जावे तीसरे छट्ठे नौंवे गम्मे से जघन्य 3 उत्कृष्ट 5 भव करे शेष 6 गम्मों में जघन्य 3, उत्कृष्ट 7 भव करें। सन्नी मनुष्य चार देवलोक और ग्रैवेयक में जावे सभी गम्मों में जघन्य 3 उत्कृष्ट 7 भव करे। 4 अणुत्तर विमान में जावे सभी गम्मों में जघन्य 3 उत्कृष्ट 5 भव करे। सर्वार्थसिद्ध विमान में जावे 1-4-7 तीन गम्मों से (शेष 6 गम्मे नहीं है) जघन्य उत्कृष्ट 3 भव करे।

दोनों युगलिया 14 देवता में जितने गम्मों से जावे जघन्य उत्कृष्ट दो भव ही करे।

नोटः कुल भव के स्थान दस प्रकार के होते हैं- 2 भव, 3, 4, 5, 6, 7, 8भव, संख्यात भव, असंख्यात भव, अनंत भव अथवा दूसरी तरह से 10 प्रकार- 2 भव, 3 भव, 2-4, 2-6, 2-8भव, 3-5, 3-7, 2- संख्यात, 2-असंख्यात, 2-अनंतभव।

12 काय संवेध-कालादेश- 321 आगति स्थानों के सभी गम्मों का कालादेश अलग अलग होता है। प्रत्येक गम्मे का जघन्य कालादेश दो भव की स्थिति- आयु जोड़ने से होता है और उत्कृष्ट कालादेश उस गम्मे के जितने उत्कृष्ट भव है उनकी स्थिति आयु जोड़ने से होता है।

दो भव हो तो एक आयु आगत स्थान का और एक आयु उत्पत्ति स्थान का जोड़ा जाता है। 8भव हो तो 4-4 गुणे आयु दोनों के जोड़े होते हैं। जब 3-5-7 भव होते हैं तो 2-3-4 भव आगत स्थान के और 1-2-3 भव उत्पत्ति स्थान के जोड़े जाते हैं। जब 4 या 6भव हो तो दोनों के 2-2 या 3-3 भव जोड़े जाते हैं। संख्यात, असंख्यात, अनंत भव हो तो दोनों के ही क्रमशः संख्य असंख्य और अनंत भव जोड़े जाते हैं।

जघन्य कालादेश में उस गम्मे का कम से कम आयु कहा जाता है और उत्कृष्ट कालादेश में उस गम्मे का अधिक से अधिक आयु कहा जाता है।

प्रत्येक गम्मे में दो शब्द होते हैं पहले शब्द अनुसार आगत स्थान की आयु कही जाती है और दूसरे शब्द के अनुसार उत्पत्ति स्थान की आयु कही जाती है।

क्रम	गम्मा	स्थिति
1.	औधिक औधिक	आगत स्थान और उत्पत्ति स्थान की सभी जघन्य उत्कृष्ट आयु
2.	औधिक जघन्य	आगत स्थान की सभी उम्र और उत्पत्ति स्थान जघन्य उम्र
3.	औधिक उत्कृष्ट	आगत स्थान की सभी उम्र और उत्पत्ति स्थान की उत्कृष्ट उम्र
4.	जघन्य औधिक	आगत स्थान की जघन्य उम्र और उत्पत्ति स्थान की सभी उम्र
5.	जघन्य जघन्य	आगत स्थान की जघन्य उम्र और उत्पत्ति स्थान की जघन्य उम्र
6.	जघन्य उत्कृष्ट	आगत स्थान की जघन्य उम्र और उत्पत्ति स्थान की उत्कृष्ट उम्र
7.	उत्कृष्ट औधिक	आगत स्थान की उत्कृष्ट उम्र और उत्पत्ति स्थान की सभी उम्र
8.	उत्कृष्ट जघन्य	आगत स्थान की उत्कृष्ट उम्र और उत्पत्ति स्थान की जघन्य उम्र
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	आगत स्थान की उत्कृष्ट उम्र और उत्पत्ति स्थान की उत्कृष्ट उम्र

बारहवां देवलोक मनुष्य में- (2 भव 6 भव)

1.	औधिक औधिक	21 सागर - अनेक वर्ष	66 सागर - 3 करोड़ पूर्व
2.	औधिक जघन्य	21 सागर - अनेक वर्ष	66 सागर - 3 अनेक वर्ष
3.	औधिक उत्कृष्ट	21 सागर - करोड़ पूर्व	66 सागर - 3 करोड़ पूर्व
4.	जघन्य औधिक	21 सागर - अनेक वर्ष	63 सागर - 3 करोड़ पूर्व
5.	जघन्य जघन्य	21 सागर - अनेक वर्ष	63 सागर - 3 अनेक वर्ष
6.	जघन्य उत्कृष्ट	21 सागर - करोड़ पूर्व	63 सागर - 3 करोड़ पूर्व
7.	उत्कृष्ट औधिक	22 सागर - अनेक वर्ष	66 सागर - 3 करोड़ पूर्व
8.	उत्कृष्ट जघन्य	22 सागर - अनेक वर्ष	66 सागर - 3 अनेक वर्ष
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	22 सागर - करोड़ पूर्व	66 सागर - 3 करोड़ पूर्व

मनुष्य चार अणुत्तर विमान में- (3 भव 5 भव)

1.	औधिक औधिक	2 अनेक वर्ष - 31 सागर	3 करोड़ पूर्व - 66 सागर
2.	औधिक जघन्य	2 अनेक वर्ष - 31 सागर	3 करोड़ पूर्व - 62 सागर
3.	औधिक उत्कृष्ट	2 अनेक वर्ष - 33 सागर	3 करोड़ पूर्व - 66 सागर
4.	जघन्य औधिक	2 अनेक वर्ष - 31 सागर	3 अनेक वर्ष - 66 सागर
5.	जघन्य जघन्य	2 अनेक वर्ष - 31 सागर	3 अनेक वर्ष - 62 सागर
6.	जघन्य उत्कृष्ट	2 अनेक वर्ष - 33 सागर	3 अनेक वर्ष - 66 सागर
7.	उत्कृष्ट औधिक	2 करोड़ पूर्व - 31 सागर	3 करोड़ पूर्व - 66 सागर
8.	उत्कृष्ट जघन्य	2 करोड़ पूर्व - 31 सागर	3 करोड़ पूर्व - 62 सागर
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	2 करोड़ पूर्व - 33 सागर	3 करोड़ पूर्व - 66 सागर

पृथ्वीकाय वनस्पितिकाय में- (2 भव असंख्य भव एवं 2 भव आठ भव)

1.	औधिक औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	असंख्यकाल - असंख्यकाल
2.	औधिक जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	असंख्यकाल - असंख्यकाल
3.	औधिक उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 10000 वर्ष	88000 वर्ष - 40000 वर्ष
4.	जघन्य औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	असंख्यकाल - असंख्यकाल
5.	जघन्य जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	असंख्यकाल - असंख्यकाल
6.	जघन्य उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 10000 वर्ष	4 अंतर्मुहूर्त - 40000 वर्ष
7.	उत्कृष्ट औधिक	22000 वर्ष - अंतर्मुहूर्त	88000 वर्ष - 40000 वर्ष
8.	उत्कृष्ट जघन्य	22000 वर्ष - अंतर्मुहूर्त	88000 वर्ष - 4 अंतर्मुहूर्त
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	22000 वर्ष -10000 वर्ष	88000 वर्ष - 40000 वर्ष

तिर्यंच पंचेन्द्रिय अपकाय में- (2 भव एवं 8 भव)

1.	औधिक औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व - 28000 वर्ष
2.	औधिक जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व - 4 अंतर्मुहूर्त
3.	औधिक उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 7000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व - 28000 वर्ष
4.	जघन्य औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 अंतर्मुहूर्त - 28000 वर्ष
5.	जघन्य जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 अंतर्मुहूर्त - 4 अंतर्मुहूर्त
6.	जघन्य उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 7000 वर्ष	4 अंतर्मुहूर्त - 28000 वर्ष
7.	उत्कृष्ट औधिक	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व - 28000 वर्ष
8.	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व - 4 अंतर्मुहूर्त
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व - 7000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व - 28000 वर्ष

मनुष्य वायुकाय में- (2 भव)

1.	औधिक औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व - 3000 वर्ष
2.	औधिक जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त
3.	औधिक उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 3000 वर्ष	करोड़ पूर्व - 3000 वर्ष
4.	जघन्य औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त - असंख्यकाल
5.	जघन्य जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त
6.	जघन्य उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 3000 वर्ष	अंतर्मुहूर्त - 3000 वर्ष
7.	उत्कृष्ट औधिक	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व - 3000 वर्ष
8.	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व - अंतर्मुहूर्त
9.	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व -3000 वर्ष	करोड़ पूर्व - 3000 वर्ष

असन्नी मनुष्य चौरेन्द्रिय में- (2 भव 8 भव)

1.	औधिक औधिक	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 अंतर्मुहूर्त - 24 महिना
2.	औधिक जघन्य	अंतर्मुहूर्त - अंतर्मुहूर्त	4 अंतर्मुहूर्त - 4 अंतर्मुहूर्त
3.	औधिक उत्कृष्ट	अंतर्मुहूर्त - 6 महिना	4 अंतर्मुहूर्त - 24 महिना

नोट- तीन गम्मे ही होते हैं। 6 गम्मे नहीं होते हैं। क्योंकि असन्नी मनुष्य की आयु जघन्य उत्कृष्ट एक ही होती है।

कालादेश (असन्नी तिर्यंच पहली नारकी में) 2 भव

गम्मा क्र.	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक-औघिक	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+पल्य का असंख्यातवाँ भाग
2	औघिक-जघन्य	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व अधिक दस हजार वर्ष
3	औघिक-उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग
4	जघन्यऔघिक	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग
5	जघन्य-जघन्य	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष
6	जघन्य-उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग
7	उत्कृष्ट-औघिक	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग
8	उत्कृष्ट-जघन्य	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष
9	उत्कृष्ट-उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग

(मनुष्य में अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कहना)

गम्मा क्र.	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त (ति.)-10000 वर्ष प्रत्येक मास (म.)	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त (ति.)-10000 वर्ष प्रत्येक मास (म.)	4 करोड़ पूर्व 40000 वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	अंमु./(प्र.मा.) 1 सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
4	जघन्य औघिक	अंमु./प्र.मा. 10 हजार वर्ष	4 अंमु./4 प्र.मा./4 सागर
5	जघन्य जघन्य	अंमु./प्र.मा. 10 हजार वर्ष	4 अंमु./4 प्र.मा./40 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	अंमु./प्र.मा./ 1 सागर	4 अंमु./4 अ.मा.-4 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व 10000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व 10000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व 40 हजार वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 1 सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर

दूसरी नारकी के 9 गम्मे कालादेश से (तिर्यंच का अन्तर्मुहूर्त जहाँ हो वहाँ मनुष्य का प्रत्येक वर्ष कहना)।

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त तीन सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 12 सागर
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 4 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त तीन सागर	4 अन्तर्मुहुर्त 12 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व एक सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व एक सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व तीन सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर

सातवीं नरक में सन्नी तिर्यंच के (3 भव 7 भव और 3 भव 5 भव) 22 सागरोपम से 33 सागरोपम

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
2	औघिक जघन्य	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	2 अन्तर्मुहूर्त 33 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर
4	जघन्य औघिक	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 66 सागर
5	जघन्य जघन्य	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 66 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	2 अन्तर्मुहूर्त 33 सागर	3 अन्तर्मुहुर्त 66 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	2 करोड़ पूर्व 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	2 करोड़ पूर्व 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	2 करोड़ पूर्व 33 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर

मनुष्य सातवीं नरक में (2 भव) 22 सागर उत्कृष्ट 33 सागर

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अनेक वर्ष 22 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर
2	औघिक जघन्य	अनेक वर्ष 22 सागर	करोड़ पूर्व 22 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	अनेक वर्ष 33 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर
4	जघन्य औघिक	अनेक वर्ष 22 सागर	अनेक वर्ष 33 सागर
5	जघन्य जघन्य	अनेक वर्ष 22 सागर	अनेक वर्ष 22 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	अनेक वर्ष 33 सागर	अनेक वर्ष 33 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व 22 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व 22 सागर	करोड़ पूर्व 22 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 33 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर

कालादेश से काल 9 गम्मा का असुरकुमार से-

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
2	औघिक जघन्य	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
4	जघन्य औघिक	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष
5	जघन्य जघन्य	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष
7	उत्कृष्ट औघिक	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष

वनस्पति वनस्पति में-

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1-2-4-5	औघिक औघिक, ओ. जघन्य जघन्य औघिक, जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	अनंतकाल अनंतकाल
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 10000 वर्ष	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 10000 वर्ष	4 अन्तर्मुहूर्त 40 हजार वर्ष
7	उत्कृष्ट औघिक	10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त	40 हजार वर्ष 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	10 हजार वर्ष 10 हजार वर्ष	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश (7वीं नरक) तिर्यंच में
1	औघिक औघिक	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	22 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	22 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर दो करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर दो अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व

असंज्ञी मनुष्य में तीन गम्मा-

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
2	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहुर्त
3	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व

असंज्ञी तिर्यंच से 9 गम्मा–

1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व	3 करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 4 पल के असंख्यातवें भाग	करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	तीन करोड़ पूर्व 4 करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग	3 करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग

संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य (तिर्यंच घर में) (2 भव 8 भव एवं 2 भव)

1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 3 करोड़ पूर्व 3 पल
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त/प्रत्येक मास 3-3 पल	करोड़ पूर्व 3 पल
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व तीन पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल्योपम

नवमें देवलोक में काल संबंधी 9 गम्मा

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	18 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	18 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	18 सागर करोड़ पूर्व	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	18 सागर प्रत्येक वर्ष	54 सागर तीन करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	18 सागर प्रत्येक वर्ष	54 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	18 सागर करोड़ पूर्व	54 सागर तीन करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	19 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	19 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	19 सागर करोड़ पूर्व	57 सागर तीन करोड़ पूर्व

इसी तरह नवगैवेयक तक अपनी-अपनी स्थिति से 9-9 गम्मा कहना है।

चार अणुत्तर विमानों से 9 गम्मा (स्थिति जघन्य 31 सागर उत्कृष्ट 33 सागर) 2 भव 4 भव

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	31 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर 2 करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	31 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो प्रत्येक वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	31 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	31 सागर प्रत्येक वर्ष	62 सागर दो करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	31 सागर प्रत्येक वर्ष	62 सागर दो प्रत्येक वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	31 सागर करोड़ पूर्व	62 सागर दो करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व

सर्वार्थसिद्ध से 3 गम्मा (33 सागरोपम की स्थिति) 2 भव गम्मा

7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर प्रत्येक वर्ष	33 सागर करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर प्रत्येक वर्ष	33 सागर प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	33 सागर करोड़ पूर्व

संज्ञी मनुष्य मनुष्य के घर में

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व 3 पल
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	प्रत्येक मास 3 पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 3 करोड़ पूर्व 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 3 पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल

तिर्यंच युगलिया व्यंतर में (2 भव)

1	औघिक औघिक	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	3 पल 1 पल
2	औघिक जघन्य	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	3 पल 10 हजार वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	1 पल 1 पल	3 पल 1 पल
4	जघन्य औघिक	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक
5	जघन्य जघन्य	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल 10 हजार वर्ष	3 पल 1 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल 10 हजार वर्ष	3 पल 10 हजार वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल 1 पल	3 पल 1 पल

मनुष्य/तिर्यंच युगलिया ज्योतिषी में (2 भव) 7 गम्मा

1	औघिक औघिक	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग	तीन पल, एक पल 1 लाख वर्ष
2	औघिक जघन्य	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग	तीन पल, पल का आठवाँ भाग
3	औघिक उत्कृष्ट	1 पल 1 लाख वर्ष, एक पल एक लाख वर्ष	3 पल 1 पल 1 लाख वर्ष
5	जघन्य जघन्य	पल का आठवाँ, पल का आठवाँ भाग	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल, पल का आठवाँ भाग	3 पल, 1 पल 1 लाख वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल, पल का आठवाँ भाग	3 पल, पल का आठवाँ भाग
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल, 1 पल 1 लाख वर्ष	3 पल 1 पल 1 लाख वर्ष

युगलिया तिर्यंच पहले देवलोक में-

1	औघिक औघिक	एक पल, एक पल	3 पल, 3 पल
2	औघिक जघन्य	एक पल, एक पल	3 पल, 1 पल
3	औघिक उत्कृष्ट	3 पल, 3 पल	3 पल, 3 पल
5	जघन्य जघन्य	1 पल, 1 पल	1 पल, 1 पल
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल, 1 पल	3 पल, 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल, 1 पल	3 पल, 1 पल
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल, 3 पल	3 पल, 3 पल

चार अणुत्तर विमानों से 9 गम्मा

1	औघिक औघिक	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 66 सागर
2	औघिक जघन्य	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 62 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 66 सागर
4	जघन्य औघिक	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 66 सागर
5	जघन्य जघन्य	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 62 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 66 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	2 करोड़ पूर्व 31 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	2 करोड़ पूर्व 31 सागर	3 करोड़ पूर्व 62 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	2 करोड़ पूर्व 33 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर

सर्वार्थसिद्ध से 3 गम्मा–

3	औघिक उत्कृष्ट	दो प्रत्येक वर्ष 33 सागर	2 करोड़ पूर्व 33 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	दो प्रत्येक वर्ष 33 सागर	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	दो करोड़ पूर्व 33 सागर	2 करोड़ पूर्व 33 सागर

विशेष– 1. ये कुल 21 कालादेश के उदाहरण दिये हैं ऐसे कुल 321 (आगत स्थानों) के कालादेश के चार्ट बनते हैं। जो इन उपरोक्त 21 के आधार से एवं अनुभव से बनाये जा सकते हैं। कुछ ही आवश्यक और विशेष स्थानों को छोड़कर यहां उदाहरण रूप में दिये गये हैं जिनके समझ लेने पर अन्य 300 चार्ट बनाना बहुत कुछ सुगम हो सकता है। 321 आगम स्थान के विवरण का चार्ट पहले प्रारंभ में दिया गया है।

2. उपपात, स्थिति, भवादेश और गम्मों का स्वरूप इन चारों का अच्छी तरह ध्यान रखने पर ही कालादेश समझ में आ सकता है।

3. सामान्यतया तो ऊपर बताये गये प्रारम्भिक घर, जीव, गम्मा एवं 12 द्वारों पर बताई गयी परिवर्तनीय ऋद्धि को (णाणत्तों को) पहले समझ लेना आवश्यक है।

4. लेश्या अवगाहना आदि का समुच्चय वर्णन जीवाभिगम सूत्र सारांश में देखें।

5. थोकड़ों की प्रचलित भाषा में प्रत्येक मास, प्रत्येक वर्ष यों ''प्रत्येक'' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जो कि एक अशुद्ध प्रयोग परंपरा है। उस अशुद्ध परंपरा का अनुसरण या पालन नहीं करते हुए यहां ''अनेक'' शब्द का प्रयोग किया गया है। इस विषयक विचारणा जीवाभिगम के परिशिष्ट में प्रमाण एवं तर्क सहित ही गई है। प्रस्तुत प्रकरण में एवं अन्य सारांश पुष्पों में भी ''प्रत्येक'' शब्द का प्रयोग न करके ''अनेक'' शब्द का प्रयोग करने का ही पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है।

6. प्रस्तुत प्रकरण के थोकड़े में ''णाणत्ता'' शब्द का प्रयोग किया गया है और उसके नाम से पूरा प्रकरण भी विषय को समझने की सुविधा के लिये बनाया गया है किन्तु यहां सारांश में अपनी अपेक्षा, सुविधा एवं सरलता के लिये उसका भी अनुसरण नहीं किया गया है फिर भी आवश्यक विषय को भिन्न तरीके से अर्थात् स्थिर ऋद्धि और परिवर्तनीय (विभिन्न) ऋद्धि के माध्यम से समझाने का प्रयत्न किया गया है।

पच्चीसवां-शतक

पहला उद्देशक-

भवों का गम्मा का विवरण

क्रम	भव संख्या	औघिक	जघन्य	उत्कृष्ट	कुल गम्मा
1	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के	261	249	264	774
2	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव	496	526	624	1646
3	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट असंख्याता भव	48	48	0	96
4	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट अनन्ता भव	2	2	0	4
5	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट संख्याता भव	78	78	0	156
6	जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 7 भव	17	17	17	51
7	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 6 भव	18	18	15	51
8	जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 5 भव	4	4	4	12
9	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 4 भव	3	3	6	12
10	जघन्य उत्कृष्ट 3 भव	1	1	1	3
		928	946	931	2805

(2) 14 प्रकार के जीवों में जघन्य उत्कृष्ट योग का अल्प बहुत्व इस प्रकार है-

जीव संख्या	जीव के भेद	जघन्य योग अल्प बहुत्व	उत्कृष्ट योग अल्प बहुत्व
1	सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तका	1 अल्प	10 असंख्यात गुणा
2	सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तका	8 असंख्यात गुणा	12 असंख्यात गुणा
3	बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तका	2 असंख्यात गुणा	11 असंख्यात गुणा
4	बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तका	9 असंख्यात गुणा	13 असंख्यात गुणा
5	बेइन्द्रिय अपर्याप्तका	3 असंख्यात गुणा	19 असंख्यात गुणा
6	बेइन्द्रिय पर्याप्तका	14 असंख्यात गुणा	24 असंख्यात गुणा
7	तेइन्द्रिय अपर्याप्तका	4 असंख्यात गुणा	20 असंख्यात गुणा
8	तेइन्द्रिय पर्याप्तका	15 असंख्यात गुणा	25 असंख्यात गुणा
9	चौरेन्द्रिय अपर्याप्तका	5 असंख्यात गुणा	21 असंख्यात गुणा
10	चौरेन्द्रिय पर्याप्तका	16 असंख्यात गुणा	26 असंख्यात गुणा
11	असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तका	6 असंख्यात गुणा	22 असंख्यात गुणा
12	असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तका	17 असंख्यात गुणा	27 असंख्यात गुणा
13	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तका	7 असंख्यात गुणा	23 असंख्यात गुणा
14	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तका	18 असंख्यात गुणा	28 असंख्यात गुणा

15 योगों में जघन्य और उत्कृष्ट योगों की अपेक्षा अल्प बहुत्व–

	15 योगों का अल्प बहुत्व	योग	अल्पा बहुत्व
1	कार्मण काय योग	जघन्य योग	1 सबसे अल्प
2	औदारिक मिश्रकाय योग	जघन्य योग	2 असंख्य गुणा
3	वैक्रिय मिश्रकाय योग	जघन्य योग	3 असंख्य गुणा
4	औदारिक काययोग	जघन्य योग	4 असंख्य गुणा
5	वैक्रिय काययोग	जघन्य योग	5 असंख्य गुणा
6	कार्मण काययोग	उत्कृष्ट योग	6 असंख्य गुणा
7	आहारक मिश्र काययोग	जघन्य योग	7 असंख्य गुणा
8	आहारक मिश्र काययोग	उत्कृष्ट योग	8 असंख्य गुणा
9–10	औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रिय मिश्र काययोग	उत्कृष्ट योग	9/10 असंख्य गुणा आपस में तुल्य
11	व्यवहार मनयोग का	जघन्य योग	11 असंख्य गुणा
12	आहारक काययोग का	जघन्य योग	12 असंख्य गुणा
13 से 19	तीन मनोयोग (सत्य असत्य मिश्र) 4 वचन योग (सत्य असत्य मिश्र व्यवहार)	जघन्य योग	13 से 19 असंख्य गुणा आपस में तुल्य
20	आहारक शरीर काययोग	उत्कृष्ट योग	20 असंख्य गुणा
21 से 30	औदारिक, वैक्रिय काययोग, 4 मनोयोग 4 वचनयोग	उत्कृष्ट योग	असंख्यात गुणा आपस में तुल्य 21 से 30

विशेष– सामर्थ्य विशेष से ये योग अल्पाधिक होते हैं। जीवों में अपर्याप्तों का सामर्थ्य कम होता है पर्याप्तों का अधिक होता है। योगों में मन वचन का योग सामर्थ्य विशाल होता है काया का योग सामर्थ्य कम होता है। मन वचन काया के व्यापार-प्रवृत्ति को योग कहते हैं। उस योग की हीनाधिक सामर्थ्य शक्ति की यहां अल्प बहुत्व की गई है।

प्रथम समयोत्पन्न जीवों के भी आहारक अनाहारक की अपेक्षा एवं ऋजु-वक्र गति की अपेक्षा योग चौठाण वडिया अंतर हो सकता है और समान भी हो सकता है। दीर्घ स्थिति वालों का भी योग समान या चौठाण वडिया हो सकता है।

दूसरा उद्देशक–

1. अनंत जीव द्रव्य है अनंत अजीव द्रव्य है जीव के अजीव काम आते हैं एवं रूपी पुद्गल द्रव्यों को जीव ग्रहण करके शरीर, इन्द्रिय और योग रूप में परिणमन करता है।

2. औदारिक वैक्रिय आहारक शरीर हेतु स्थित अस्थित दोनों प्रकार के पुद्गल ग्रहण किये जा सकते हैं तैजस, कार्मण शरीर औरमन योग हेतु स्थित पुद्गल ही ग्रहण किये जाते हैं। शेष पांच इन्द्रिय और वचन काया योग हेतु स्थित अस्थित दोनों तरह के पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं।

3. औदारिक, तैजस, कार्मण-शरीर, काय योग, स्पर्शेन्द्रिय ये पांच बोल एकेन्द्रिय में होते हैं। अतः दिशा की अपेक्षा 3-4-5-6 दिशा से इनके पुद्गल ग्रहण निःसरण होते हैं। शेष आठ बोलों में नियमा 6 दिशा से पुद्गलों का ग्रहण निःसरण होता है।

श्वासोच्छ्वास हेतु पुद्गल ग्रहण आदि वर्णन औदारिक शरीर के समान है।

तीसरा उद्देशक–

संस्थान 6– 1. परिमंडल = चूड़ी के आकार, 2. वृत्त = चक्र के आकार के, 3. त्र्यन्न् = सिंघाड़े के आकार, 4. चतुरस्त्र = बाजोट के आकार, 5. आयत = लकड़ी के पाटिया के आकार , 6. अनिथस्थ = मिश्रित आकार 2-3 संस्थानों का योग।

परिमंडल में अधिक प्रदेश लगते हैं अतः वे लोक में अल्प हैं। वृत्त, चतुरंस्त्र, त्र्यस्त्र आयत में क्रमशः कम कम पुद्गल प्रदेश लगते हैं, और उनकी संख्या लोक में क्रमशः अधिक-अधिक है। अनित्यंस्थ -मिश्र होने से सबसे अधिक है और उनके प्रदेशों का योग भी सब से अधिक होता है। अणिथंस्थ के द्रव्य से परिमंडल के प्रदेश असंख्य गुण होते हैं शेष क्रम उक्त प्रकार से ही द्रव्य और प्रदेशों का होता है। सभी के आपस में संख्यातगुणे है किन्तु अणिथंस्थ असंख्यगुणे होते हैं। यों स्वतंत्र गिनती में सभी अनंत अनंत होते हैं। प्रत्येक पृथ्वी या विमान आदि में भी ये सभी अनंत अनंत होते हैं।

संस्थान युग्म– परिमंडल आदि प्रत्येक संस्थान स्वयं की अपेक्षा अर्थात् विधानादेश से एक द्रव्य होने से कल्योज युग्म है। बहुवचन में भी सभी अपनी व्यक्तिगत अपेक्षा से अनेक कल्योज युग्म है और ओघादेश से समुच्चय की अपेक्षा से अर्थात् सभी की सम्मिलित गिनती की अपेक्षा से, कभी कृतयुग्म भी हो सकते हैं, कभी तेओग युग्म, कभी दावर युग्म और कभी कल्योज युग्म भी हो सकते हैं, क्योंकि पुद्गल घटते बढ़ते रहते हैं। अतः उनकी संख्या परिवर्तित होती रहती है जिससे कभी भी कोई भी युग्म संख्या में वे हो सकते हैं। यह सिद्धांत परिमंडल आदि पांचों संस्थान में द्रव्य की अपेक्षा एक सा है।

प्रदेश की अपेक्षा में प्रत्येक संस्थान के प्रदेशों की गिनती से उनके युग्म कहे जाते हैं। प्रत्येक संस्थान की प्रदेश संख्या उसके भेद करके बताई गई है वह इस प्रकार है।

विशेष– 1. ओज = प्रदेशों की एकी संख्या (एकावशेष संख्या) हो उसे ओज प्रदेशी कहा जाता है। 2. युग्म = प्रदेशों

संस्थान नाम	संस्थान भेद	प्रदेश भेद	प्रदेश संख्या		अवगाहना	
			ज.	उ.	ज.	उ.
वृत्त	प्रतर वृत्त	ओज प्रदेशी	5	अनंत	5	असंख्य
वृत्त	प्रतर वृत्त	युग्म प्रदेशी	12	अनंत	12	असंख्य
वृत्त	घन वृत्त	ओज प्रदेशी	7	अनंत	7	असंख्य
वृत्त	घन वृत्त	युग्म प्रदेशी	32	अनंत	32	असंख्य
त्र्यस्त्र	प्रतर त्र्यस्त्र	ओज प्रदेशी	3	अनंत	3	असंख्य
त्र्यस्त्र	प्रतर त्र्यस्त्र	युग्म प्रदेशी	6	अनंत	6	असंख्य
त्र्यस्त्र	घन त्र्यस्त्र	ओज प्रदेशी	35	अनंत	35	असंख्य
त्र्यस्त्र	घन त्र्यस्त्र	युग्म प्रदेशी	4	अनंत	4	असंख्य
चतुरस्त्र	प्रतर चतुरस्त्र	ओज प्रदेशी	9	अनंत	9	असंख्य
चतुरस्त्र	प्रतर चतुरस्त्र	युग्म प्रदेशी	4	अनंत	4	असंख्य
चतुरस्त्र	घन चतुरस्त्र	ओज प्रदेशी	27	अनंत	27	असंख्य
चतुरस्त्र	घन चतुरस्त्र	युग्म प्रदेशी	8	अनंत	8	असंख्य
आयत	श्रेणी आयत	ओज प्रदेशी	3	अनंत	3	असंख्य
आयत	श्रेणी आयत	युग्म प्रदेशी	2	अनंत	2	असंख्य
आयत	प्रतर आयत	ओज प्रदेशी	15	अनंत	15	असंख्य
आयत	प्रतर आयत	युग्म प्रदेशी	6	अनंत	6	असंख्य
आयत	घन आयत	ओज प्रदेशी	45	अनंत	45	असंख्य
आयत	घन आयत	युग्म प्रदेशी	12	अनंत	12	असंख्य
परिमंडल	प्रतर परिमंडल	युग्म प्रदेशी	20	अनंत	20	असंख्य
परिमंडल	धन परिमंडल	युग्म प्रदेशी	40	अनंत	40	असंख्य

घन परिमंडल संस्थान

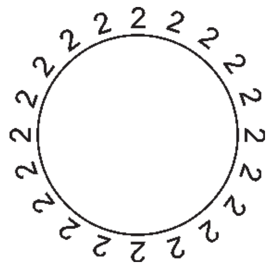

40

प्रतर परिमंडल संस्थान

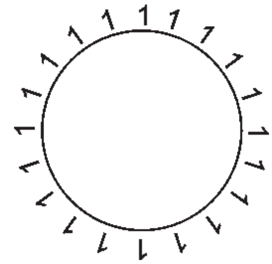

20

ओज प्रदेशी प्रतर वृत्त

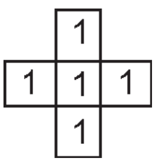

5

युग्म प्रदेशी प्रतर वृत्त

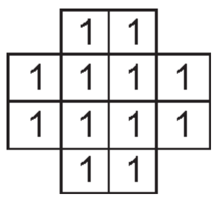

12

ओज प्रदेशी घनवृत्त

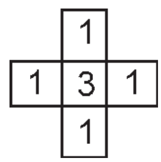

7

युग्म प्रदेशी घनवृत्त संस्थान

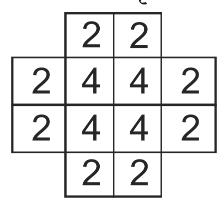

32

घन त्र्यस्र संस्थान ओज प्रदेशी

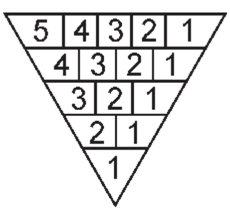

35

घन त्र्यस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

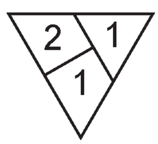

4

प्रतर त्र्यस्र ओज प्रदेशी

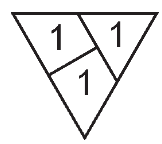

3

प्रतर त्र्यस्र युग्म प्रदेशी

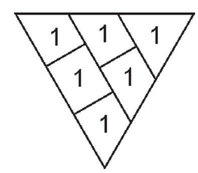

6

घन चतुरस्र संस्थान ओज प्रदेशी

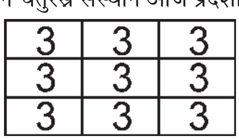

27

घन चतुस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

8

प्रतर चतुरस्र ओज प्रदेशी

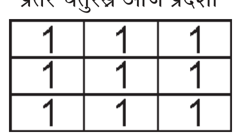

9

प्रतर चतुरस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

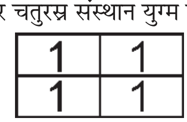

4

श्रेणी आयत संस्थान ओज प्रदेशी

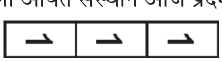

3

श्रेणी आयत युग्म प्रदेशी

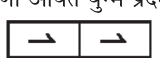

2

प्रतर आयत संस्थान ओज प्रदेशी

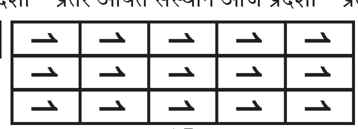

15

प्रतर आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

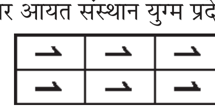

6

घन आयत संस्थान ओज प्रदेशी

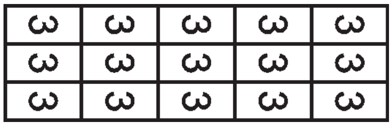

45

घन आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

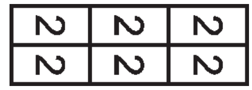

12

की बेकी संख्या हो अर्थात् दो का भाग पूरा चला जाय वैसी संख्या हो उसे युग्म प्रदेशी कहते हैं। 3. परिमंडल संस्थान में ओज प्रदेशी (एकी संख्या वाले) नहीं होते हैं क्योंकि सभी युग्म प्रदेशी बेकी संख्या वाले ही होते हैं। 4. कहीं ओज प्रदेशी संस्थान के प्रदेश ज्यादा है कहीं युग्म प्रदेशी के, इसका कारण यह है कि उस संस्थान में कहीं ओज संख्या का संयोग बाद में मिलता है कहीं युग्म संख्या का संयोग बाद में मिलता है। अर्थात् उस संख्या से कम संख्या में भी वह संस्थान तो बनता है पर ओज या युग्म संख्या वहां नहीं होती है।

अवगाहना– अवगाहना प्रदेशों की संख्या चार्ट में बताई गई है उस संख्या से जाना जा सकता है कि अवगाहना प्रदेश कृतयुग्म है या कौन से युग्म है। 12-20-40-32-4-8संख्या वाले कृतयुग्म अवगाहना वाले हैं। 3-7-35-27-15 संख्या वाले तेओग युग्म अवगाहना वाले हैं। 6-2 की संख्या वाले दावर युग्म अवगाहना वाले हैं। 5-9-45 संख्या वाले कल्योज युग्म अवगाहना वाले हैं। ओघादेश की अपेक्षा सभी संस्थान वाले पूरे लोक में व्याप्त है और लोक के आकाश प्रदेश कृतयुग्म है अतः ओघादेश (समुच्चय की अपेक्षा) कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है और विधानादेश (व्यक्तिगत अपेक्षा) से उक्त चार्ट में कही गई संख्या से समझना।

स्थिति वर्णादि– सभी संस्थानों में स्थिति कोई भी हो सकती है वर्णादि भी एक गुण यावत् अनंत गुण भी हो सकता है अतः व्यक्तिगत अपेक्षा चारों में से कोई भी एक युग्म हो सकता है और समुच्चय की अपेक्षा चारों ही युग्म की स्थिति वाले और वर्णादि वाले संस्थान हो सकते हैं।

श्रेणियां– आकाश की श्रेणियां अनंत हैं ये एक प्रदेशी चौड़ी एवं अनंत प्रदेशी लम्बी लोकालोक प्रमाण संलग्न होती है। अपेक्षा से इसके लोकाकाश की श्रेणियां और अलोकाकाश की श्रेणियां ऐसे दो भेद विवक्षित किये जाते हैं।

लोक असंख्य प्रदेश लम्बा चौड़ा और ऊंचा नीचा है अतः इस अपेक्षा से वे श्रेणियां असंख्य प्रदेशी है और लोक में वे श्रेणियां भी असंख्य ही है अनंत नहीं है। लोक में चारों दिशाओं में तिरछे कोने भी है यथाः पांचवे देवलोक के पास, इस कारण और इस भेद विवक्षा से लोक में कुछ संख्यात प्रदेशी श्रेणियां होती है शेष सभी असंख्य प्रदेशी होती है। अलोक में भी इसी कारण संख्यात असंख्यात प्रदेशी कुछ श्रेणियां लोक के बाहर निकट में होती है। उनके अतिरिक्त सभी अनंत प्रदेशी श्रेणिया होती है।

लोक ऊपर नीचे समतल है। चारों दिशाओं में वृद्धि होने के कारण विषम है। उस विषमता के कारण ही असंख्य प्रदेशी लंबे चौड़े लोक में संख्यात प्रदेशी श्रेणियां बनती है और उसी कारण से अनंत प्रदेशी अलोक में असंख्यात और संख्यात प्रदेशी श्रेणियां बनती है। वे ऊपर से नीचे की अपेक्षा बनती है।

लोक की सभी श्रेणियां सादि सांत है अर्थात् दोनों दिशाओं में उनका अंत है। अलोक में लोक के कारण सादि अनंत है और लोक के अतिरिक्त स्थान वाली अनादि अनंत है।

श्रेणी युग्म– समुच्चय श्रेणियां, लोक की श्रेणियां और अलोक की श्रेणियां कृतयुग्म है। उनके प्रदेश समुच्चय में कृतयुग्म है। लोक में पूर्व पश्चिम- कृतयुग्म या दावर युग्म है। ऊपर नीचे कृतयुग्म है। अलोक में पूर्व पश्चिम की अपेक्षा चारों युग्म प्रदेश हो सकते हैं ऊपर नीचे की अपेक्षा तीन युग्म हो सकते है कल्योज युग्म नहीं है।

श्रेणियों के प्रकार– श्रेणियां सात प्रकार की होती है- 1. सीधी, 2. एक मोड़ वाली, 3. दो मोड़ वाली, 4. एक तरफ त्रस नाड़ी के बाहर जाने वाली, 5.दोनो तरफ त्रस नाड़ी के बाहर जाने वाली यों स्वतः श्रेणियां तो सभी सीधी ही है। 6. चक्रवाल, 7. अर्द्ध चक्रवाल, ये जीव और पुद्गल की गति की अपेक्षा कही गई है।

जीव प्रारंभ की पांच गति श्रेणी से गमन करते हैं। और पुद्‌गल सातों श्रेणी गति से गमन करते हैं इस प्रकार जीव और अजीव अनुश्रेणी से ही गमन करते हैं। इन श्रेणियों के अतिरिक्त विश्रेणी से गति नहीं करते हैं। जिस प्रकार वायुयान के जाने के मार्ग आकाश में निश्चित होते हैं उन्हीं मार्गो से वे जाते आते हैं वैसे ही जीव पुद्‌गल के गमन के मार्ग रूप ये श्रेणि गतियां होती है। अमार्ग रूप विश्रेणि गतियां नहीं होती है।

द्वादशांग गणिपिटक का वर्णन नंदी सूत्र से एवं अल्पबहुत्वें प्रज्ञापना सूत्र तीसरे पद से जाननी चाहिये।

चौथा उद्देशक- चौबीस दंडक सिद्ध आदि का कृतयुग्म सम्बन्धी वर्णन शतक 18उद्देशक 4 के समान जानना।

षडद्रव्य युग्म- तीन अस्तिकाय द्रव्य एक एक होने से कल्योज युग्म है शेष तीन द्रव्य अनंत होने से जीव और काल कृतयुग्म है। पुद्‌गलास्तिकाय अनिश्चित संख्या होने से चारों ही युग्म संख्या हो सकती है। प्रदेश की अपेक्षा छहों द्रव्य कृतयुग्म है अर्थात् पुद्‌गल के भी कुल प्रदेश निश्चित है।

छहों द्रव्य का अवगाहना भी कृतयुग्म आकाश प्रदेश है जिसमें आकाशास्तिकाय के अवगाहन प्रदेश अनंत है शेष सभी के अवगाहन प्रदेश असंख्य है।

जीव युग्म- एक जीव एक कल्योज युग्म है अनेक जीव स्वतंत्र अपेक्षा से अनेक कल्योज युग्म है और सम्मिलित अपेक्षा से सब जीवों के योग की अपेक्षा से कृतयुग्म संख्या है। इस स्वतंत्र और सम्मिलित अपेक्षा के लिए शास्त्र में ओघादेश और विधानादेश शब्द प्रयुक्त है।

द्रव्य- चौबीस दंडक के एक जीव भी इसी तरह जानना, अनेक जीव में ओघादेश से चारों में से कोई भी युग्म हो सकता है। विधानादेश से अनेक कल्योज युग्म है।

प्रदेश- प्रदेश की अपेक्षा जीव तो निश्चित कृतयुग्म प्रदेश वाला ही है। उनके शरीर चारों में से कोई भी युग्म प्रदेश वाले हो सकते हैं। इसी तरह 24 ही दंडक में जानना। सिद्ध-प्रदेश से कृतयुग्म है।

अनेक जीव भी प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म ही है। शरीर की अपेक्षा ओघादेश से सम्मिलित अपेक्षा से चारों में से कोई एक युग्म होता है विधानादेश से-प्रत्येक की अलग अलग अपेक्षा से चारों ही तरह के होते हैं। इसी तरह 24 दंडक का जानना। अनेक सिद्ध भी प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म ही है। शरीर है ही नहीं।

अवगाहन- जीव के आत्म प्रदेश तो कृतयुग्म है किन्तु शरीर के अनुसार अवगाहन करता है अतः एक जीव के अवगाहन प्रदेश कृतयुग्म आदि कोई भी युग्म हो सकते हैं। बहुवचन में ओघादेश से कडजुम्म प्रदेश अवगाहन (लोक प्रमाण) है और विभागादेश से किसी में कोई, किसी में कोई यों चारों ही युग्म पाये जाते हैं। 19 दंडक में बहुवचन के ओघादेश में कभी कोई कभी कोई यों चारों में से कोई एक होता है। पांच स्थावर और सिद्ध जीव (समुच्चय) के समान है। क्योंकि समस्त पांच स्थावरों का अवगाहन सम्पूर्ण लोक प्रमाण होने से कृतयुग्म है और सिद्धक्षेत्र 45 लाख योजन लम्बा चौड़ा गोल और 333 धनुष 32 अंगुल जाड़ा है वह भी कृतयुग्म (कडजुम्मा) आकाश प्रदेश वाला है।

स्थिति- एक जीव अनेक जीव ओघादेश विधानादेश से कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं। नैरयिक आदि 24 दंडक

का एक जीव चारों में से एक युग्म की स्थिति वाला होता है अनेक की अपेक्षा ओघादेश से कोई भी एक स्थिति वाला युग्म होता है और विभागादेश से चारों ही होते हैं।

वर्णादि– जीव तो अरूपी है। शरीर की अपेक्षा वर्णादि समझना। अतः चारों में से कोई एक युग्म काले आदि वर्ण का होता है। ऐसा ही 24 दंडक का समझना। सिद्ध में वर्णादि नहीं होते हैं। अनेक जीव में ओघादेश से चारों में से एक युग्म काला गुण वर्णादि का होता है। विभागादेश से चारों ही युग्म होते हैं। ऐसे ही 24 दंडक में शरीर की अपेक्षा समझना। जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते हैं।

मति ज्ञानादि– मति ज्ञान आदि के अनंत पर्यव है उन पर्यव की अपेक्षा युग्म का कथन है। एक जीव की अपेक्षा चारों युग्म में से एक युग्म होता है और अनेक जीव में ओघादेश से चारों में से एक युग्म होता है। विभागादेश से चारों ही होते हैं। इसी प्रकार जिनके जो ज्ञान है वह समझ लेना। जीव, मनुष्य एवं सिद्ध तीनों में केवल ज्ञान केवल दर्शन के पर्यव कृतयुग्म ही होते हैं। तीन अज्ञान एवं तीन दर्शन मति ज्ञान के समान समझना।

सकंप अकंप जीव– प्रथम समयवर्ती सिद्ध सर्व सकंप होते हैं। संसारी जीव अशैलेशी देश कंप सर्व कंप दोनों होते हैं। अप्रथम समयवर्ती सिद्ध एवं शैलेशी अणगार अकंप होते हैं। 24 दंडक के जीव विग्रह गति में सर्व सकंप एवं अन्य समय में देश सकंप होते हैं।

परमाणु आदि का अल्प बहुत्व–

1. अनंत प्रदेशी द्रव्य थोड़े होते हैं, परमाणु उससे अनंत गुणे होते हैं, उनसे संख्यात प्रदेशी संख्यात गुणे होते हैं और असंख्यात प्रदेशी असंख्य गुणे होते हैं। यही क्रम प्रदेशी की अल्पबहुत्व का होता है।

दस प्रदेशी से नौ प्रदेशी अधिक होते हैं उससे 8-7-6-5-4-3-2 प्रदेशी क्रमशः अधिक-अधिक होते हैं दो प्रदेशी से परमाणु अधिक होते हैं। यह क्रम द्रव्यों की अपेक्षा है। प्रदेश में इससे विपरीत क्रम हैं परमाणु अल्प है एवं दस प्रदेशी स्कंध के प्रदेश सर्वाधिक है।

2. एक प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल कम होते हैं उससे संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्‌गल संख्यात गुणा और उससे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल असंख्य गुणा होते हैं। यही क्रम प्रदेश में जानना।

दस प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल से एक प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल तक क्रमशः विशेषाधिक होते हैं। प्रदेश में इससे विपरीत क्रम समझना। इसी प्रकार स्थिति की सम्पूर्ण अल्पबहुत्वजानना।

3. वर्ण गंध रस के एक गुण आदि की अल्प बहुत्व परमाणु से अनंत प्रदेशी तक की अल्पबहुत्व के समान जानना।

4. कर्कश स्पर्श एक से 10 गुण तक 10 बोल क्रमशः विशेषाधिक है आगे अनंतगुण तक क्रमशः अधिक अधिक है। अवगाहन के समान है किन्तु अनंत गुण का बोल अधिक है। तथा एक गुण कर्कश से संख्यात गुण कर्कश पुद्‌गल प्रदेश से असंख्य गुणा कहना। संख्यातगुण कर्कश पुद्‌गलों से उनके प्रदेश संख्यात गुण ही कहना। कर्कश के समान मृदु गुरु लघु स्पर्श भी जानना। शेष चार स्पर्श वर्ण के समान होते है।

पुद्गल युग्म–

एक परमाणु आदि एक कल्योज युग्म है और अनेक परमाणु आदि विभागादेश से अनेक कल्योज युग्म है। अनेक परमाणु आदि ओघादेश से चारों में से कोई युग्म होते हैं।

प्रदेश की अपेक्षा परमाणु, पांच प्रदेशी, नौ प्रदेशी कल्योज युग्म है। 2-6-10 प्रदेशी (द्वापर) द्वापर युग्म है। 3-7 प्रदेशी तेओग (त्र्योज) युग्म है। 4-8प्रदेशी कृत युग्म है। आगे संख्यात प्रदेशी आदि में चारों युग्म में से कोई एक युग्म होता है। परमाणु आदि दस प्रदेशी तक बहुवचन में विभागादेश से इसी प्रकार जानना। ओघादेश से अनंत प्रदेशी तक कोई भी एक युग्म होता है। विभागादेश से संख्यात प्रदेशी आदि में चारों ही युग्म होते हैं।

अवगाहना–

अपनी प्रदेश संख्या से अवगाहन संख्या कम हो सकती है अधिक नहीं हो सकती है। अतः परमाणु में कल्योज, द्विप्रदेशी में द्वापर बढ़ा, तीन प्रदेशी में त्र्योज बढ़ा चार प्रदेशी में कृत युग्म बढ़ा फिर असंख्य प्रदेशावगाढ़ तक चारों युग्म होते हैं। अर्थात् एक वचन की पृच्छा में कोई एक होता है बहुवचन की पृच्छा में ओघादेश से कोई एक होता है विभागादेश से चारों होते हैं। तीन प्रदेशी में तीनों या तीनों में से एक, दो, प्रदेशी में दोनों या दोनों में से एक युग्म होता है।

स्थिति– परमाणु से अनंत प्रदेशी तक एक वचन में चारों युग्म में से कोई भी युग्म की स्थिति हो सकती है बहुवचन में ओघादेश में कोई एक युग्म की स्थिति होती है और विभागादेश से चारों युग्म की स्थिति वाले परमाणु आदि होते हैं।

वर्णादि–

स्थिति के समान ही वर्णादि 16 बोल समझना। किन्तु परमाणु आदि जिसमें जो वर्णादि होवे उसकी अपेक्षा जानना। कर्कशादि 4 स्पर्श अनंत प्रदेशी में ही होते हैं। कर्कश स्पर्श पर्यव भी एक वचन में चारों में से एक युग्म वाले होते हैं।

बहुवचन में ओघादेश से चारों युग्म में से एक युग्म होता है विभागादेश से चारों ही होते हैं।

सार्द्ध–

परमाणु 3-5-7-9 प्रदेशी सार्द्ध नहीं अनर्द्ध है। 2-4-6-8-10 प्रदेशी सार्द्ध है। आगे संख्यात प्रदेशी आदि दोनों में से एक है, सार्द्ध या अनर्द्ध।

सकंप निष्कंप–

परमाणु से अनंत प्रदेशी तक सभी सकंप निष्कंप दोनों होते हैं। सभी के सकंप की स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग, निष्कंप की स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यकाल की होती है। बहुवचन की अपेक्षा परमाणु आदि सभी के सकंप निष्कंप की स्थिति सर्वद्धा काल की होती है।

सकंप निष्कंप का अंतर–

स्वस्थान और परस्थान यों दो प्रकार के सकंप निष्कंप की अपेक्षा अंतर होता है। स्वस्थान का अर्थ है परमाणु परमाणु में रहते हुए और पर स्थान की मतलब द्विप्रदेशी आदि में रहते हुए। स्वस्थान की अपेक्षा परमाणु के सकंप की स्थिति ही निष्कंप का

अंतर काल है और निष्कंप की स्थिति ही सकंप का अंतर काल है। परस्थान की अपेक्षा सकंप निष्कंप दोनों का जघन्य अंतर एक समय उत्कृष्ट असंख्य काल का है अर्थात् परमाणु उत्कृष्ट असंख्य काल के बाद पुनः परमाणु बनता ही है।

द्विप्रदेशी आदि सभी का स्वस्थान परस्थान का अंतर काल उक्त प्रकार से ही समझना। उनमें परस्थान का उत्कृष्ट अंतर अनंत काल होता है अर्थात वे पुनः द्वि प्रदेशी आदि बने उसके बीच अनंत काल बीत सकता है। बहुवचन की अपेक्षा परमाणु आदि किसी का भी स्व पर कोई भी अंतर नहीं होता है। सभी स्कंध सदा सकंप निष्कंप शाश्वत मिलते हैं।

अल्पबहुत्व–

परमाणु से असंख्य प्रदेशी तक सकंप अल्प होते हैं निष्कंप असंख्य गुणे होते हैं। अनंत प्रदेशी में निष्कंप अल्प होते हैं सकंप अनंतगुणे होते हैं।

1 अनंत प्रदेशी स्कंध निष्कंप अल्प होते हैं उससे 2. वे ही सकंप अनंत गुणे, 3. परमाणु सकंप अनंत गुणे, 4. संख्यात प्रदेशी सकंप असंख्य गुणे, 5. असंख्यात प्रदेशी सकंप असंख्य गुणे, 6परमाणु निष्कंप असंख्य गुणे, 7. संख्यात प्रदेशी निष्कंप संख्यात गुणे, 8. असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्य गुणे।

प्रदेश की अपेक्षा भी यही क्रम है परमाणु के अप्रदेश कहना एवं संख्यात प्रदेशी के निष्कंप असंख्यात गुणे कहना।

द्रव्यः प्रदेश की सम्मिलित अल्पबहुत्व– 1 अनंत प्रदेशी स्कंध निष्कंप सबसे अल्प है, 2. उनके प्रदेश अनंत गुणे, 3. वे ही सकंप अनंत गुणे, 4. उनके प्रदेश अनंतगुणे, 5. परमाणु सकंप अनंतगुणे, 6. संख्यात प्रदेशी सकंप असंख्यगुणे, 7. वे ही प्रदेश से संख्यातगुणे, 8. असंख्यात प्रदेशी सकंप असंख्यगुणा, 9. उन्हीं के प्रदेश असंख्य गुणे, 10. परमाणु निष्कंप असंख्य गुणा, 11. संख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यगुणा, 12. उन्हीं के प्रदेश संख्यातगुणे, 13. असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्य गुणे, 14. उनके ही प्रदेश असंख्य गुणे।

देश सर्व सकंप– परमाणु सर्व-सकंप होते हैं। द्विप्रदेशी आदि देश और सर्व दोनों सकंप होते हैं। बहुवचन में भी ऐसे ही समझना। द्विप्रदेशी आदि के देश और सर्व सकंप की कायस्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की होती है। शेष कायस्थिति परमाणु आदि की सकंप निष्कंप के समान है। बहुवचन में देश सर्व सभी की कायस्थिति सर्वद्धा काल की होती है। अंतर एवं अल्पबहुत्व सकंप निष्कंप के समान है। जिसकी तालिका इस प्रकार है-

अन्तर–

पुद्गल	काय स्थिति (उत्कृष्ट)	स्वस्थान अंतर (उत्कृष्ट)	परस्थान अंतर (उत्कृष्ट)	अल्प बहुत्व
सर्व सकंप परमाणु	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	असंख्याता काल	अल्प
सर्व सकंप द्विप्रदेशी आदि	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	अनंत काल	1 अल्प
देश सकंप द्विप्रदेशी आदि	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	अनंत काल	2 असं. गुणा
निष्कंप परमाणु	असंख्याता काल	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्यात काल	असं. गुणा
निष्कंप द्विप्रदेशी आदि	असंख्याता काल	आवलिका के असंख्यातवें भाग	अनंत काल	3 असं. गुणा

नोट- 1. द्विप्रदेशी के समान ही अनंत प्रदेशी तक है, 2. जघन्य सभी की कायस्थिति और अंतर एक समय का ही होता है, 3. आवलिका के = इसका मतलब आवलिका के असंख्यातवें भाग समझना। 4. अल्पबहुत्व में द्विप्रदेशी से असंख्य प्रदेशी तक समान है अनंत प्रदेशी में- 1. सर्व सकंप अल्प है, 2. निष्कंप अनंत गुणा है, 3. देश सकंप अनंत गुणा है।

सम्मिलित 20 बोल पुद्गल की अल्प बहुत्व-

परमाणु के सकंप, अकंप दो भेद है। संख्यात प्रदेशी के सर्व सकंप, देश सकंप और निष्कंप ये तीन और इनके प्रदेश के तीन यों 6भेद हैं। ऐसे ही 6-6भेद सकंप और अनंत प्रदेशी के हैं।

1 से 6. अनंत प्रदेशी के हैं उनके द्रव्य के साथ अनंतर ही प्रदेश अनंत गुणा है। 7. असंख्यात प्रदेशी एवं सर्व सकंप अनंतगुणा, 8. उन्हीं के प्रदेश असंख्य गुण, 9. संख्यात प्रदेशी सर्व सकंप अनंत गुणा, 10. उन्हीं के प्रदेश संख्यात गुणा, 11. परमाणु सर्व सकंप असंख्य गुणा, 12. संख्यात प्रदेशी देश सकंप असंख्य गुणा, 13. उन्हीं के प्रदेश संख्यात गुणा, 14. असंख्यात प्रदेशी देश सकंप असंख्यगुणा, 15. उन्हीं के प्रदेश असंख्य गुणा, 16. परमाणु निष्कंप असंख्य गुणा, 17. संख्यात प्रदेशी निष्कंप संख्यात गुणा, 18.उनके प्रदेश संख्यात गुणा, 19. असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्य गुणा, 20. उन्हीं के प्रदेश असंख्य गुणा।

रूचक प्रदेश- धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय एवं जीवों के आठ-आठ मध्य (रूचक) प्रदेश होते हैं। जो आठ आकाश प्रदेश अवगाहन करते हैं। किन्तु जीव के संकोच विस्तार होता रहता है। इस कारण कभी एक दो आदि आकाश प्रदेश पर भी आठों मध्य प्रदेश रह जाते हैं और कभी आठ आकाश प्रदेश पर भी रह सकते हैं किन्तु स्वभावतः सात प्रदेश पर नहीं रहते हैं।

पांचवा उद्देशक-

1. पर्यव (पज्जवा) सम्बन्धी वर्णन प्रज्ञापना पर 5 के समान है, 2. समय से लेकर पुद्गलपरावर्त्तन जितने काल का स्वरूप अनुयोग द्वार सूत्र के समान है।

असंख्य समयों की आवलिका यावत् सागरोपम होते हैं। पुद्गल परावर्त्तन में अनंत समय होते हैं। संख्यात वर्षों में आवलिका आदि संख्यात होती है। पल्योपम आदि असंख्यात वर्षों में असंख्य आवलिका आदि होते हैं। पुद्गल परावर्त्तन में अनंत होते हैं।

समय से लेकर शीर्ष पहेलिका तक 46भेद हैं 194 अंक होते हैं यहां तक गणना संख्या है आगे उपमा संख्या है।

भूतकाल भविष्यकाल अनंत होने से बराबर होते हैं किन्तु वर्तमान का एक समय अलग होता है। उसे भविष्य काल में समाविष्ट करने से भविष्य काल समयाधिक कहा जाता है। सर्वद्धा काल भूतकाल से दुगुना साधिक होता है।

निगोद-

निगोद शरीर और निगोद के जीव यों दो प्रकार है। पुनः सूक्ष्म निगोद और बादर निगोद यों भेद हैं। सूक्ष्म चक्षु ग्राह्य नहीं होते और बादर के असंख्य शरीर मिलने पर चक्षु ग्राह्य होते हैं। इनका विशेष वर्णन स्थिति आदि जीवाभिगम सूत्र पुष्प 24 में देखें।

6 भाव का वर्णन शतक 17 उद्देशक एक के समान है एवं अनुयोग द्वार सूत्र में देखें।

छट्ठा उद्देशक-

1	प्रज्ञापना	5
2	वेद	3
3	राग	2
4	कल्प	5
5	चारित्र	2
6	प्रतिसेवना	2
7	ज्ञान	5
8	तीर्थ	2
9	लिंग	3
10	शरीर	5
11	क्षेत्र	5
12	काल	6
13	गति	2
14	संयम	स्थान
15	निकास	
16	योग	2
17	उपयोग	2
18	कषाय	4
19	लेश्या	6
20	परिणाम	3
21	बंध	8
22	वेदन	8
23	उदीरणा	8
24	उपसंपद्हान	
25	संज्ञा	2
26	आहार	2
27	भव	
28	आकर्ष	2
29	कालमान	2
30	अंतर	2
31	समुद्घात	7
32	क्षेत्र	5
33	स्पर्शना	5
34	भाव	3
35	परिणाम	
36	अल्प बहुत्व	

छः नियंठा-निर्ग्रन्थ वर्णन- पंच महाव्रत धारी श्रमणों को निर्ग्रन्थ कहते हैं इनको 6प्रकार के कहे गये हैं- 1. पुलाक, 2. बकुश, 3. प्रतिसेवना, 4. कषाय कुशील, 5. निर्ग्रन्थ, 6. स्नातक। इन 6 का स्वरूप 36द्वारों से स्पष्ट किया गया है वे द्वार इस प्रकार हैः-

पहला प्रज्ञापना द्वार- इस द्वार में इन छहों की परिभाषा एवं अवांतर भेद समझाये गये हैं। मूल भेद निर्ग्रन्थ के 5 ही किये हैं। लेकिन ''कुशील'' के प्रति सेवना कुशील और कषाय कुशील मुख्य दो भेद किये गये हैं और आगे 35 द्वारों का वर्णन इन 6 भेदों पर किया गया है। अतः निर्ग्रन्थ के 6 भेद ही कहे जाते हैं और 6 भेदों पर सम्पूर्ण वर्णन किया जाता है। इन छहों निर्ग्रन्थों की परिभाषा आदि छेद सूत्र के साथ (व्यवहार सूत्र) के परिशिष्ट में विस्तार से समझाई गई है अतः वहीं देखें तथा प्रश्न व्याकरण सारांश भी देखें।

दूसरा वेद द्वार- स्त्री, पुरुष, नपुंसक तीन भेद है। नपुंसक के स्त्री नपुंसक और पुरुष नपुंसक ऐसे दो भेद हैं। ये भेद

उनके योनि, लिंग, स्तन आदि अंगोपांग की अपेक्षा होते हैं। ये दोनों भेद स्वभाविक जन्म से होते हैं। कृत नपुंसक या विकृति प्राप्त नपुंसक सभी मौलिक रूप से प्रायः पुरुष ही होते हैं। इन नपुंसकों में केवल स्त्री नपुंसक में एक भी नियंठा नहीं होता है। पुरुष नपुंसक में कोई कोई नियंठे होते हैं वे चार्ट में देखें। पुलाक निर्ग्रन्थ में स्त्री वेद नहीं होता क्योंकि उन्हें पूर्व ज्ञान के बिना वह लब्धि प्राप्त नहीं होती है।

तीसरा राग द्वार– सराग, वीतराग दो भेद है। वीतराग के- उपशांत और क्षीण दो भेद है।

चौथा कल्प द्वार– इसके पांच प्रकार हैः-

1. **स्थित कल्प**– इस कल्प में 10 कल्पों का पूर्ण रूप से नियमतः पालन किया जाता है।

2. **अस्थित कल्प**– इस कल्प में 4 कल्पों का पूर्ण रूपेण पालन किया जाता है। 6 कल्पों का वैकल्पिक पालन होता है अर्थात् किसी कल्प की कुछ अलग व्यवस्था होती है और किसी कल्प का पालन ऐच्छिक निर्णय पर होता है।

3. **स्थविर कल्प**– इस कल्प में संयम के सभी छोटे बड़े नियम उपनियमों का उत्सर्ग रूप से (सामान्यतया) पूर्ण पालन किया जाता है और विशेष परिस्थिति में गीतार्थ बहुश्रुत की स्वीकृति से अपवाद सेवन किया जाता है अर्थात् सकारण संयम मर्यादा से बाह्य आचरण करके उसका आगमोक्त प्रायश्चित लिया जाता है एवं परिस्थिति समाप्त होने पर पुनः शुद्ध संयम का पालन किया जाता है। ऐसे उत्सर्ग और अपवाद के वैकल्पिक आचरण वाला यह कल्प (अवस्था) स्थविर कल्प है। इस कल्प में गीतार्थ बहुश्रुत की आज्ञा से शरीर एवं उपाधि का परिकर्म भी किया जा सकता है।

4. **जिन कल्प**– जिन का अर्थ होता है राग द्वेष के विजेता वीतराग। अतः जिनकल्प में शरीर के प्रति पूर्ण वीतरागता के तुल्य आचरण होता है वह जिनकल्प कहा जाता है। इस कल्प में संयम के नियम उपनियमों में किसी प्रकार का अपवाद सेवन नहीं किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस कल्प में शरीर एवं उपकरणों का किसी प्रकार का परिकर्म भी नहीं किया जा सकता है अर्थात् निर्दोष औषध, उपचार, कपड़े-धोना, सीना, आदि भी नहीं किया जाता है। रोग आ जाय, पांव में कांटा लग जाय, शरीर के किसी अंग में चोट लग जाय, खून बहे, तो भी कोई उपचार नहीं किया जाता है। ऐसी शारीरिक वीतरागता धारण जिसमें की जाती है वह जिन कल्प है।

5. **कल्पातीत**– जो शास्त्राज्ञाओं मर्यादाओं प्रतिबंधों से परे हो जाते हैं, मुक्त हो जाते हैं। अपने ही ज्ञान और विवेक से आचरण करना जिनका धर्म हो जाता है। ऐसे पूर्ण योग्यता सम्पन्न साधको का आचार ''कल्पातीत'' (अर्थात उक्त चारों कल्पों से मुक्त) कहा जाता है। तीर्थंकर भगवान एवं उपशांत वीतराग, क्षीण वीतराग (11-12-13-14 वां गुण स्थान वाले) आदि कल्पातीत होते हैं। तीर्थंकर भगवान के अतिरिक्त छद्मस्थ मोह कर्म युक्त कोई भी साधक कल्पातीत नहीं होते हैं।

स्थित कल्प वालों के दस कल्प इस प्रकार है-

1. **अचेल कल्प-मर्यादित**– सीमित एवं सफेद वस्त्र रखना तथा पात्र आदि अन्य उपकरण भी मर्यादित रखना अर्थात् जिस उपकरण की गणना और माप जो भी सूत्रों में बताया है उसका पालन करना और जिनका माप सूत्रों में स्पष्ट नहीं है उनकी बहुश्रुतों के द्वारा निर्दिष्ट मर्यादानुसार पालन करना, यह ''अचेल कल्प'' है।

2. **औद्देशिक**– समुच्चय साधु समूह के निमित्त बनी वस्तु (आहार मकान आदि) औद्देशिक होती है। व्यक्तिगत निमित्त वाली वस्तु आधाकर्मी होती है। जिस कल्प में औद्देशिक का त्याग करना प्रत्येक साधक को आवश्यक होता है वह औद्देशिक कल्प कहा जाता है।

3. राजपिंड– मुकुट बंध अन्य राजाओं द्वारा अभिषिक्त हो ऐसे राजाओं के घर का आहार राजपिंड कहा जाता है तथा उनका अन्य भी अनेक प्रकार का राजपिंड निशीथ सूत्र आदि में बताया गया है, उसे ग्रहण नहीं करना, यह ''राजपिंड'' नामक तीसरा कल्प है।

4. शय्यातर पिंड– जिसके मकान में श्रमण श्रमणी ठहरते हैं वह शय्यातर कहलाता है। उसके घर का आहार वस्त्र आदि शय्यातर पिंड कहलाते हैं उन्हें ग्रहण नहीं करना ''शय्यातर पिंड'' कल्प है।

5. मास कल्प– श्रमण एक ग्रामादि में 29 दिन से ज्यादा न रहे और श्रमणी 58दिन से ज्यादा न रहे इसे ''मासकल्प'' कहते हैं।

6. चौमास कल्प– आषाढी पूनम से कार्तिक पूनम तक आगमोक्त कारण बिना विहार नहीं करना एक ही जगह स्थिरता पूर्वक रहना यह ''चौमास कल्प'' है।

7. व्रत कल्प– पांच महाव्रत एवं छट्ठा रात्रि भोजन व्रत का पालन करना या चातुर्याम धर्म का पालन करना ''व्रतकल्प'' है।

8. प्रतिक्रमण– सुबह शाम दोनों वक्त नियमित प्रतिक्रमण करना यह प्रतिक्रमण कल्प है।

9. कृति कर्म– दीक्षा पर्याय से वडील (बड़ों) को प्रतिक्रमण आदि यथा समय वंदन करना ''कृतिकर्म कल्प'' है।

10. पुरुष ज्येष्ठ कल्प– कोई भी श्रमण (पुरुष) किसी भी श्रमणी (स्त्री) के लिये- ज्येष्ठ ही होता है अर्थात् वंदनीय ही होता है। अतः छोटे बड़े सभी श्रमण साध्वी के लिये बड़े ही माने जाते हैं और तद्नुसार ही यथासमय विनय वंदन व्यवहार किया जाता है और साधु कोई भी हो वह साध्वी को व्यवहार वंदन नहीं करता है यह ''पुरुष ज्येष्ठ'' नामक दसवां कल्प है।

ये 10 कल्प प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के शासन में पालन करने आवश्यक है अर्थात् उन श्रमणों के ये उक्त दसों नियम पूर्ण रूपेण लागू होते हैं। शेष 22 मध्यम तीर्थंकरों के शासन में 6कल्प वैकल्पिक होते हैं उनकी व्यवस्था इस प्रकार है-

1. अचेल कल्प– स्वमति निर्णय अनुसार वस्त्र पात्र हीनाधिक मात्रा में सफेद या रंगीन जैसा समय पर मिले, लेना चाहे, ले सकते हैं।

2. औद्देशिक– अनेक साधु समूह के उद्देश से बना आहार व्यक्तिगत कोई श्रमण लेना चाहे तो ले सकता है। यदि उसके लिये ही व्यक्तिगत किसी ने बनाया हो वैसा आधाकर्मी नहीं ले सकता है।

3. राजपिंड– इच्छानुसार यथा प्रसंग ले सकते हैं।

4. मास कल्प– आवश्यक लगे तो 29 दिन से अधिक भी इच्छानुसार ठहर सकते हैं।

5. चौमास कल्प– आवश्यक लगे तो भादवा सुद 5 के पूर्व तक विहार कर सकते हैं। पंचमी के दिन से कार्तिक सुदी 15 तक विहार नहीं करना, इतने नियम का पालन करते हैं। (70 दिन)

6. प्रतिक्रमण– आवश्यक लगे तो सुबह शाम प्रतिक्रमण कर लेना और आवश्यक न लगे तो नहीं करना किन्तु पक्खी चौमासी संवत्सरी के दिन शाम का प्रतिक्रमण अवश्य करना।

इस प्रकार की व्यवस्था वाले ये 6वैकल्पिक कल्प है। मध्यम तीर्थंकर के साधुओं का इस प्रकार वैकल्पिक- ''अस्थित कल्प'' कहा गया है। और प्रथम एवं अंतिम तीर्थंकर के श्रमणों के इन दस ही कल्पों का आवश्यक होना ''स्थित कल्प'' कहा गया है।

अस्थित कल्प वालों के चार आवश्यक करणीय कल्प ये हैं- 1. शय्यातर पिंड- मकान मालिक का आहारादि नहीं लेना। 2. व्रत- महाव्रत चातुर्याम एवं अन्य व्रत नियम समिति गुप्ति आदि का आवश्यक रूप से पालन करना। 3. कृति कर्म- दीक्षा पर्याय के क्रम से वदंन विनय व्यवहार करना आवश्यक होता है। 4. पुरुष ज्येष्ठ- श्रमणियों के लिये सभी श्रमणों को ज्येष्ठ पूज्यनीय मान कर विनय वंदन व्यवहार करना आवश्यक कल्प होता है।

यह आर्य संस्कृति का अनादि नियम है। भारतीय धर्म सिद्धान्तों में कहीं भी श्रमणियें श्रमणों के लिये वंदनीय नहीं कही गई है। अतः यह भारतीय संस्कृति का लौकिक व्यवहार है। इसी कारण इस नियम को मध्यम तीर्थंकरों के शासन में भी वैकल्पिक नहीं बताकर आवश्यकीय नियमों में बताया है। अतः पुरूष ज्येष्ठ का व्यवहार करने का अनादि धर्म सिद्धांत ही लोक व्यवहार के अनुगत है। ऐसा ही सर्वज्ञों ने उपयुक्त देखा है। इसी सिद्धांत से लोक व्यवहार एवं व्यवस्था सुंदर ढंग से चली आ रही है। इस आगमिक सिद्धांत का मतलब यह नहीं है कि साध्वी संघ का आदर नहीं होता है। श्रमण निर्ग्रन्थ गृहस्थों की किसी प्रकार की सेवा नहीं कर सकते किन्तु श्रमणी के आवश्यकीय स्थिति में वह हर सेवा के लिये तत्पर रहता है। वह सेवा-गोचरी लाना, संरक्षण करना, उठाकर अन्यत्र पहुंचा देना, कहीं गिरते पड़ते घबराते वक्त सहारा देना या पानी में बहते हुए हो तो तैर कर निकाल देना आदि विभिन्न सूत्रों में अनेक प्रकार की कही गई है। इन अनेक कार्यों की शास्त्र में आज्ञा है एवं भाव वंदन नमस्कार में श्रमण भी सभी श्रमणियों को वंदन नमस्कार करता है। पुरुष ज्येष्ठ कल्प मात्र लौकिक व्यवहार के लिये ही तीर्थंकरों द्वारा निर्दिष्ट है उसकी अवहेलना अवज्ञा करना श्रद्धालु बुद्धिमानों को योग्य नहीं होता है। व्यवहार की जगह व्यवहार है और निश्चय (भाव) की जगह निश्चय (भाव) है। यही पुरुष ज्येष्ठ कल्प को समझने का सार है आर्य संस्कृति में शादी होने पर पुरुष के घर स्त्री आती है किन्तु स्त्री के घर पुरुष नहीं।

ये दशों कल्प यहां भगवती सूत्र में स्थितकल्प में समाविष्ट किये गये है।

पांचवां चारित्र द्वार– चारित्र पांच है उनका स्वरूप इस प्रकार हैः-

1. सामायिक चारित्र– यह चारित्र प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के शासन में अल्प कालीन होता है जघन्य सात दिन का उत्कृष्ट छः महिना का होता है अर्थात् इतने समय में इस चारित्र को पुनः महाव्रतारोपण करके छेदोपस्थापनीय चारित्र में परिवर्तित कर दिया जाता है। इस कारण इन दो तीर्थंकरों के शासन वर्त्ती श्रमणों का सामायिक चारित्र इत्वर = इत्वरकालिक कहा जाता है। शेष मध्यम तीर्थंकरों के शासनवर्ती श्रमणों का, तीर्थंकर का, अन्य स्वयंबुद्ध आदि का, ग्रहण किया गया सामायिक चारित्र आजीवन का होता है। इस प्रकार सामायिक चारित्र के दो भेद होते हैं इत्वरिक सामायिक चारित्र और यावत्कथित = आजीवन सामायिक चारित्र।

2. छेदोपस्थापनीय चारित्र– पूर्व प्रत्याख्यान कृत जो सामायिक चारित्र है, उनका छेदन करके पुनः महाव्रतारोपण महाव्रत में स्थापित किया जाता है यह उपस्थापन करना कहा जाता है। इस नये उपस्थापित किये गये चारित्र को ही छेदोपस्थानीय चारित्र कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है। 1. नवदीक्षित को 7 दिन बाद अथवा 6 महिने तक सैद्धान्तिक वैधानिक रूप से दिया जाने वाला यह चारित्र ''निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र'' कहा जाता है। 2. किसी प्रकार का गुरुत्तरभारी दोष लगाने पर जब

पूर्व चारित्र का पूर्ण छेद रूप प्रायश्चित आता है, तब वह साधक के सम्पूर्ण पूर्व दीक्षा पर्याय का छेदन करके पुनः महाव्रतारोपण किया जाता है। वह सातिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र कहा जाता है। पहला सैद्धान्तिक अर्थात् शासन के नियम से होता है और दूसरा दोष सेवन होता है।

सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र में विशिष्ट व्यवहारिक मर्यादाओं का एवं कल्पों का अंतर होता है। छेदोपस्थापनीय में 10 कल्प आवश्यक होते हैं अतः वे स्थित कल्प वाले कहे जाते हैं। सामायिक में 6 कल्प वैकल्पिक होते हैं अतः वे अस्थित कल्प वाले कहे जाते हैं। इसके अतिरिक्त दोनों चारित्रों के संयम स्थान, पर्यव, गति, गुणस्थान आदि कई समानताएं होती है। अतः आराधना, भाव चारित्र और गति की अपेक्षा दोनों दर्जा समान ही है।

3. परिहार विशुद्ध चारित्र– यह एक प्रकार की विशिष्ट तप साधना के कल्प वाला चारित्र है। मूल में यह छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला ही होता है। ऐसी साधना के लिये प्रथम और अंतिम तीर्थंकरों के शासन में श्रमणों के लिए विशिष्ट व्यवस्था होती है। सामूहिक संघ में विविध वक्र जड़ साधु भी होते हैं। उक्त इस साधना की अलग व्यवस्था होती हैं अन्य तीर्थंकरों के शासन में ऐसे तप और इससे भी विशिष्ट तप साधनाएं समूह में रहते हुए ही की जा सकती है। अतः यह विशिष्ट तप साधना का परिहार विशुद्ध चारित्र प्रथम और अंतिम तीर्थंकरों के शासन में ही होता है।

विधि– इस साधना के लिये 9 नौ साधक एक साथ आज्ञा लेकर अलग विचरण करते हैं। उनमें सर्व प्रथम चार साधक तप करते हैं, चार उनकी आवश्यक सेवा परिचर्या करते हैं, और एक साधक गण की प्रमुखता स्वीकार करता है। उसके बाद सेवा करने वाले चारों साधक तप करते हैं। तप करने वाले सेवा करते हैं उसके बाद गण प्रमुख साधक तप करता है, सात व्यक्ति सेवा आदि करते हैं, एक साधक प्रमुखता स्वीकार करता है। प्रमुख व्यक्ति जिम्मेदारी के एवं व्यवहार के तथा धर्म प्रचार के कर्तव्यों का, आचरणों का पालन करता है। शेष अपनी मौन ध्यान साधना, स्वाध्याय, सेवा, तप आदि में संलग्न रहते हैं। तप करने वाले नियमित समय आगम निर्दिष्ट तप आवश्यक रूप से करते हैं उससे कम नहीं करते, किन्तु अधिक तप कर सकते हैं।

तपस्वी गर्मी में उपवास बेला तेला करते हैं, सर्दी में बेला, तेला, चौला करते हैं, वर्षाकाल में तेला चौला पंचोला करते हैं। पारणे में आयंबिल करते हैं ये तप निरंतर चलते हैं अर्थात् एक आयंबिल के बाद पुनः तपस्या चालू रहती है। प्रति छः महिने के बाद साधकों का नम्बर बदलता रहता है। 18 महिनों में सभी का नंबर आ जाता है। अठारह महीनों के बाद ये तपस्वी साधक अपनी उस साधना को विसर्जित कर गुरु सेवा में आ सकते हैं और आगे बढ़ाना चाहे तो उसी क्रम से 6-6महिने बदलते हुए कर सकते हैं।

इस प्रकार यह चारित्र कम से कम 18महिनों के लिये धारण किया जाता है उत्कृष्ट इसमें जीवन भर भी रहा जा सकता है। इनमें से कोई साधक बीच में आयु पूर्ण कर सकता है और विशिष्ट प्रसंगवश कोई साधक बीच में आकर सम्मिलित भी हो सकता है। यह साधना पूर्वधारी श्रमण ही करते हैं। दस पूर्व से कम ज्ञान वाले एवं 9 वें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु से ऊपरी ज्ञान वाले धारण करते हैं। उससे कम ज्ञान वालों को आज्ञा नहीं दी जाती है एवं अधिक ज्ञान वालों को ऐसी गच्छ मुक्त किसी भी प्रकार की साधनाओं की आवश्यकता ही नहीं रहती है। इस तप को कम से कम 20 वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले ही धारण कर सकते हैं।

अन्य अनेक विषयों का वर्णन आगे सातवें उद्देशक में 36 द्वारों से किया जायेगा। वहीं इस चारित्र सम्बन्धी कई तत्त्वों की जानकारी मिल सकेगी।

4. सूक्ष्म संपराय चारित्र– उपरोक्त चारित्रों का पालन करते हुए जब मोह कर्म की 27 प्रकृति का क्षय अथवा उपशम हो जाता है, केवल सूक्ष्म संज्वलन लोभ का उदय मात्र अवशेष रहता है, साधक की उस अवस्था को ''सूक्ष्म संपराय चारित्र'' कहा जाता है। इस चारित्र में दसवां गुणस्थान होता है। अन्य वर्णन आगे सातवें उद्देशक में 36 द्वारों से बताया गया है।

5. यथाख्यात चारित्र– सूक्ष्म संपराय चारित्र से आगे बढ़कर साधक इसी चारित्र में प्रवेश करता है अर्थात् अवशेष संज्वलन लोभ मोह कर्म का पूर्णतया उपशम या क्षय करने पर यथाख्यात चारित्र की प्राप्ति होती है, इसके दो विभाग हैं- उपशांत मोह यथाख्यात और क्षीण मोह यथाख्यात, उपशांत मोह यथाख्यात अस्थाई होता है अंतर्मुहूर्त बाद समाप्त हो जाता है तब साधक पुनः सूक्ष्म संपराय चारित्र में पहुंच जाता है। क्षीण मोह यथाख्यात वाला आगे बढ़ कर अंतर्मुहूर्त में ही अवशेष तीन घाती कर्मों को क्षय कर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त करता है। उपशांत मोह यथाख्यात चारित्र में एक ग्यारहवा गुणस्थान है और क्षीण मोह यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति होती है। इसके दो दिमाग है, उपशांत मोह यथाख्यात चारित्र में 12-13-14 तीन गुणस्थान है। इस प्रकार कुल 4 गुणस्थान है, जिसमें दो छद्मस्थ गुण स्थान है, दो केवली गुणस्थान है। तेरहवें 14 वें गुणस्थान में चार अघाति कर्म रहते हैं- वेदनीय, आयु, नाम, गौत्र। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, और अंतराय तीन घाति कर्म का 12वें गुणस्थान के अंत में क्षय होता है और अवशेष चार अघाति कर्म का 14 वें गुणस्थान के अंतिम समय में पूर्ण रूपेण क्षय होता है। तब यथाख्यात चारित्र वाला सिद्ध गति को प्राप्त करता है। यहां यथाख्यातचारित्र भी नहीं रहता है क्योंकि चारित्र इह भविक (मनुष्य भविक) ही है।

छट्ठा प्रतिसेवना द्वार– संयम के मूल गुण- पांच महाव्रत एवं छट्ठा रात्रि भोजन त्याग व्रत है। उत्तर गुण में- स्वाध्याय, तप एवं नियमोपनियम है। इन मूल गुण और उत्तर गुण में दोष लगाना, इनकी मर्यादाओं का भंग करना प्रतिसेवना = विपरीत आचरण कहलाता है। इस प्रकार प्रतिसेवना दो प्रकार की है- 1. मूलगुण प्रतिसेवना, 2. उत्तरगुण प्रतिसेवना। किसी भी मर्यादा का भंग नहीं करना, दोष नहीं लगाना 'अप्रतिसेवना' कहा जाता है ऐसा साधक या नियंठा-चारित्र 'अप्रतिसेवी' कहलाता है।

सातवां ज्ञान द्वार– 5 ज्ञान, 3 अज्ञान यों आठ प्रकार है एवं श्रुत ज्ञान की अपेक्षा जघन्य अष्ट प्रवचन माता का ज्ञान श्रमण को होना आवश्यक होता है उत्कृष्ट में 11 अंग, 9 पूर्व, 10 पूर्व, या 14 पूर्व का ज्ञान होता है।

आठवां तीर्थ द्वार– किसी तीर्थंकर का शासन विच्छेद हो जाय या उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के पहले तीर्थंकर का शासन प्रारम्भ न हो उसके पहले ही कोई स्वतः संयम अंगीकार करे वह अतीर्थ में कहा जाता है। तीर्थ की स्थापना के बाद एवं तीर्थ विच्छेद होने के पहले तीर्थंकर के शासन में ही जो दीक्षित होते हैं, वे तीर्थ में कहे जाते हैं। इस प्रकार इस द्वार में दो प्रकार है- 1. तीर्थ में, 2. अतीर्थ में। पूछे जाने वाले कोई निर्ग्रन्थ या संयत तीर्थ में होते हैं कोई अतीर्थ में होते हैं एवं कोई दोनों में होते हैं।

नौवां लिंग द्वार– इसके तीन प्रकार है- 1. स्वलिंग- जिनमत की वेशभूषा, 2. अन्यलिंग = अन्य मत की वेशभूषा, 3. गृहस्थ लिंग = गृहस्थ की वेशभूषा। ये द्रव्य की अपेक्षा तीन भेद है इनका निर्ग्रन्थ और संयत में होने नहीं होने का कथन इस द्वार में किया गया है। भाव लिंग के तीन भेद हो सकते किन्तु यहां प्रस्तुत प्रकरण में सर्वत्र भाव से स्वलिंग ही होता है। अतः चार्ट में तीन द्रव्य लिंग और एक भाव लिंग की अपेक्षा कथन किया है।

दसवां शरीर द्वार– औदारिक आदि पांच शरीर है।

ग्यारहवां क्षेत्र द्वार– इसके दो प्रकार है- 1. कर्म भूमि, 2. अकर्म भूमि। यह क्षेत्र वर्णन जन्म की अपेक्षा और संहरण की अपेक्षा यों दो प्रकार से किया जाता है। अर्थात् निर्ग्रन्थ या संयत जन्म की अपेक्षा किस क्षेत्र में पाये जाते हैं और संहरण की अपेक्षा किस क्षेत्र में पाये जाते हैं, यह इस द्वार में बताया जाता है।

बारहवां काल द्वार– इसके तीन प्रकार है- 1. उत्सर्पिणी, 2. अवसर्पिणी, 3. नौ उत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी। इनके पुनः क्रमशः 6-6और चार भेद हैं अर्थात् उत्सर्पिणी के 6 आरे हैं। अवसर्पिणी के भी 6 आरे हैं। नो उत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी के 4 प्रकार- 1. पहले आरे के समान काल, 2. दूसरे आरे के प्रारम्भ के समान काल 3. तीसरे आरे के प्रारंभ के समान काल, 4. चौथे आरे के प्रारंभ के समानकाल एवं भाव जहां से। वे चार प्रकार के क्षेत्र क्रमशः ये हैं- 1. देव कुरू-उत्तर कुरू, 2. हरिवास-रम्यवास, 3. हेमवंत-हेरण्यवत्, 4. महाविदेह क्षेत्र। इन क्षेत्रों में जन्म, सद्भाव (होना) और संहरण यों तीन अपेक्षा से निर्ग्रन्थ या संयत का वर्णन किया जाता है।

तेरहवां गति द्वार– इस द्वार में 3 विभाग है- 1. कहां जावे - सभी नियंठे वैमानिक में ही जावे। 2. कितनी स्थिति पावे-2 पल (या अनेक पल) से लेकर 33 सागर तक यथायोग्य स्थिति प्राप्त होती है। 3. कितनी पदवी पावे- इन्द्र, सामानिक, त्रायत्रिंशक, लोकपाल और अहमिन्द्र ये पांच पदवी है। इसमें से आराधक को ही यथा योग्य पदवी प्राप्त होती है, विराधना करने वाले को ये पदवी प्राप्त नहीं होती है। निर्ग्रन्थ की गति की पृच्छा होते हुए भी आराधना विराधना का विकल्प निकटतम भूत या भविष्य काल, की अपेक्षा समझना चाहिए, अर्थात् नियमतः प्रतिसेवी कहे गये नियंठे अंतिम समय में शुद्धि करले तो उस नियंठे से आराधना का विकल्प समझना और अप्रतिसेवी निग्रंथ अंतिम समय किसी प्रतिसेवना अवस्था में आ जावे तो वह उस अप्रतिसेवी नियंठे के विराधना का विकल्प गिना जायेगा। यह आराधना विराधना का विकल्प पदवी प्राप्ति के प्रश्न के उत्तर में है। मूल पृच्छा में निर्ग्रन्थ और उसकी गति है जो केवल वैमानिक की ही है अतः आराधना विराधना के विकल्प वाले भी निर्ग्रन्थ तो हैं ही उन्हें निर्ग्रन्थ अवस्था से बाहर वाला नहीं समझा जा सकता क्योंकि तीन गति और तीन देवों का स्पष्ट निषेध सूत्र में पहले ही कर दिया गया है। अतः विराधना के विकल्प में पदवी रहित अवस्था भी वैमानिक देवों की ही समझना। भवनपति आदि इस गति द्वार के अविषय भूत है अतः उन्हें नहीं समझना चाहिये क्योंकि गति द्वार की पृच्छा में मूलतः भवनपति आदि का स्पष्ट निषेध कर दिया गया है।

चौदहवां संयमस्थान द्वार– संयम की शुद्धि एवं अध्यवसायों की भिन्नताओं से संयम स्थानों की तारतम्यता होती है। उसके अनेक दर्जे बनते हैं। वे संयम के विभिन्न दर्जे ही ''संयम स्थान'' कहे गये हैं। कुल संयम स्थान असंख्य होते हैं। कषाय रहित अवस्था हो जाने के बाद संयम स्थान स्थिर हो जाते हैं, अर्थात् अकषाय वालों के एक ही संयम स्थान होता है। अतः निर्ग्रन्थ और स्नातक के संयम स्थान एक ही होता है। शेष चारों के असंख्य असंख्य संयम स्थान होते हैं। उन असंख्य में भी हीनाधिकता होती है जिसे चौठाण वडिया कहा जाता है।

पंद्रहवां संनिकर्ष (पर्यव) द्वार– संयम के पर्यव को ''निकर्ष'' कहा गया है। संयम परिणामो के विभागों दर्जों को संयम स्थान कहा गया है और संयम धन का, सयंम गुणों का, संयम भावों का जो संचय आत्मा में होता है, वे संयम के पर्यव कहे जाते हैं। अर्थात् संयम से उपलब्ध आत्म विकास को अर्थात् आत्म गुणों की उपलब्धि और उनके संचय को ही पर्यव कहा जाता है। ऐसे संयम पर्यव अनंत होते हैं। उसमें भी प्रत्येक नियंठे के जघन्य और उत्कृष्ट पर्यव होते हैं उस अनंत में भी अनंत गुण अंतर हीनाधिकता हो सकती है इसे ''छट्ठाणवडिया'' कहा जाता है। छट्ठाणवडिया आदि का अर्थ प्रज्ञापना पद 5 में बताया गया है।

अल्पबहुत्व– कषाय कुशील के जघन्य पर्यव सबसे अल्प होते हैं। (नई दीक्षा के समय) उससे पुलाक के जघन्य पर्यव अनंत गुणे। उससे पुलाक के उत्कृष्ट पर्यव अनंत गुणे। उससे बकुश- प्रतिसेवना के जघन्य पर्यव अनंत गुणे हैं उससे बकुश के

नियंठे	पुलाक से	बकुश से	प्रतिसेवना से	कषाय कु. से	निर्ग्रंथ, स्नातक से
पुलाक	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन	अनंतगुणहीन	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
बकुश	1 अनंतगुणवृद्धि	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
प्रति.	1 अनंतगुणवृद्धि	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
कषा.	3 छठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
निर्ग्रंथ	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	0 परस्पर तुल्य
स्नातक	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	0 परस्पर तुल्य

चारित्र	पर्यव जघन्य उत्कृष्ट	छठाणवड़िया हानि	छठाणवड़िया वृद्धि
पु.कषा.	जघन्य-परस्पर तुल्यअल्प	1 अनंत भाग हानि	अनंत भाग वृद्धि
पुलाक	उत्कृष्ट अनंतगुणा	2 असं. भाग हानि	असं. भाग वृद्धि
ब.प्रति.	जघन्य-परस्पर तुल्य अनंतगुणा	3 संख्यात भाग हानि	संख्यात भाग वृद्धि
बकुश	उत्कृष्ट-अनंतगुणा	4 संख्यात गुण हानि	संख्यात गुण वृद्धि
प्रति.	उत्कृष्ट-अनंतगुणा	5 असं. गुण हानि	असं. गुण वृद्धि
कषाय.	उत्कृष्ट-अनंतगुणा	6 अनंत गुण हानि	अनंत गुण वृद्धि
नि.स्ना.	जघन्य उत्कृष्ट तुल्य अनंतगुणा	षट् स्थान रहित	षट् स्थान रहित

उत्कृष्ट पर्यव अनन्त गुणे। उससे प्रति सेवना के उत्कृष्ट पर्याय अनंत गुणे। उसने कषाय कुशील के उत्कृष्ट पर्यव गुणे। उससे निर्ग्रन्थ- स्नातक के अजधन्य अनुत्कृष्ट (एक समान) पर्यव अनन्त गुणे हैं।

पूर्व के चार नियंठों के पर्यव स्वयं की अपेक्षा और परस्पर की अपेक्षा भी छट्ठाणवडिया होते हैं। अंतिम दो नियंठों के पर्यव आपस में तुल्य होते हैं और चारों से अनंत गुणे होते हैं।

सोलहवां योग द्वार- इसके दो प्रकार है सयोगी और अयोगी। सयोगी में तीनों योग होते हैं। अयोगी में एक भी योग नहीं होता है।

सतरहवां उपयोग द्वार- साकार और अनकार दो उपयोग हैं।

अठारहवां कषाय द्वार- चार कषाय और अकषायी।

उन्नीसवां लेश्या द्वार- सलेशी (6लेश्या) और अलेशी।

बीसवां परिणाम द्वार- परिणाम के तीन प्रकार है- वर्द्धमान, हायमान, अवस्थित। इन तीनों की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति होती है। पांच नियंठों में जघन्य स्थिति तीनों की एक समय होती है। हायमान वर्द्धमान परिणाम की उत्कृष्ट स्थिति अंतर्मुहूर्त की होती है, और अवस्थित की चार नियंठों में उत्कृष्ट सात समय की होती है। निर्ग्रन्थ में अन्तर्मुहूत्त की होती है। स्नातक में वर्द्धमान

परिणाम की जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहुर्त्त की और अवस्थित परिणाम की जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशोन क्रोड पूर्व की स्थिति होती है।

21-22-23 वां द्वार- 1. बंध, 2. उदय, 3. उदीरणा आठ कर्मों की स्थिति होते हैं।

चौबीसवां उपसंपदा द्वार- प्रत्येक निर्ग्रन्थ अपनी निर्ग्रन्थ अवस्था को छोड़े तो किस-किस अवस्था को प्राप्त करते हैं। वे प्राप्त करने के आठ स्थान कहे गये हैं। 1. असंयम, 2. संयमासंयम, 3-7 पांच नियंठे, 8 सिद्धि। छः नियंठों में से स्वयं का एक नियंठा नहीं गिना है क्योंकि उसे तो छोड़ने की पृच्छा का ही उत्तर है। इस प्रकार इस द्वार में नियंठों की आपस में गति बताई गई है। ये नियंठे वाले एक दूसरे में जाते आते रहते हैं। स्नातक केवल सिद्ध गति में ही जाता है। शेष पांचों नियंठे काल करने पर असंयम में ही जाते हैं। आपस में अनंतर किसमें जाते हैं यह इस प्रकार है- 1. पुलाक कषाय कुशील में। 2. बकुश और प्रति सेवना-कषाय कुशील, संयमा संयम, असंयम में और बकुश प्रतिसेवना दोनों परस्पर में। 3. कषाय कुशील-स्नातक और सिद्ध को छोड़ कर सभी में जावे। निर्ग्रन्थ-कषाय कुशील और स्नातक में जावे। स्नातक-सिद्ध में ही जावे।

पच्चीसवां संज्ञा द्वार- चार संज्ञा और नो संज्ञोपयुक्त ये पांच प्रकार है।

नियंठा	जावे	पु.	ब.	प्र.	क.	नि.	स्ना.	असं.	संयमा संयम	नीचे उतरे तो	ऊपर चढ़े तो
पुलाकपणे छोड़ता हुआ	2 जावे	–	–	–	1	–	–	1	–	असंयम	कषाय कुशील
बकुशपणे छोड़ता हुआ	4 जावे	–	–	1	1	–	–	1	1	असंयम, संयमा संयम	प्रति., कषाय.
प्रतिसेवना छोड़ता हुआ	4 जावे	–	1	–	1	–	–	1	1	बकु., असं, संयमा संयम	कषाय कुशील
कषाय कुशील छोड़ता हुआ	6 जावे	1	1	1	–	1	–	1	1	पु.ब., प्रति. असं, सं. सयम	निर्ग्रंथ
निर्ग्रंथपने छोड़ता हुआ	3 जावे	–	–	–	1	–	1	1	–	कषाय., असंयम	स्नातक
स्नातकपणे छोड़ता हुआ	मोक्ष जावे	–		–	–	–	–	–	– –	–	मोक्ष

छब्बीसवां आहार द्वार- आहारक अणाहारक दो प्रकार का है।

सत्तावीसवां भव द्वार- उत्कृष्ट कितने भवों में ये नियंठे आ सकते हैं। चार्ट देखें।

अट्ठावीसवां आकर्ष द्वार- एक भव और अनेक भवों में कितनी बार ये नियंठे प्राप्त हो सकते हैं? चार्ट देखें।

उनतीसवां काल द्वार- निर्ग्रन्थ की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति। एक जीव की अपेक्षा और अनेक जीव की अपेक्षा।

नियंठा	एक भव अपेक्षा		अनेक भव अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	1 बार	3 बार	2 बार	7 बार
ब., प्रति., कषाय.	1 बार	पृथक सौ बार	2 बार	पृथक हजार बार
निर्ग्रंथ	1 बार	2 बार	2 बार	5 बार
स्नातक	एक बार प्राप्त होने के बाद नहीं जाता, इसी भव में मोक्ष			

तीसवां अंतर द्वार- यह दो प्रकार से है - एक जीव की अपेक्षा और अनेक जीव की अपेक्षा।

नियंठा	एक जीव की अपेक्षा		अनेक जीवों की अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
ब.प्रति. कषाय	1 समय	देशोन क्रोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत
निर्ग्रंथ	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
स्नातक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन क्रोड़ पूर्व	शाश्वत	

इकतीसवां समुद्घात- सात समुद्घात है।

नियंठा	एक जीव की अपेक्षा		अनेक जीव की अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्त्तन	1 समय	संख्याता वर्ष
ब.प्रति. कषाय.	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्त्तन	अंतर नहीं	अंतर नहीं
निर्ग्रंथ	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्त्तन	1 समय	6 मास
स्नातक	अन्तर नहीं-स्नातक मोक्ष में ही जाते हैं।			

बत्तीसवां क्षेत्र द्वार– लोक का कौन-सा भाग अवगाहन किया जाता है। पांच निर्ग्रन्थों का शरीर लोक के असंख्यातवें भाग में रहता है। केवली का शरीर समुद्घात आसरी सम्पूर्ण लोक में या लोक के अनेक असंख्य भाग में अथवा असंख्यातवें भाग में होता है।

तेतीसवां स्पर्शना द्वार– क्षेत्र के समान स्पर्शना होती है कुछ विशेषाधिक प्रदेश होते हैं।

चौतीसवां भाव द्वार– उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, इन तीन भावों में से कोई एक भाव से नियंठा होता है।

पेंतीसवा परिमाण द्वार– जघन्य उत्कृष्ट कितनी संख्या में निर्ग्रन्थ होते हैं। इसमें भी दो प्रकार है- 1. नये कितने एक साथ बनते हैं और 2. पुराने बने हुए एवं नये कुल कितने मिल सकते हैं? चार्ट में प्रत्येक की जगह अनेक भी पठनीय है।

छत्तीसवां अल्पबहुत्व द्वार– छहों नियंठों में किसमें कम और किसमें ज्यादा है?

नियंठा	वर्तमान पर्याय		पूर्व पर्याय आश्रित (पूर्व प्रतिपन्न)	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	1-2-3	प्रत्येक सौ (200 से 900)	1-2-3	प्रत्येक हजार
बकुश, प्रतिसेवना	1-2-3	प्रत्येक सौ	जघन्य उत्कृष्ट	प्रत्येक सौ करोड़
कषाय कुशील	1-2-3	प्रत्येक हजार	-	प्रत्येक हजार करोड़
निर्ग्रंथ	1-2-3	162 (क्षपक 108, उपशम 54)	1-2-3	प्रत्येक सौ
स्नातक	1-2-3	108 (क्षपक श्रेणी)	-	नियमा प्रत्येक करोड़

छः नियंठों के 36 द्वार का चार्ट-

सूचना– चार्ट गत कोई निर्देश समझ में न आवे तो द्वारों का वर्णन जो ऊपर दिया गया है उसे ध्यान से पढ़ कर समझने का

द्वार	पुलाक	बकुश	प्रतिसेवना	कषाय कुशील	निर्ग्रंथ	स्नातक
1 प्रज्ञापना	ज्ञानादि 5	आभोगादि 5	ज्ञानादि 5	ज्ञानादि 5	पढ़म आदि 5	5 गुण
2 वेद	2	3	3	3+अवेदी	अवेदी	अवेदी
3 राग	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी	वीतरागी	वीतरागी
4 कल्प	3	4	4	5	3	3
5 चारित्र	2	2	2	4	1	1
6 प्रतिसेवना	2	1	2	अप्रतिसेवी	अप्रतिसेवी	अप्रतिसेवी
7 ज्ञान	3	3	3	4	4	1
श्रुत	9 पूर्व न्यून/ पूर्ण	10 पूर्व	10 पूर्व	14 पूर्व	14 पूर्व	श्रुत व्यतिरिक्त
8 तीर्थ द्वार	तीर्थ में	तीर्थ में	तीर्थ में	दोनों में	दोनों में	दोनों में
9 लिंग द्रव्य/ भाव	3/1	3/1	3/1	3/1	3/1	3/1
10 शरीर	3	4	4	5	3	3
11 क्षेत्र जन्म	1 (कर्मभूमि)	1	1	1	1	1
संहरण	नहीं	2	2	2	2	2
12 काल	3	3	3	3	3	3
अवसर्पिणी जन्म	3-4 आरा	3-4-5	3-4-5	3-4-5	3-4	3-4
'' सद्भाव	3-4-5			3-4-5	3-4-5	
उत्सर्पिणी जन्म		2-3-4	2-3-4	2-3-4	2-3-4	2-3-4
'' सद्भाव		3-4	3-4	3-4	3-4	3-4
संहरण	नहीं	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र
नो उत्स. नो.अव. जन्म/सद्भाव	1 (महाविदेह)	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग
संहरण	नहीं	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र
13 गति	1 से 8 देवलोक	1 से 12 देवलोक	1 से 12 देवलोक	सभी वैमानिक (35)	5 अणुत्तर	मोक्ष
स्थिति	2 पल/18 सागर	2 पल/22 सागर	2 पल/22 सागर	2 पल/33 सागर	33 सागर	सादि अनंत
पदवी	4	4	4	5	1	नहीं (मोक्ष)
14 संयम स्थान	असंख्य	असंख्य	असंख्य	असंख्य	1	1
अल्प बहुत्व	2 अस. गुणा	3 अस. गुणा	4 अस. गुणा	5 अस. गुणा	1 अल्प	1 अल्प
15 पर्यव	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत
पुलाक पर्यव	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग

ब.प्रति. पर्यव	अनंतगुणा	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
कषाय कुशील	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
नि.स्ना.	अनंतगुण	अनंतगुण	अनंतगुण	अनंतगुण	तुल्य	तुल्य
अल्प बहुत्व	1/2	3/4	3/5	1/6	7 अनंतगुणा	7 अनंतगुणा
16 योग	3	3	3	3	3	3/अयोगी
17 उपयोग	2	2	2	2	2	2
18 कषाय	4	4	4	4, 3, 2, 1	अकषायी	अकषायी
19 लेश्या	3	3	3	6	1	1/अलेशी
20 परिणाम	3	3	3	3	2	2
वर्द्धमान	1 समय/	1 समय/	1 समय/	1 समय/	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त		
हायमान	1 समय/	1 समय/	1 समय/	1 समय/	नहीं	नहीं
स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त		
अवस्थित	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ अ.मु.	अ.मु./देशोन क्रोड़ पूर्व
21 कर्मबंध	7	7-8	7-8	7-8-6	1	1/अबंध
22 उदय (वेद)	8	8	8	8	7	4
23 उदीरणा	6	7-8-6	7-8-6	6-8-6-5	5-2	2/अनुदीरणा
24 उवसंपदा	2	4	4	6	3	मोक्ष
(गत)	कषा.कु./	3 नियंठा/	3 नियंठा/	5 नियंठा	कषा.असं.	
संयम आदि में	असंयम	असंयम	असंयम	असंयम	स्नातक	मोक्ष
25 संज्ञा	नो संज्ञोपयुक्त	5	5	5	नो संज्ञोपयुक्त	नो संज्ञोपयुक्त
26 आहार	आहारक	आहारक	आहारक	आहारक	आहारक	दोनों
27 भव ज./उ.	1/3	1/8	1/8	1/8	1/3	1/मोक्ष
28 आकर्ष 1 भव आ.	1/3 बार	1/अनेक सौ बार	1/अनेक सौ बार	1/अनेक सौ बार	1/2	1
अनेक भव	2/7 बार	2/अनेक हजार	2/अनेक हजार	2/अनेक हजार	2/5	1
29 स्थिति एक जीव अनेक जीव	अन्तर्मुहूर्त 1 समय/अ.मु.	1 समय/देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत	1 समय/ देशोन क.पू. शाश्वत	1 समय/देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत	1 समय/अ.मु. करोड़ पूर्व 1 समय/अ.मु.	अं.मु./देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत
30 अंतर एक जीव ज.उ.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोनअर्द्ध पुद.परा.	– –
अंतर अनेक जीव ज./उ.	1 समय/ संख्याता वर्ष	–	–	–	1 समय/6 माह	–

31 समुद्घात	3 क्रमशः	5	5	6	–	1
32 क्षेत्र (अवगा.)	असंख्यांश लोक	असंख्यातवां भाग लोक	असंख्यातवां भाग लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	सर्वलोक आदि असंख्यांश लोक
33 स्पर्शना	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक लोक साधिक	सर्वलोक आदि असंख्यांश लोक
34 भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	2 भाव	क्षायिक भाव
35 परिमाण नये	0/1/अनेक सौ	0/1 अनेक सौ	0/1/अनेक सौ	0/1/अनेक हजार	0/1/162	0/1/108
परिमाण पुराने	0/अनेक हजार	अनेक सौ करोड़	अनेक सौ करोड़	अनेक हजार करोड़	0/1/अनेक सौ	अनेक करोड़
36 अल्प बहुत्व	2 संख्यगुणा	4संख्यगुणा	5 संख्यगुणा	6 संख्यगुणा	1 अल्प	3 संख्यगुणा

प्रयत्न करना चाहिये तथा चार्ट के बाद टिप्पणी पढ़ कर समझने का प्रयत्न करें-

टिप्पण- 1. पुलाक आदि के 5-5 प्रकार के अनुत्तरोयपातिक के परिशिष्ट में देखें। 2. पुलाक में स्थित अस्थित और स्थविर ये तीन कल्प हैं। निर्ग्रन्थ स्नातक में स्थित अस्थित और कल्पातीत ये तीन कल्प हैं। जहां चार है वहा कल्पातीत नहीं है। 3. जहां बराबर (=) का चिन्ह है उसका अर्थ है उसके पूर्ववर्ती नियंठे के समान है यथा- प्रतिसेवना द्वार में निर्ग्रन्थ में बराबर का चिन्ह है तो वह कषाय कुशील के समान अप्रति सेवी जानना। इसी प्रकार सर्वत्र सभी चार्टों में ऐसा ही समझना। 4. चारित्र द्वार में जो भी संख्या है, वे चारित्र क्रमशः जानना। 5. पुलाक का जघन्य श्रुतज्ञान 9वें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु (तीसरा अध्याय) है अर्थात् 8पूर्वों का ज्ञान सम्पूर्ण और 9 वां पूर्व का अध्ययन चलता हो उसे पुलाक लब्धि हो सकती है। उत्कृष्ट 10 पूर्व के ज्ञान वाला पुलाक लब्धि का प्रयोग कर सकता है। 10 पूर्व से अधिक ज्ञान वाले पुलाक लब्धि प्रयोग नहीं कर सकते हैं और करे तो 10 पूर्व से अधिक का क्षयोपशामिक ज्ञान घट कर 10 पूर्व में आ जाता है। 6. बकुश आदि में जघन्य श्रुत आठ प्रवचनमाता का है। चार्ट में केवल उत्कृष्ट ही दिया है। 7. पुलाक का संहरण नहीं होता है इसका तात्पर्य यह है कि अकर्म भूमि या अन्य अकर्मक आरों के स्थान पर पुलाक लब्धि सम्पन्न साधु का संहरण कर भी दे तो वहां लब्धि प्रयोग का प्रसंग नहीं आता है इस अपेक्षा संहरण का निषेध समझना चाहिये। किन्तु किसी पुलाक लब्धि सम्पन्न अणगार को भरत क्षेत्र के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में कोई देव संहरण करके रख दे तो वहां आवश्यक होने पर वह अणगार पुलाक लब्धि का प्रयोग कर सकता है। निषेध करने का आशय लब्धि प्रयोग के अयोग्य अन्य क्षेत्र एवं आरे हैं। उन्ही की अपेक्षा समझना चाहिए। 8. संहरण की अपेक्षा ''सर्वत्र'' कहने का आशय है 6ही आरे और चारों पलिभाग में पावे। 9. नौ उत्सर्पिणी का मतलब नो उत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी- महाविदेह क्षेत्र और 6 अकर्म भूमि के तीन पलिभाग। 10. छट्ठाण वडिया का अर्थ प्रज्ञापना पद 5 में दिया गया है। पंद्रहवें पर्यव द्वार के चार्ट में 6 ही नियंठों की 6 नियंठों से पर्याय की तुलना अलग अलग बताई गई हैं। ''द्वार'' के कालम में कहा गया पुलाक आदि छहों कोलम में कहे गये पुलाक आदि से - ऐसा समझना। 11. पंद्रहवें द्वार में पर्यव की अल्प बहुत्व कही है। वहां 1/2 का मतलब जघन्य पर्यव / उत्कृष्ट पर्यव है अर्थात् पुलाक का जघन्य सबसे अल्प है और उत्कृष्ट दूसरे नम्बर में अनंतगुणा है। 1/6 का मतलब है कषाय कुशील के जघन्य पर्यव सबसे अल्प हैं एवं पुलाक के जघन्य से तुल्य है और उत्कृष्ट पर्यव का अल्प बहुत्व में छट्ठा नम्बर

है और अनंतगुण तो स्वतः ही समझ लेना। इसी प्रकार 3/4 और 3/5 का मतलब भी समझ लेना। जो 1-1 या 3-3 या 7-7 दो बार अंक दिये जाते हैं उनका मतलब है कि वे आपस में तुल्य है उनका अल्पबहुत्व का नम्बर एक समान है। 12. उदीरणा में- 7 कर्म = आयु नहीं। 6 कर्म = वेदनीय नहीं 5 कर्म = मोहनीय नहीं। 2 कर्म = नाम और गोत्र कर्म 13. परिणाम द्वार में 0/1/ अनेक सौ = इसमें शून्य का मतलब है कि कभी उस नियंठे में एक भी नहीं होता है। एक का मतलब जघन्य 1-2-3, अनेक सौ का मतलब उत्कृष्ट इतने हो सकते हैं। नये का मतलब प्रतिपद्यमान = उस नियंठे में नये प्रवेश करने वाले। नये पुराने का मतलब = पूर्व प्रतिपन्न अर्थात् टोटल कितने होते हैं। नये पुराने में जहां शून्य नहीं वे उतने सदा शाश्वत मिलते हैं।

सातवां उद्देशक-

टिप्पण- 1. तप वहन करने वाले और किये हुए यों दो भेद परिहार विशुद्ध के हैं। संक्लिष्यमान और विशद्ध्यमान

निकास द्वार

चारित्र	सामायिक	छेदो.	परि.	सूक्ष्म.	यथाख्यात
सा.छे.प.	परस्पर तुल्य छठाणवड़िया	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	अनंतगुणहीन	अनंतगुणहीन
सूक्ष्म.	अनंत गुण वृद्धि	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	छठाणवड़िया	अनंतगुणहीन
यथाख्यात	अनंत गुण वृद्धि	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	अनंत गुण वृद्धि	परस्पर तुल्य

अल्प बहुत्व जघन्य उत्कृष्ट चारित्र पर्यव (प्रकाश मात्रा के समय)

सा.छेदो.	1-2 जघन्य	सबसे कम परस्पर तुल्य चारित्र पर्याय	1/4 1/4
परिहार	3 जघन्य	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	2/3
परिहार	4 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	2/3
सा.छेदो.	5-6 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	1/4 1/4
सूक्ष्म	7 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	5/6
सूक्ष्म	8 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	5/6
यथा.	9 जघन्य उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक परस्पर तुल्य	7

परिणाम द्वार

चारित्र	परि.	हीयमान		वर्द्धमान		अवस्थित	
		जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सा.छे.प.	3	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	7 समय
सूक्ष्म संपराय	2	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	–	–
यथाख्यात	2	–	–	अन्तर्मुहूर्त (13वें 14वें में जाते)	अन्तर्मुहूर्त	1 समय (11वां)	देशोन करोड पूर्व (13वां)

उपसंपद्हान द्वार

चारित्र	स्थान	सामा.	छेदो.	परिहार.	सूक्ष्म.	यथा.	असंयम	संयमा सं.	मोक्ष	असंयम में
सामायिक	4	–	1	–	1	–	1	1	–	सीधे या मरकर
छेदोप.	5	1	–	1	1	–	1	1	–	सीधे या मरकर
परिहार.	2	–	1	–	–	–	1	–	–	अनुक्रम से या मरकर
सूक्ष्म.	4	1	1	–	–	1	1	–	–	अनुक्रम से या मरकर
यथा.	3	–	–	–	1	–	1	–	1	अनुक्रम से या मरकर

आकर्ष द्वार–

	एक भव आश्रित		अनेक भव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	1 बार	अनेक सौ बार (200 से 900)	2 बार	अनेक हजार बार (2000 से 7200)
छेदोपस्थापनीय	1 बार	अनेक बीस बार (40 से 120)	2 बार	900 से ऊपर (960) हजार के अंदर
परिहारविशुद्धि	1 बार	3 बार	2 बार	7 बार
सूक्ष्म संपराय	1 बार	4 बार	2 बार	9 बार
यथाख्यात	1 बार	2 बार	2 बार	5 बार

काल (स्थिति) द्वार

एक भव आश्रित			अनेक भव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत
छेदोपस्थापनीय	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	250 वर्ष, (पार्श्व शासन)	50 लाख करोड़ सागरोपम (ऋषभ शासन)
परिहारविशुद्धि	1 समय	29 वर्ष कम क्रोड़ पूर्व	देशोन 200 वर्ष (142 वर्ष)	देशोन दो क्रोड़ पूर्व (58 वर्ष कम)
सूक्ष्म संपराय	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
यथाख्यात	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत

अन्तर द्वार

एक जीव आश्रित			अनेक जीव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	अंतर नहीं	अंतर नहीं शाश्वत
छेदोपस्थापनीय	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	63000 वर्ष (झा.)	देशोन 18 करोड़ क्रोड़ सागर (न्यून)
परिहारविशुद्धि	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	84000 वर्ष	देशोन 18 क्रोड़ क्रोड़ सागर (न्यून)
सूक्ष्म संपराय	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	1 समय	6 मास
यथाख्यात	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	अंतर नहीं	अंतर नहीं शाश्वत

परिमाण द्वार

वर्तमान प्रति पद्यमान			भूतकाल (पूर्व प्रतिपन्न) आसरी	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामा.	1-2-3	प्रत्येक हजार	नियमा प्रत्येक हजार करोड़	प्रत्येक हजार करोड़
छेदो.	1-2-3	प्रत्येक सौ	नियमा प्रत्येक सौ करोड़	प्रत्येक सौ करोड़
परिहार.	1-2-3	प्रत्येक सौ	1-2-3	प्रत्येक हजार
सूक्ष्म.	1-2-3	162	1-2-3	प्रत्येक सौ
यथा.	1-2-3	162 (108 और 54)	नियमा अनेक करोड़	अनेक करोड़ (केवली आसरी)

अल्प बहुत्व द्वार–

चारित्र	अल्प बहुत्व	
सूक्ष्म.	सबसे कम	प्रत्येक सौ होने से
परि.	संख्यात गुणा	प्रत्येक हजार होने से
यथा.	संख्यात गुणा	प्रत्येक करोड़ होने से
छेदो.	संख्यात गुणा	प्रत्येक सौ करोड़ से
सामा.	संख्यात गुणा	प्रत्येक हजार करोड़ होने से

पाँच संयत का 36 द्वारों से संक्षिप्त विवरण–

सं.	द्वार	सामायिक	छेदोपस्थापनीय	परिहार विशुद्ध	सूक्ष्म संपराय	यथाख्यात
1	प्रज्ञापना	2 प्रकार	2 प्रकार	2 प्रकार	2 प्रकार	2–2–2 प्रकार
2	वेद	3/अवेदी	3/अवेदी	2 (स्त्री नहीं)	अवेदी	अवेदी
3	राग	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी
4	कल्प	5	3	3	3	3
5	नियंठा	4	4	1	1	2
6	प्रतिसेवना	3	3	1	1	1
7	ज्ञान	4	4	4	4	5
	श्रुत पढ़े	14 पूर्व	14 पूर्व	देशोन दस पूर्व	14 पूर्व	14 पूर्व
8	तीर्थ	दोनों में	तीर्थ में	तीर्थ में	दोनों में	दोनों में
9	लिंग (द्रव्य भाव)	3/1	3/1	1/1	3/1	3/1
10	शरीर	5	5	3	3	3
11	क्षेत्र जन्म	15 कर्मभूमि	10 कर्मभूमि	10 कर्मभूमि	15 कर्मभूमि	15 कर्मभूमि
	संहरण	सर्वत्र	सर्वत्र	–	सर्वत्र	सर्वत्र
12	काल	3	2	2	3	3
	अवसर्पिणी जन्म	3–4–5 आरा	3–4–5 आरा	3–4	3–4	3–4
	सद्भाव			3–4–5	3–4–5	3–4–5
	उत. जन्म	2–3–4 आरा	2–3–4 आरा	2–3–4 आरा	2–3–4 आरा	2–3–4 आरा

	सद्भाव	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा
	साहरण	सर्वत्र	सर्वत्र	-	सर्वत्र	सर्वत्र
	नो अव. उत्स. जन्म/ संहरण	1/4	x/4	x	1/4	1/4
13	गति	वैमानिक सभी	वैमानिक सभी	8वें देवलोक तक	अणुत्तर वि.	अणुत्तर वि. या मोक्ष
	स्थिति	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 18 सागर	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 33 सागर/सादि अनंत
	पदवी	5	5	4	1	1
14	संयम स्थान	असंख्य	असंख्य	असंख्य	असंख्य	1
	अल्प बहुत्व	4असंख्यगुणा	4 असंख्यगुणा	3 असंख्यगुणा	2 असंख्यगुणा	1 अल्प
15	पर्यव	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत
	सा.चा.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	छेदोपस्था.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	परिहार वि.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	सूक्ष्म सं.	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग
	यथाख्यात.	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	तुल्य
	अल्प बहुत्व	1/4	1/4	2/3	5/6	7 अनंतगुणा
16	योग	3	3	3	3	3/अयोगी
17	उपयोग	2	2	2	1	2
18	कषाय	4-3-2	4-3-2	4	1	अकषायी
19	लेश्या	6	6	3	1	1/अलेशी
20	परिणाम	3	3	3	2	2
	वर्द्धमान	1 समय/	1 समय/	1 समय/	1 समय/	अन्तर्मुहूर्त
	स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	
	हायमान ''	''	''	''	''	-
	अवस्थित ''	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	-	1 स./देशोन करोड़ पूर्व
21	बंध (कर्म बंध)	7-8	7-8	7-8	6	1/अबंध
22	उदय	8	8	8	8	7/4
23	उदीरणा	7-8-6	7-8-6	7-8-6	6/5	5/2/0
24	उपसंपदहान	4	5	2	4	3
25	संज्ञा	5	5	5	नो संज्ञोप युक्त	नो संज्ञोप युक्त

26	आहार	1 (आहारक)	1	1	1	दोनों
27	भव जघ/ उ.	1/8	1/8	1/3	1/3	1/3
28	आकर्ष एक भव	1/अनेक सौ	1/120	1/3	1/4	1/2
	आकर्ष अनेक भव	2/अनेक हजार	2/960	2/7	2/9	2/5
29	काल (स्थिति) एक जीव	1 समय/ देशोन क्रोड़ पूर्व	1 समय/देशोन क्रोड़ पूर्व	1 समय/29 वर्ष कम करोड़ पूर्व	1 समय/अन्तर्मुहूर्त	1 समय/देशोन क्रोड़ पूर्व
	अनेक जीव	शाश्वत्	250 वर्ष/50 लाख करोड़ सागर	142 वर्ष/58 वर्ष कम दो क्रोड़ पूर्व	1 समय/अन्तर्मुहूर्त	शाश्वत्
30	अंतर एक जीव	अ.मु./अर्द्ध पु. परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पु.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.
	अनेक जीव	नहीं	सा. 63000 वर्ष/18 क्रोड़ा क्रोड़ सागर	84 हजार वर्ष साधिक/18 क्रोड़ाक्रोड़ सागर	1 समय/6 मास	शाश्वत्
31	समुद्घात	6 क्रमशः	6	3	–	1
32	क्षेत्र (अवगाहना)	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	सर्वलोक आदि
33	क्षेत्र स्पर्शना	असंख्यांश लो. साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	सर्वलोक आदि
34	भाव	क्षयोपशम	क्षयोपशम	क्षयोपशम	क्षयोपशम	उपशम/क्षायिक
35	परिमाण नये	0/1/अनेक हजार	0/1/अनेक सौ	0/1/अनेक सौ	0/1/162 (108+54)	0/1/162 (108+54)
	परिमाण नये-पुराने	अनेक हजार करोड़	0/1/अनेक सौ क्रोड़	0/1/अनेक हजार	0/1/अनेक सौ	अनेक करोड़
36	अल्प बहुत्व	5 सं.गुणा	4 सं.गुणा	2 सं.गुणा	1 अल्प	3 सं.गुणा

(गिरते हुए चढ़ते हुए) यों दो भेद सूक्ष्म सम्पराय के हैं। यथाख्यात के तीन प्रकार से दो भेद हैं। 1. उपशांह मोह, क्षीण मोह, 2. छद्मस्थ केवली, 3. सयोगी, अयोगी।

2. छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्ध चारित्र में- अस्थितकल्प और कल्पातीत दो नहीं होने से तीन कल्प हैं।

सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात में– स्थित अस्थित और कल्पातीत ये तीन कल्प होते हैं।

3. सामायिक छेदोपस्थापनीय में– मूल गुण और उत्तरगुण प्रतिसेवना ये दो और तीसरा अप्रतिसेवना ये तीनों भेद हैं। शेष तीन चारित्र में अप्रतिसेवी एक विकल्प ही है।

4. सामायिक चारित्र एक भव में– सैंकड़ों बार आ जा सकता है किन्तु छेदोपस्थापनीय में ऐसा नहीं होता है। वह तो उत्कृष्ट 120 बार ही आ सकता है। जिसमें भी परिहार विशुद्ध से अनेक बार आना सामायिक से आना और असंयम में जाकर आना आदि सभी शामिल है। आठ भव की अपेक्षा उत्कृष्ट 960 बार आता है।

5. उनतीस (29) वर्ष की उम्र के पहले परिहार विशुद्ध चारित्र ग्रहण नहीं किया जाता है। तीर्थंकर के जघन्य शासन की अपेक्षा छेदोपस्थापनीय का 250 वर्ष जघन्य काल है और उत्कृष्ट शासन चलने की अपेक्षा आधा क्रोड़ाक्रोड़ सागरोपम है। परिहार विशुद्धि चारित्र के दो पाट परंपरा की अपेक्षा जघन्य 142 वर्ष होता है उत्कृष्ट दो करोड़ पूर्व 58वर्ष कम होता है।

6. एक जीव की अपेक्षा अंतर (जघन्य और उत्कृष्ट) पांचों चारित्र का समान है। अनेक जीव की अपेक्षा दो चारित्र शाश्वत है। सूक्ष्म संपराय में उत्कृष्ट 6 महिना तक कोई नहीं होते। छेदोपस्थापनीय-21000 के तीन आरे (छट्ठा-पहला-दूसरा) तक नहीं होंगे। परिहार विशुद्ध जघन्य 21000 वर्ष के चार आरों का 84000 वर्ष (5,6,1,2 आरा) तक नहीं होते हैं। उत्कृष्ट युगलिया काल के 6 आरों तक नहीं होते जिससे 2-3-4-4-3-2 आरा 18 क्रोडाकोड सागर काल हो जाता है।

7. छेदोपस्थापनीय में पूर्व प्रतिपन्न (नये पुराने) कभी होते हैं कभी नहीं होते हैं। भरत एरावत में ही होते हैं, महाविदेह में नहीं होते हैं। भरत में भी कोई आरों में होते, कोई आरों में नहीं होते हैं। जब होते हैं तो जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट अनेक सौ करोड़ हो सकते हैं। यहां मूल पाठ में लिपि दोष से या किसी कारण से जघन्य उत्कृष्ट अनेक सौ करोड़ होना कहा है जो कि पाठ अशुद्ध है। क्योंकि जब एक भी नहीं होता है उस समय नये एक साथ उत्कृष्ट अनेक सौ ही उत्पन्न हो सकते हैं, तब पहले ही समय में अनेक सौ से अनेक सौ करोड़ कैसे हो सकते? अतः निश्चित ही वह पाठ अशुद्ध है। यह सूत्र प्रमाण से ही स्पष्ट है अतः जघन्य 1-2-3, अनेक सौ आदि मानना ही उपयुक्त है।

8. पुलाक निर्ग्रन्थ स्नातक एवं परिहार विशुद्ध, सूक्ष्म संपराय यथाख्यात चारित्र ये अवसर्पिणी के पांचवें आरे में जन्म लेने वाले को प्राप्त होने का स्पष्ट निषेध किया गया है।

किन्तु उत्सर्पिणी के दूसरे आरे में जन्म लेने वालों के ये पुलाक आदि सभी हो सकते हैं। यही दोनों ''दुखमी'' आरों की विशेषता है।

9. शेष टिप्पण सूचनाएं पूर्व नियंठों के चार्ट के अनुसार समझ लेना।

।। संजया नियंठा प्रकरण समाप्त ।।

सूचना– 1. प्रायश्चित के प्रकार, आलोचना के प्रकार, प्रतिसेवना के प्रकार, आलोचना प्रायश्चित कर्त्ता एवं प्रायश्चित दाता की योग्यता आदि वर्णन निशीथ सूत्र सारांश के परिशिष्ट में देखें।

2. तप के भेद-प्रभेद एवं स्वरूप तथा ध्यान संबंधी विस्तृत विचारणा औपपातिक सूत्र के परिशिष्ट में दी गई है अतः यहां इस में पुनः नहीं दी गई है। जिज्ञासु पाठक वहीं देखें।

उद्देशक 8 से 12 तक-

1. जीव अपने अध्यवसाय और योग की सम्मिश्रण अवस्था से परभव का आयुबन्ध करता है। आयु (आयुष्य कर्म के दलिक) भव (भव निमित्तक अवगाहनादि 6बोल) और स्थिति (आयुष्य कर्म की स्थिति) के क्षय होने पर जीव का परभव के लिये गमन होता है। वह गति शीघ्रगामी होती है। जीव अपनी ऋद्धि कर्म और प्रयोग से ही परभव में जाता है। इसी प्रकार जीव के समान 24 दंडक, भवी, अभवी, समदृष्टि मिथ्यादृष्टि का कथन भी समझ लेना। उत्कृष्ट विग्रह गति एकेन्द्रिय की चार समय, शेष दंडक की तीन समय की होती है। यह गति कूदने वाले पुरुष की गति के समान प्लवक गति रूप होती है अर्थात् एक स्थान से उठा और सीधा तुरन्त दूसरे स्थान पर पहुंचा, यह प्लवक गति है।

छब्बीसवां बंधी शतक

इस शतक में ग्यारह उद्देशक हैं और ग्यारह ही द्वार है जिनके 49 बोल होते हैं। कर्म बंध और अबंध सम्बन्धी चार भंग होते हैं। समुच्चय कर्म (पाप कर्म) और आठ कर्म यों 9 गमक है। समुच्चय जीव और 24 दंडक यों 25 स्थानों की अपेक्षा सम्पूर्ण वर्णन किया गया है।

ग्यारह द्वार एवं 47 बोल-

जीव- 1. लेश्या-8, 2. पक्ष-2, दृष्टि-3, अज्ञान- 4. ज्ञान-6, संज्ञा-5, वेद-5, कषाय-6, योग-5, उपयोग-2, ये कुल = 47 बोल है।

कहां कितने कौन से बोल-

क्रम	द्वार	भेद खुलासा (विवरण)	भेद संख्या
1	जीव द्वार	समुच्चय जीव	1
2	लेश्या द्वार	सलेशी, 6 लेशी, अलेशी	8
3	पक्ष द्वार	कृष्ण पक्षी, शुक्ल पक्षी	2
4	दृष्टि द्वार	तीनों दृष्टि	3
5	अज्ञान द्वार	समुच्चय अज्ञान, तीन अज्ञान	4
6	ज्ञान द्वार	समुच्चय ज्ञान, 5 ज्ञान	6
7	संज्ञा द्वार	चार संज्ञा, नो संज्ञोपयुक्त	5
8	वेद द्वार	सवेदी, तीन वेद, अवेदी	5
9	कषाय द्वार	सकषायी, 4 कषायी, अकषायी	6
10	योग द्वार	सयोगी, 3 योग, अयोगी	5
11	उपयोग द्वार	साकार, अनाकार	2
		11 द्वारों में कुल बोल	47

(1) 24 दंडक में पाये जाने वाले 47 बोल-

जीव	बोल	विवरण
नारकी में	35	4 लेश्या, 2 ज्ञान, नो संज्ञा, 3 वेद, अकषाय, अयोग ये 12 कम हुए
भवनपति, व्यंतर में	37	उपरोक्त में 35 में एक लेश्या और एक वेद बढ़ा
ज्योतिषी, दो देवलोक	34	37 में से 3 लेश्या कम
3 देवलोक से 12 देव.	33	34 में एक वेद कम
नवग्रैवयक	32	33 में मिश्रदृष्टि कम
पाँच अणुत्तर विमान	26	33 में कृष्ण पक्षी, 2 दृष्टि, 4 अज्ञान कम
पृथ्वी पानी वनस्पति	27	जीव, 5 लेश्या, 2 पक्ष, 1 दृष्टि, 3 अज्ञान, 4 संज्ञा, 2 वेद, 5 कषाय, 2 योग, 2 उपयोग, ये कुल 27 बोल
तेउ वायु	26	27 में तेजो लेश्या कम
तीन विकलेन्द्रिय	31	26 में समदृष्टि, 3 ज्ञान, 1 वचन योग ये पाँच बढ़े
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	40	47 में से अलेशी, अवेदी, अकषायी, अयोगी, नो संज्ञा, 2 ज्ञान ये 7 कम
मनुष्य	47	सभी

बंध अबंध के चार भंग-

1.बांधा था, बांधता है, बांधेगा (बांध्या, बांधे, बांधसी)

2. बांधा था, बांधता है, नहीं बांधेगा (बांध्या, बांधे, नहीं बांधसी)

3. बांधा था, नहीं बांधता है, बांधेगा (बांध्या, नहीं बांधे, बांधसी)

4. बांधा था, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा। (बांध्या, नहीं बांधे, नहीं बांधसी)।

कर्मों में बंधी के 4 भंगों का अस्तित्व-

कर्म	पहला भंग	दूसरा भंग	तीसरा भंग	चौथा भंग
पाप कर्म, मोह कर्म में (समुच्चय 8 कर्म)	अभवी आदि की अपेक्षा	क्षपकश्रेणी के 9वें गुणस्थान तक	उपशम श्रेणी	12-13-14 गुणस्थान में
ज्ञानावरणीयादि 5 में	10वें गुणस्थान के द्वि चरम समय तक	चरम समय में	11वें गुणस्थान में	12-13-14वें गुणस्थान में
वेदनीय कर्म	13वें गुणस्थान के द्वि चरम समय तक	13वें गुणस्थान के चरम समय में	-	14वें गुणस्थान में
आयुष्य कर्म	अभवी आदि की अपेक्षा	अगले भव में मोक्ष गामी	अचरम शरीरी 2/3 आयुष्य तक	चरम शरीरी या मनुष्यायु बांधे हुए जीव में

24 दंडक के बोलों में प्रत्येक कर्म के त्रैकालिक भंग

कर्म	जीव	बोल	भंग
मोह कर्म (पाप कर्म)	जीव, मनुष्य	**20 बोल**–जीव, सलेशी, शुक्ल लेशी, शुक्ल पक्षी, सम्यग्दृष्टि, 5 ज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त, अवेदी, सकषायी, लोभ, 4 योग, 2 उपयोग,	4
		3 बोल (अलेशी, केवली, अयोगी) में	1 चौथा
		1 बोल अकषायी में	2 (3, 4)
		23 बोल शेष सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य (जिसमें जितने बोल हो उनमें)	2 (1, 2)
पाँच कर्म	जीव, मनुष्य	18 बोल (20 में से सकषायी, लोभ कम)	4
		3 बोल (अलेशी केवली अयोगी) में	1 (चौथा)
		1 बोल अकषायी में	2 (3, 4)
		25 बोल शेष सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	2 (1, 2)
वेदनीय कर्म	जीव, मनुष्य	12 (जीव, सलेशी, शुक्ल लेशी, शुक्ल पक्षी, समदृष्टि, सनाणी,	
		केवलज्ञानी, नो संज्ञोपयुक्त, अवेदी,	
		अकषायी, 2 उपयोग ये 12 में)	3 (1, 2, 4)
		2 बोल (अलेशी, अयोगी) में	1 (चौथा)
		33 बोल सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	2 (1, 2)
आयुष्य कर्म	जीव	1 कृष्ण पक्षी में	2 (1, 3)
		3 मिथ्यादृष्टि, अवेदी, अकषायी में	2 (3, 4)
		3 अलेशी, केवली, अयोगी में	1 (चौथा)
		2 मनःपर्यव, नो संज्ञोपयुक्त में	3 (1, 3, 4)
		38 शेष सभी में	4
	नरक देव में	2 कृष्ण लेशी कृष्ण पक्षी में	2 (1, 3)
		1 मिश्रदृष्टि में	2 (3, 4)
		शेष बोलों में	4
		यथायोग्य सभी बोलों में	2 (3, 4)
	सर्वार्थसिद्ध में	यथायोग्य बोलों में	3 (2, 3, 4)
	पृथ्वी पानी बन. में	तेजोलेश्या में	1 (3)
		1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		25 शेष सभी में	4
	तेउ, वायु में	यथायोग्य (सभी) में	2 (1, 3)
	विकलेन्द्रिय	4 (समदृष्टि, 3 ज्ञान) में	1 (3)

		27 शेष सभी में	2 (1, 3)
	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		1 मिश्रदृष्टि में	2 (3, 4)
		5 (समदृष्टि, 4 ज्ञान) में	3 (1, 3, 4)
		33 सभी बोलों में	4
	मनुष्य	3 (अलेशी, केवली, अयोगी) में	1 (4)
		3 (मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी) में	2 (3, 4)
		7 (समदृष्टि, 5 ज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त) में	3 (1, 3, 4)
		1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		33 शेष सभी बोलों में	4

जीव	बोल	विवरण
नारकी में	32	35 में (मिश्रदृष्टि, 2 योग ये 3 कम)
भवनपति व्यंतर	34	37 में उपरोक्त कम
ज्योतिषी, दो देवलोक	31	34 में उपरोक्त 3 कम
3 देव. से 12वें देवलोक	30	33 में उपरोक्त 3 कम
नवग्रैवेयक	30	32 में 2 कम
पाँच अनुत्तर देव	24	26 में दो योग कम
पाँच स्थावर	27/26	पूर्ववत्
तीन विकलेन्द्रिय	30	31 में वचन योग कम
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	35	40 में (मिश्रदृष्टि, विभंग, अवधिज्ञान, 2 योग ये 5 कम)
मनुष्य	36	3 (अलेशी, केवली, अयोगी) 3 (मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी) 2 (मन:पर्यव, नोसंज्ञा) 2 योग, 1 विभंग ये 11 कम 47 में से।

7 कर्म	24 दंडक	यथायोग्य सभी बोलों में	2 (1, 2)
आयुकर्म	23 दंडक	यथायोग्य सभी बोलों में	1 (3)
	मनुष्य	1 कृष्णपक्षी में	1 (3)
		शेष सभी में	2 (3, 4)

पापकर्म और	मनुष्य	20 बोल (विवरण पहले दिया हुआ है)	1, 2, 3
मोहकर्म		1 अकषायी	1 (3)
		23 शेष	1, 2
	23 दंडक में	यथा योग्य बोल में	1, 2
5 कर्म	मनुष्य	18 बोल	1, 2, 3
		1 अकषायी	1 (3)
		25 शेष बोल	1, 2
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	1, 2
वेदनीय कर्म	24 दंडक	यथायोग्य बोलों में	1, 2
आयुष्य कर्म	नैरयिक	34 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	भवन. व्यंतर	36 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	ज्योतिषी 2 देवलोक	33 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	नवगैवेयक तक	32 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि	1 (3)
	4 अनुत्तर विमान	26 बोलों में	1, 3
	पृथ्वी पानी वन.	26 बोलों में	1, 3
		1 तेजोलेश्या में	1 (3)
	तेउवायु में	26 बोलों में	1, 3
	3 विकलेन्द्रिय	27 बोलों में	1, 3
		4 बोल (समदृष्टि, 3 ज्ञान) में	1 (3)
	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	39 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	मनुष्य	41 बोलों में	1, 3
		3 (अवेदी, अकषायी, मिश्रदृष्टि) बोल में	1 (3)

परम्परोत्पन्नक आदि के चार उद्देशक प्रथम उद्देशक के समान है। दसवां चरम उद्देशक का वर्णन भी इसी प्रकार है। **अचरम उद्देशक में-** अलेशी केवली अयोगी ये तीन बोल नहीं है, 44 बोल ही हैं। बंधी के भंग तीन ही है, चौथा भंग नहीं है। क्योंकि मोक्ष नहीं जाने वाले ही होते हैं। इसीलिये सर्वार्थ सिद्ध की पृच्छा भी नहीं है। उद्देशक 2 से 11 तक में समुच्चय जीव की पृच्छा नहीं है।

ग्यारह उद्देशक के नाम- 1. समुच्चय- औधिक, 2. अनंतर उत्पन्नक = प्रथम समयोत्पन्न, 3. परंपर उत्पन्नक= बहुत समय वर्त्ती, 4. अनंतरावगाढ़ = प्रथम समय स्थान प्राप्त, 5. परंपरावगाढ, 6. अनंतराहारक = पहले समय के आहारक,

7. परंपराहारक, 8. अनंतर पर्याप्तक = प्रथम समय के पर्याप्तक, 9. परंपर पर्याप्तक, 10. चरम- उसी भव में मोक्ष जाने वाले अथवा उस अवस्था भव में पुनः न आने वाले, 11. अचरम- अभवी, अचरम शरीरी एवं उस भव में पुनः आने वाले।

विशेष- अंनतरोत्पन्नक आदि चारों जन्म के प्रथम समय वर्त्ती आदि होते हैं अतः आयु कर्म का बंध नहीं करते हैं और 7 कर्म का बंध अवश्य करते हैं। मनुष्य में कृष्णपक्षी के अतिरिक्त सभी जीव उसी भव में मोक्ष जा सकते हैं क्योंकि उनमें आयुबंध में चौथा भंग कहा गया है। अनंतरोत्पन्नक मनुष्य में वेद तीनों ही कहे गये हैं अतः जन्म समय के तीनों वेद वाले उस पूरे भव में आयु नहीं बांधे और मोक्ष जावे तभी चौथा भंग होता है। अतः तीनों वेदी उसी भव में मोक्ष जा सकते हैं। इससे ही जन्म नपुंसक का मोक्ष जाना सिद्ध होता है।

सतावीसवां शतक

छब्बीसवें शतक में ''कर्म बंध'' सम्बन्धी जो वर्णन 11 उद्देशकों में किया गया है वही वर्णन यहां पर भी 'कर्म करने' की अपेक्षा समझना चाहिये। यहां बंध के अतिरिक्त संक्रमण आदि करण समझने चाहिये। ग्यारह उद्देशक भी उसी तरह समझ लेना।

अट्ठावीसवां शतक

1. सभी जीवों में पाप कर्म का समार्जन, संकलन, भूतकाल में तिर्यंच गति में किया। 2. अथवा तिर्यंच मनुष्य में , 3. तिर्यंच नरक में, 4. तिर्यंच देव में किया था। अथवा 5. तिर्यंच नरक मनुष्य, 6. तिर्यंच नरक देव में, 7. तिर्यंच मनुष्य देव में किया था। अथवा 8. तिर्यंच नरक देव मनुष्य में किया था। ये अन्यान्य जीवों में कुल 8भंग ही हो सकते हैं।

उपरोक्त 26वें शतक में कहे 11 द्वार के 47 बोलों में से जहां जो बोल पाये जाय उनमें समार्जन की अपेक्षा भी आठ भंग कह देना। फिर ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों के समार्जन की अपेक्षा भी आठ भंग कह देना। फिर अनंतरोत्पन्नक आदि ग्यारह उद्देशक में भी जो बोल हों उनमें आठ-आठ भंग कहना।

उनतीसवां शतक

जीव पाप कर्म वेदन का प्रारम्भ और वेदन की समाप्ति साथ में भी करते हैं और अलग अलग भी। इसके चार भंग बनते हैं।

यहां कर्म वेदन की पृच्छा भव सापेक्ष है अतः जो 1. साथ में जन्में साथ में मरे वे उस भव के कर्म वेदन साथ में प्रारम्भ करते हैं और साथ में ही समाप्त करते हैं। 2. जो साथ में जन्में और अलग-अलग मरे तो वे प्रारम्भ साथ में करते किन्तु समाप्ति अलग अलग समय में करते। 3. जो भिन्न समय में जन्मे और साथ में मरे तो वे उस भव में कर्म वेदन प्रारंभ भिन्न भिन्न समय में करे और समाप्ति साथ में करे। 4. जो भिन्न समयों में जन्में और भिन्न समयों में मरे वे उस भव सम्बन्धी सारे कर्म वेदन अलग प्रारम्भ करे और अलग अलग ही समाप्त करे।

इसी प्रकार 11 द्वार 47 बोल 8कर्म 24 दंडक सम्बन्धी उक्त वर्णन में ये चारों भंग कहना। फिर अनंतरोत्पन्नक आदि चार उद्देशों में दो भंग ही कहना परांपरोत्पन्नक आदि शेष सभी (6) उद्देशों में चार भंग कहना। अनंतरोत्पन्नक आदि में सभी जीव साथ में ही जन्मते हैं भिन्न समय में जन्मने का विकल्प वहां नहीं होता है, अतः चार भंग नहीं बनकर दो भंग ही बनते हैं।

तीसवां समवसरण शतक

समवसरण से यहां ''वाद'' सिद्धांत और वादी कहे गये हैं। ये वादी चार प्रकार के होते हैं।

1. क्रिया वादी, 2 अक्रिया वादी, 3. अज्ञान वादी, 4. विनय वादी ये चारों ही यहां समवसरण संज्ञा से वर्णित है।

कहीं पर ये चार वादियों के भेद एकांतवादी रूप में कह कर सभी का मिथ्यादृष्टि गिना गया है वहां इन चारों के 363 भेद (180+84+67+32) माने गये हैं। किन्तु प्रस्तुत प्रकरण में क्रियावादी में सम्यग्दृष्टि एवं ज्ञान क्रिया के सुमेल वाले, स्याद्वादमय सम्यग् सिद्धांत का ग्रहण किया गया है शेष तीनों एकांतवादी मिथ्यादृष्टि रूप में स्वीकार किये गये हैं। उनमें- 1. अक्रियावादी-तो ज्ञान ही ज्ञान से कल्याण होना मानता है क्रिया का निषेध करता है। 2. अज्ञान वादी- ज्ञान का खंडन करता है अज्ञान और शून्यता से मुक्ति मानता है। 3. विनय वादी- केवल विनय से ही मुक्ति मानता है। ज्ञान क्रिया दोनों का निषेध करता है। जो भी दिखे, जो भी मिले, उसे प्रणाम करते जाओ, केवल नम्रता विनय से ही कल्याण हो जायेगा, ज्ञान क्रिया की मेहनत करना वह व्यर्थ मानता है।

पूर्व में कहे 11 द्वारों के 47 बोलों में इन चारों समवसरणों में से कितने समवसरण पाये जाते हैं ? किस बोल में किस समवसरण में, किस दंडक में कितनी गति का आयु बंध होता है? कौन-सा बोल भवी या अभवी इत्यादि विषयों का वर्णन इस प्रकरण में किया गया है।

कितनी गति का आयु बंध होता है इस प्रकार-

46 बोल	समवसरण	आयु बंध	विवरण
कृष्णपक्षी, मिथ्यादृष्टि, 4 अज्ञान	3 (क्रिया. छोड़)	4 गतिका	भव्य अभव्य दोनों है
मिश्रदृष्टि	अज्ञान, विनयवादी	दोनों वादी में अबंध	भव्य है
सम्यग्दृष्टि, 4 ज्ञान	1 क्रियावादी	2 देव और मनुष्य का	भव्य है
तीन अशुभ लेश्या (कृष्ण, नील, कापोत)	4	क्रियावादी–मनुष्य/अबंध 3 समवसरण–4 गतिका	क्रियावादी भव्य भव्य अभव्य दोनों
तीन शुभ लेश्या (तेजो पद्म शुक्ल)	4	क्रियावादी–देव मनुष्य 3 समवसरण–3 गति	भव्य भव्य अभव्य दोनों
मनः पर्यवज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त	1	वैमानिक देव	भव्य
अवेदी, अकषायी, अयोगी, अलेशी, केवली	1	अबंध	भव्य
शेष 22 बोल	4	क्रियावादी–2 गति 3 समवसरण–4 गति	भव्य भव्य अभव्य दोनों

24 दंडक में समवसरण-आयुबंध आदि-

दंडक	47 बोल	समवसरण	आयुबंध
नरक	कृष्णपक्षी आदि 6 बोल	3	2 (मनुष्य, तिर्यंच) का
35 बोल	मिश्रदृष्टि सम्यग्दृष्टि 4 ज्ञान शेष 23 बोल	2 1 4	अबंध मनुष्य का क्रिया. मनुष्य, 3 समवसरण दोनों का
देव-नवग्रैवेयक	कृष्णपक्षी आदि 6 बोल	3	मनुष्य, तिर्यंच का
तक	मिश्रदृष्टि	2	अबंध
35 बोल	सम्यग्दृष्टि 4 ज्ञान	1	मनुष्य का
	शेष 23 बोल	4	क्रियावादी-मनुष्य का, तीन समवसरण- दोनों का, 9 देवलोक से आगे 1 मनुष्यायु का
अणुत्तर देव 26	26 बोल	1	मनुष्यायु
तीन स्थावर 27	तेजोलेश्या	अक्रिया., अज्ञान.	अबंध
	शेष 26 बोल	अक्रिया., अज्ञान.	मनुष्य, तिर्यंचायु
तेउ, वायु 26 विकलेन्द्रिय 31	26 बोल सम्यग्दृष्टि, 3 ज्ञान शेष 27 बोल	अक्रिया., अज्ञान. 1 अक्रिया. अज्ञान.	1 तिर्यंचायु अबंध दोनों का
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	कृष्णपक्षी आदि 6	3	4 गति का
40	मिश्रदृष्टि	अज्ञा. विनय.	अबंध
	सम्यग्दृष्टि, 4 ज्ञान	1	वैमानिक देवों का
	तीन लेश्या कृष्णादि (अशुभ) तीन शुभ लेश्या	4 4	क्रिया. अबंध, 3 समवसरण 4 गति का क्रिया. वैमानिक, 3 समवसरण-3 गति का
	शेष 22 बोल	4	क्रियावादी-वैमानिक का 3 समवसरण-4
			गति का
मनुष्य 47	18 बोल		उपरोक्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 5 कोलम के
			समान वर्णन
मनुष्य	मन:पर्यव, नो संज्ञा.	1	वैमानिक का
	अवेदी आदि 5	1	अबंध
	शेष 22 बोल	4	क्रिया. वैमानिक, 3 समवसरण 4 गति का

नोट- 1. क्रियावादी समवसरण और मिश्र दृष्टि एकांत भवी होते हैं शेष सभी बोल भवी अभवी दोनों होते हैं ऐसा सर्वत्र पूरे शतक में समझ लेना। 2. तीन समवरण जहां हैं वहां एक क्रियावादी समवसरण नहीं है।

अनंतरोत्पन्नक आदि चार उद्देशक- 26 वें शतक के समान 47 बोल में से पाये जाने वाले बोल कहना उन सभी बोलों में समवसरण उपरोक्त चार्ट के अनुसार जानना अर्थात् चार्ट में कहे बोलों में मन वचन योग और मिश्र दृष्टि जहां भी है निकाल देना और शेष सभी बोल चार्ट अनुसार जानना। आयु का सभी बोलों में 'अबंध' कहना। क्योंकि ये अनंतरोत्पन्नक आदि आयु नहीं बांधते हैं। परंपरोत्पन्नक आदि शेष 6 उद्देशक भी प्रथम उद्देशक के समान है अर्थात् चार्ट के समान 24 दंडक में कहना।

बोल छोड़ना आदि 26 वें शतक के समान ध्यान रखना अर्थात् पिछले दसों उद्देशक में समुच्चय जीव नहीं कह कर 24 दंडक ही कहना, अचरम उद्देशक में अलेशी केवली अयोगी यों तीन बोल नहीं कहना और सर्वार्थसिद्ध की पृच्छा नहीं करना इत्यादि।

इकतीसवां-बत्तीसवां ''क्षुल्लक कृतयुग्म'' शतक

1. जुम्मा- युग्म का स्वरूप श. 18, उद्दे. 4 में एवं श. 25 उद्देशक 3 में बताया गया है। वहां औघिक युग्म का ही कथन है। यहां उन्हें ही क्षुल्लक युग्म कहा गया है आगे शतक 35 से 40 तक में महायुग्म कहे गये हैं। श. 18, उद्देशक 4 के वर्णन के समान 4-8-12-16संख्यात असंख्यात अनंत की संख्या कृतयुग्म है, 3, 7, 11, 15 यावत् अनंत की संख्या तेओग-त्र्योजयुग्म है। 2-6-10-14 यावत् अनंत की संख्या द्वापर (दावर) युग्म है। 1-5-9-13 यावत् अनंत की संख्या कल्योज युग्म है।

2. नारकी में इन चारों क्षुल्लक युग्म से जीव उत्पन्न होवे तो जघन्य उक्त संख्या अनुसार और उत्कृष्ट असंख्य उत्पन्न होते हैं। कहां से आकर उत्पन्न होने के उत्तर में प्रज्ञापना पद 6 के अनुसार आगति स्थान कहना चाहिये। उत्पन्न होने वाले जीव शतक 25 उद्देशक 8 के अनुसार प्लवक के समान आकर उत्पन्न होते हैं एवं अध्यवसाय योग निमित्त, स्वकर्म स्वऋद्धि आदि भी समझना।

3. इस प्रकार यह समुच्चय उद्देशक होता है फिर नारकी में पाई जाने वाली तीन लेश्या में उत्पत्ति की चारों युग्म संख्या आगति स्थान के आधार से कहना। जिस नरक में जो लेश्या होती है वही कहना। ये चार उद्देशक समुच्चय जीव से हुए। इसी तरह 2 पक्ष 2 भवी 2 दृष्टि इन 6से चार-चार उद्देशक होते हैं कुल 28 उद्देशक हुए।

4. इकतीसवें शतक में उत्पन्न होने की अपेक्षा जो वर्णन है वही सम्पूर्ण वर्णन 32 वें शतक में उवट्टण- मरने की अपेक्षा है। प्रज्ञापना सूत्र के छट्ठे पद में कही गई गति (गत) के अनुसार उवट्टण के स्थानों को कहना।

विशेष- सातवीं नारकी की आगति और गति में दृष्टि एक ही (मिथ्यादृष्टि) कहना क्योंकि वहां सम्यग्दृष्टि उपजते मरते नहीं है।

5. इन दोनों शतकों में नरक की अपेक्षा ही कथन किया गया है शेष दंडक के लिये भलावण पाठ रहा होगा जो लिपि प्रमाद से छूट गया सम्भव लगता है अतः नरक के समान शेष 23 दंडक का कथन भी समझ लेना।

6. जिसकी उद्देशक संख्या इस प्रकार होगी- भवनपति व्यंतर में 11×5×7 = 385×2 =770, (ज्योतिषी में 2×7 = 14×2 = 28, वैमानिक में, 4×7 = 28×2 = 56, तीन स्थावर, 3×5×7 = 105, 3×4×7 = 84 = 189, तेउ वायु 2×4×7 = 56×2 = 112, तीन विकलेन्द्रिय में- 3×4×7 = 84×2 = 168, तिर्यंच में 7×7 = 49×2 = 98, मनुष्य में = 98 कुल - 56+770+28+ 56+189+112+168+98+98 = 1575 उद्देशक हुए।

7. पांच स्थावर में दृष्टि एक होने से उसके 43 कम होंगे तीन विकलेन्द्रिय में गत में दृष्टि एक है जिससे 12 कम हुए ये कुल 55 कम होने से 1575 -55 = 1520 उद्देशक दोनों शतक में मिलकर 24 दंडक के होते हैं।

तेतीसवां एकेन्द्रिय शतक

1. इस शतक के 12 अवांतर शतक है। यथा- समुच्चय एकेन्द्रिय और तीन लेश्या (यहां तेजोलश्या नगण्य करके नहीं गिनी है)

ये चार शतक हुए फिर 4 भवी के 4 अभवी के यों कुल 12 शतक हुए।

2. छब्बीसवें शतक के अनुसार इसमें भी 11-11 उद्देशक होते हैं किन्तु अभवी के 4 शतकों में चरम अचरम उद्देशक नहीं होने से आठ उद्देशक कम होते हैं अर्थात् 12×11 = 132 - 8 = 124 उद्देशक इस शतक में होते हैं।

3. एकेन्द्रिय के कुल भेद 20 हैं - पांच स्थावर के सूक्ष्म बादर पर्याप्त और अपर्याप्त ये 4-4 भेद करने से 5×4 = 20 हुए। इन बीस भेदों में आठों कर्म की सत्ता है, 7 या 8 कर्म का बंध होता है।

4. आठ कर्म 4 इन्द्रिय का आवरण और 2 वेद का आवरण यों 14 बोल (कर्म) का वेदन बताया गया है।

5. इस प्रकार एकेन्द्रिय के 20 भेद में 8 कर्म की सत्ता, 7-8 कर्म का बंध, 14 बोल (कर्म) के वेदन का वर्णन हुआ। यह प्रथम औघिक उद्देशक हुआ शेष परंपरोत्पन्नक आदि के 6 उद्देशक कहना। अनंतरोत्पन्नक आदि के चार उद्देशों में एकेन्द्रिय के भेद 10 और कर्म बंध 7 का कहना। शेष वर्णन औघिक उद्देशक के समान है।

6-12 शतकों के चार चार उद्देशों में (12×4 = 48 में) 10-10 जीव भेद हैं और शेष 76 उद्देशों में 20-20 जीव के भेद हैं अतः जीव भेद की अपेक्ष 124 उद्देशों में 2000 आलापक होते हैं यथा- 48×10+76×20 = 480+1520 = 2000

चौतीसवां श्रेणी शतक

1. इस शतक में भी उक्त क्रम से 12 अवांतर शतक और 124 उद्देशक है।

पृथ्वी आदि पांच स्थावर के 20 भेद के जीव रत्न प्रभा पृथ्वी के एक पूर्वी चरमांत से दूसरे पश्चिमी चरमांत में 20 भेदों में उत्पन्न होते हैं ये 20×20 = 400 आलापक होते हैं।

2. पूर्वी चरमांत से पश्चिम, उत्तर, पूर्व और दक्षिण यों 4 विकल्प होते हैं। इन चार दिशाओं से 16 विकल्प होते हैं।

3. रत्न प्रभा पृथ्वी के समान फिर सातों पृथ्वी के चरमांतों से 20 जीवों के 20 जीवों में जाने के विकल्प होते हैं।

4. बीस भेदों में बादर तेउकाय के पर्याप्त अपर्याप्त ये दो भेद ढ़ाई द्वीप में ही होते हैं अतः इन जीवों सम्बन्धी जाने या आने के सभी आलापक ढ़ाई द्वीप से कहना अर्थात् पूर्व पश्चिम के चरमांत से 18 भेद ही कहना।

5. जीवों का गमनागमन श्रेणियों (आकाश मार्ग) से होता है। वे श्रेणियां सात प्रकार की है- ऋजु आयता- बिना मोड़ की सीधी श्रेणी, 12. एक मोड़ वाली, 3. दो मोड़ वाली, 4. एक तरफ स्थावर नाल वाली, 5. दोनों तरफ स्थावर नाल वाली, 6. चक्रवाल, 7. अर्द्धचक्रवाल। अंतिम दोनों गति केवल पुद्गल की ही होती है चक्रवाल गति जीव की नहीं होती है।

1. प्रथम ऋजु श्रेणी से जीव और पुद्गल एक समय में गति करते हैं। 2. एक मोड़ वाली में विग्रह गति से जाने वाले जीव को दो समय लगते हैं। 3. दो मोड़ वाली में तीन समय लगते हैं। 4. एक तरफ स्थावर नाल में जाने पर 1-2-3 समय लगता है। 5. दो तरफ स्थावर नाल में जाने वाले को 3 या 4 समय लगता है अर्थात् स्थावर नाल में सम दिशा में 3 समय और विषम दिशा में 4 समय लगते हैं।

6. पूर्व से पश्चिम में 1-2-3 समय। पूर्व से पूर्व में 1-2-3 समय और पूर्व से उत्तर या दक्षिण में 2-3 समय विग्रह गति में लगते हैं। मनुष्य लोक से रत्न प्रभा पृथ्वी में जीव जाने आने में 1-2-3 समय लगते हैं।

7. पहली नरक पृथ्वी पिंड के समान दूसरी पृथ्वी का वर्णन है किन्तु यहां मनुष्य क्षेत्र से सम्बन्धित विग्रह गति में 2-3-4 समय लगते हैं। ऊपर नीचे तिर्छे विदिश विषम श्रेणी में 2-3-4 समय लगते हैं और दिशा सम श्रेणी में 1-2-3 समय लगता है।

8. त्रस नाल से त्रस नाल में 1-2-3 समय लगता है। स्थावर नाल से त्रस नाल में 1-2-3 समय लगता है। स्थावर नाल से स्थावर नाल से स्थावर नाल में 1-2-3 समय लगता है किन्तु विषम श्रेणी में या विदिशा में या विदिशा विषम ऊपर नीचे तिर्च्छे में 2-3 समय या 2-3-4 समय अथवा 3-4 समय लगता है।

9. नीचे स्थावर नाल से त्रस नाल में होकर दूसरी तरफ ऊपर स्थावर नाल में जाने में सम श्रेणी से सम श्रेणी हो तो तीन समय और एक तरफ विषम विदिशा हो तो कम से कम चार समय लगता है। स्थावर नाल में एक तरफ ही विदिशा का मोड़ लिया जाता है। दोनों तरफ मोड़ लेने की आवश्यकता नहीं होती है इसलिये लोक में स्थावर त्रस नाल में कहीं से भी जीव को कहीं भी जाना हो तो 4 समय में अपने जन्म स्थान पर जीव पहुंच सकता हैं। पांच श्रेणियों की गति में लोक में जीव और पुद्गल को उत्कृष्ट 4 समय ही पहुंचने में लगते हैं इससे ज्यादा मोड़ जीव अजीव के गति में नहीं बनते हैं। तभी सारे लोक में व्याप्त होने वाले भाषा आदि के पुद्गल, अचित्त महास्कंध और केवली समुद्घात में आत्म प्रदेशों को 4 समय ही लगते हैं।

10. पांच समय की विग्रह गति की कल्पना भी यदि कोई जीव के लिये करे तो वह सिद्धान्त सापेक्ष नहीं है। मन कल्पित एवं भ्रम पूर्ण है क्योंकि तीन समय में तो सम्पूर्ण आत्म प्रदेश भी सारे लोक में व्याप्त हो जाते हैं। केवल नगण्य स्थान- खुणे, लोकांत निष्कुंट अवशेष रहते हैं जो चौथे समय में पूरित किये जाते हैं। अतः 5 समय की कल्पना तो असत्कल्पना ही है।

11. चक्रवाल या अर्द्ध चक्रवाल गति से भी पुद्गल गन्तव्य स्थान में जा सकते हैं।

सात पृथ्वी के समान लोक के चरमांत से चरमांत भी कहना, इसमें 1-2-3-4 या 2-3-4 या 3-4 समय की विग्रह गति होती है।

12. इन 20 जीवों के स्व स्थान प्रज्ञापना पद 2 के अनुसार जानना।

13. इन जीवों के आठ कर्मों की सत्ता, 7 या 8 कर्म का बंध, 14 बोल (कर्म) का उदय, तेतीसवें शतक के समान है। इनकी आगति-गति प्रज्ञापना पद 6 के समान है। इनमें समुद्घात 3 एवं बादर वायु के पर्याप्त में 4 है।

14. उम्र एवं उत्पन्न की चौभंगी– 1. समान उम्र वाले और साथ में उत्पन्न, 2. समान उम्र वाले विषम उत्पन्न, 3. विषम उम्र वाले साथ में उत्पन्न, 4. विषम उम्र और विषम उत्पन्न। यह चौभंगी है।

प्रथम भंग वाले तुल्य स्थिति वाले होते हैं और तुल्य एवं विशेषाधिक कर्म बंध करते हैं। दूसरे भंग वाले तुल्य स्थिति वाले होते हैं किन्तु कर्म बंध विमात्रा में विशेषाधिक करते हैं। तीसरे भंग वाले असमान उम्र वाले होते हैं किन्तु साथ में उत्पन्न हुए होने से तुल्य एवं विशेषाधिक कर्म बंध करते हैं। चौथे भंग वाले असमान उम्र वाले होते हैं और विमात्रा से विशेषाधिक कर्म बंध करते हैं।

15. अनन्तरोत्पन्न आदि चार उद्देशक का वर्णन भी उक्त विधि से जानना किन्तु उसमें भेद 10 ही कहना 20 नहीं 7 कर्म का बंध ही कहना, आठ नहीं कहना। समुद्घात तीन ही होती है चार नहीं। चौभंगी के भी दो भंग ही होते हैं पहला दूसरा, क्योंकि अनन्तरोत्पन्न कहे जाने वाले सभी साथ में ही उत्पन्न होते हैं। एक दिशा से दूसरी दिशा में उत्पन्न होने के विकल्पों सम्बन्धी वर्णन यहां नहीं कहना, क्योंकि ये मरते नहीं है। परम्परोत्पन्नक बनने के बाद ही मरते हैं।

16. परंपरोत्पन्नक आदि शेष 6 उद्देशक औघिक के समान सम्पूर्ण वर्णन जानना।

17. लेश्या भवी अभवी के विकल्प से कुल 12 अवांतर शतक और उनके 11-11 एवं 9-9 उद्देशे 33 वें शतक के समान होते हैं। विषय वर्णन प्रस्तुत प्रकरण के उद्देशकों के अनुसार जानना।

पेंतीसवां एकेन्द्रिय महायुग्म शतक

युग्म 4 होते हैं उन्हें शतक 31 में क्षुल्लक युग्म कहा गया है। यहां महायुग्मों का वर्णन है ये 16 होते हैं। एक-एक युग्म को चारों युग्मों का संयोगी भंग करने से 4×4 = 16 होते हैं। उन 16 भंग रूप युग्मों के नाम इस प्रकार है - (16 जुड़ेंगे)

1. कृतयुग्म कृतयुग्म = 16-32-48-64 आदि 2. कृतयुग्म त्र्योज = 19-35 आदि 3-कृतयुग्म द्वापर = 18-34 आदि 4-कृतयुग्म कल्योज = 17-33 आदि। 5- त्र्योज कृतयुग्म =12-28-44-60 आदि। 6. त्र्योज त्र्योज = 15-31-47-63 आदि, 7. त्र्योज द्वापर = 14, 30-46-62 आदि। 8. त्र्योज कल्योज = 13-29-45-61 आदि।

9. द्वापर कृतयुग्म = 8-24-40-56आदि। 10. द्वापर त्र्योज = 11-27-43-59 आदि, 11- द्वापर द्वापर = 10-26-42-58आदि। 12. द्वापर कल्योज = 9-25-41-57 आदि।

13. कल्योज कृतयुग्म = 4-20-36-42 आदि। 14. कल्योज त्र्योज = 7-23-39-55 आदि, 15. कल्योज-द्वापर = 6-22-38-54 आदि। 16. कल्योज कल्योज = 5-21-37-53 आदि।

1. एकेन्द्रिय जीव इन 16ही महाजुम्म रूप भंगों से आकार उत्पन्न होते हैं।

जिनका 33 द्वारों से वर्णन किया गया है– 1. उपपात (आगति), 2. परिमाण, 3. अपहार संख्या, 4. अवगाहना, 5. आठ कर्म बंध, 6. वेदना, 7. उदय, 8.उदीरणा, 9. लेश्या, 10. दृष्टि, 11. ज्ञान, 12. योग, 13. उपयोग, 14. वर्ण, 15. उश्वास, 16. आहारक, 17. विरति, 18. क्रिया, 19. बंधक, 20. संज्ञा, 21. कषाय, 22. वेद, 23. वेद बंध, 24. सन्नी, 25. इन्द्रिय, 26. अनुबंध, = युग्मों की स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनंतकाल 27. कायसंवेध, 28. आहार = 288प्रकार का, 29. स्थिति, 30. समुद्घात, 31. मरण (दो प्रकार) 32. च्यवन = गति 33. उपपात = सर्वजीव उत्पन्न।

उदीरणा- 8-7-6कर्म की। आयु और वेदनीय की भजना। तीनों वेद का बंध करते हैं। वर्णादि- शरीर की अपेक्षा 20 एवं 16, अविरत है, सक्रिया है, शेष सभी द्वारों का वर्णन उत्पल उद्देशक आदि से जाने। समुच्चय एकेन्द्रिय का वर्णन होने से कायसंवेध नहीं कहा जा सकता।

16. महायुग्मों पर ये 33-33 द्वार समझ लेना।

(1)	कृतयुग्म-कृतयुग्म	16,32,48,64	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(2)	कृतयुग्म-तेओगा	19,35,51,67	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(3)	कृतयुग्म द्वापर	18,34,50,66	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(4)	कृतयुग्म कलियोगा	17,33,49,65	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(5)	तेओगा कृतयुग्म	12,28,44,60	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(6)	तेओगा तेओगा	15,31,47,63	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(7)	तेओगा दावरजुम्मा	14,30,46,62	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(8)	तेओगा कलियोगा	13,29,45,61	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(9)	दावरजुम्मा कृतयुग्म	8,24,40,56	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(10)	द्वापरयुग्म तेओगा	11,27,43,59	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(11)	द्वापरयुग्म द्वापर	10,26,42,58	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(12)	द्वापरयुग्म कलियोगा	9,25,41,57	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(13)	कलियोगा कड़जुम्मा	4,20,36,52	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(14)	कलियोगा तेओगा	7,23,39,55	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(15)	कलियोगा दावरजुम्मा	6,22,38,54	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(16)	कलियोगा कलियोगा	5,21,37,53	यावत् संख्याता असंख्याता अनंता

यह औघिक उद्देशक पूर्ण हुआ। शेष दस उद्देशक नये तरीके के इस प्रकार है- 2. पढम = प्रथम समयोत्पन्न, 3. अपढ़म = शेष समय वाले, 4. चरम समय वाले, 5. अचरम समय वाले, 6. पढ़म पढ़म 7. पढ़म अपढ़म, 8. पढ़म चरम, 9. पढ़म अचरम, 10. चरम चरम, 11. चरम अचरम। इन द्वि संयोगी नाम वाले उद्देशों में पहला शब्द विवक्षित युग्म बनने के समय का सूचक है दूसरा शब्द उत्पत्ति के समय का सूचक है।

(1)	उपपात द्वार	तिर्यंच 46, मनुष्य 3, देवता 25 (10 भवन. 8 व्यंतर, 5 ज्योतिषी 2 देवलोक) 74 ठिकानों से आकर उपजते हैं।
(2)	परिमाण द्वार	कृतयुग्म कृतयुग्म 16, 32, 48, 64 यावत् संख्य, असंख्य, अनन्ता उपजे।
(3)	अपहारद्वार	समय-समय अनंता अपहरे, तो अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में भी निर्लेप नहीं।
(4)	अवगाहना	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन झाझेरी।
(5)	बंधक द्वार	7 कर्मों के बंधक, आयुष्य के बंधक भी, अबंधक भी।
(6)	वेदक द्वार	8 कर्मों के वेदक, साता वेदनीय के भी, असाता के भी।
(7)	उदय द्वार	आठों कर्मों के उदय वाले हैं।
(8)	उदीरणा द्वार	6 कर्मों की, आयुष्य और वेदनीय के उदीरक भी, अनुदीरक भी।
(9)	लेश्या द्वार	कृष्ण, नील, कपोत, तेजो-4 लेश्या।
(10)	दृष्टि द्वार	मिथ्यादृष्टि
(11)	ज्ञान द्वार	2 अज्ञान-मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान।
(12)	योग द्वार	1 काय योग
(13)	उपयोग द्वार	2 उपयोग
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा नहीं, शरीर अपेक्षा दो शरीर में वर्णादी 20, (औ.ते.), कार्मण में 16
(15)	उच्छवास द्वार	उच्छवासक भी, निःश्वासक भी, नो उच्छवासक निःश्वासक भी।

(16)	आहारक द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी।
(17)	विरति द्वार	अविरति।
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय
(19)	बंधक द्वार	आठ कर्मों के और सात कर्मों के बंधक।
(20)	संज्ञा द्वार	चारों संज्ञाए
(21)	कषाय द्वार	चारों कषाय
(22)	वेद द्वार	एक नपुंसक वेद
(23)	वेद बंध द्वार	तीनों वेद बांधते हैं।
(24) (25)	संज्ञी द्वार इन्द्रिय द्वार	असंज्ञी सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं
(26)	काल (अनुबंध)	जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अनन्तकाल (वनस्पति काल)
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता। अपनी काया छोड़कर अन्य में जाकर वापस आना कायसंवेध होता है, उत्पल के जीवों का उत्पाद विवक्षित है, परन्तु यहाँ कड़जुम्मा कड़जुम्मा कथन होने से यहाँ से निकलना, पुनः सभी का आना असंभव है, त्रस जीवों से आकर उत्पन्न होने की अपेक्षा से कहा है परन्तु वह वास्तविक उत्पाद नहीं है, एकेन्द्रियों में प्रति समय अनन्त जीवों का उत्पाद होता है, इसलिए एकेन्द्रिय की अपेक्षा कायसंवेध असंभव होने से नहीं कहा है।
(28)	आहार द्वार	निर्व्याघात नियम 6 दिशा का, व्याघात आसरी 3-4-5 दिशा का 288 बोलों का आहार करते हैं।
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष (कृतयुग्म कृतयुग्म महायुग्म से)
(30)	समुद्घात द्वार	प्रथम की चार
(31)	समोहया असमो.	दोनों मरण।
(32)	च्यवन द्वार	मनुष्य के 3 तिर्यंच के 46 यों 49 स्थानों में उत्पन्न होते हैं।
(33)	उपपात द्वार	सभी प्राण, भूत, जीव, सत्व पहले कड़जुम्मा कड़जुम्मा रूप से एकेन्द्रियपणे अनेक बार या अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं।

''पढम'' के दूसरे उद्देशक में 10 बोल (द्वार) में विशेषता होती है। 1. अवगाहना जघन्य, 2. आयु अबंध, 3. आयु अनुदीरक, 6 या 7 के उदीरक है। 4. नो उश्वास निश्वास वाले हैं। 5. सप्तविध बंधक ही है। 6. आयुष्य जघन्य, 7. अनुबंध आयु के समान, 8. समुद्घात दो होती है- वेदनीय कषाय, 9. मरण नहीं, 10. च्यवन- गति नहीं।

(1)	अवगाहना	जघन्य उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग।
(2)	आयु बंधक	आयु के अबंधक है।
(3)	उदीरणा	छः कर्म के उदीरक, वेदनीय के उदीरक, अनुदीरक, आयुष्य के अनुदीरक।
(4) (5)	उच्छवास बंध	उच्छवास, निःश्वास नहीं होते (नो उच्छवास निःश्वास वाले हैं) सात कर्मों के बंधक, है आठ के नहीं।
(6)	अनुबंध	काल की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट एक समय।
(7)	स्थिति	जघन्य उत्कृष्ट एक समय आयु के समान।
(8)	समुद्घात	दो वेदनीय, कषाय।
(9)	मरण	समोहया असमोहया कोई भी मरण नहीं होता।
(10)	च्यवन	च्यवन गति नहीं। मरते नहीं।

तीसरा और पांचवा उद्देशक के समान है। शेष सभी उद्देशक दूसरे उद्देशक के समान है, चौथे आठवें दसवें उद्देशक में देव उत्पन्न नहीं होते और लेश्या तीन होती है।

इसका कारण यह है कि पहला तीसरा और पांचवा उद्देशक लगभग पूरे भव स्वरूप है। शेष एक-एक समय की स्थिति वाले हैं। उनके दो विभाग है- प्रथम समय वाले एवं चरम समय वाले। चरम समय वाले तीन है- चौथा, आठवां, दसवां, ये एक समय की अपेक्षा वाले एवं चरम है। अतः देवों के आने का निषेध है अर्थात् यहां तेजोलेश्या नहीं रहने से देवत्व भाव को भी गौण किया गया है। एवं तेजोलेश्या और देवत्व दोनों का निषेध किया है। शेष पांच उद्देशक प्रथम समयवर्त्ती एक समय वाले हैं। ये देव से तत्काल आये हो सकते हैं। अतः इनमें देव तेजोलेश्या को गोण नहीं किया गया है। यह एक महायुग्म की अपेक्षा वर्णन हुआ इसी प्रकार 16महायुग्मों की अपेक्षा वर्णन जान लेना। यह पहले अंतर शतक के 11 उद्देशक हुए। लेश्या, भवी से 12 अंतर शतक एवं 132 उद्देशक पूर्ववत जानना।

विकलेन्द्रिय महायुग्म शतक 36 से 39 तक

एकेन्द्रिय के महायुग्म शतक के 12 अंतर शतक और 132 उद्देश्क के समान बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौरेन्द्रिय असन्नी पंचेन्द्रिय के इन चार शतकों के 12-12 अंतर शतक और 132-132 उद्देशक है।

(1)	उपपात द्वार	मनुष्य और तिर्यंच दो गतियों से (मनुष्य के 3 तिर्यंच 46) 49 ठिकानों से
(2)	परिमाण द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा एक समय में 16, 32, 48 यावत् संख्य, असंख्य।
(3)	अपहार द्वार	एक-एक समय संख्य-असंख्य अपहरे तो भी असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में भी खाली नहीं होवे।
(4)	अवगाहना द्वार	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट 12 योजन
(5)	बंधक द्वार	सात कर्म के बंधक, आयुष्य के बंधक भी अबंधक भी
(6)	वेदक द्वार	आठों कर्मों के वेदक, साता वेदक भी असाता वेदक भी
(7)	उदय द्वार	आठों कर्मों का उदय
(8)	उदीरणा द्वार	छः कर्म की उदीरणा, आयुष्य वेदनीय के उदीरक भी, अनुदीरक भी
(9)	लेश्या द्वार	कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या
(10)	दृष्टि द्वार	दो दृष्टि (सम और मिथ्या)
(11)	ज्ञान द्वार	दो ज्ञान दो अज्ञान
(12)	योग द्वार	दो योग-काय योग, वचन योग
(13)	उपयोग द्वार	दो-साकार, अनाकार
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा नहीं, शरीर की अपेक्षा औदारिक तैजस के 20, कार्मण के 16
(15)	उच्छ्वास द्वार	उच्छ्वासक भी, निःश्वासक भी, नो उच्छ्वास निःश्वासक भी
(16)	आहारक द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी
(17)	विरति द्वार	अविरति
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय है, अक्रिय नहीं
(19)	कर्मबंधक द्वार	सात या आठ कर्म के बंधक
(20)	संज्ञा द्वार	चार संज्ञा
(21)	कषाय द्वार	चार कषाय
(22)	वेद द्वार	एक नपुंसक वेद

(23)	वेदबंध	तीनों वेद बांधते हैं।
(24)	संज्ञी द्वार	असंज्ञी है
(25)	इन्द्रिय द्वार	सइन्द्रिय हैं
(26)	अनुबंध काल द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता काल
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता
(28)	आहार द्वार	नियमा 6 दिशा का 288 प्रकार का बोलों का आहार
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 12 वर्ष (यह कड़जुम्मा कड़जुम्मा आदि महाजुम्मा से)
(30)	समुद्घात द्वार	पहले की तीन-वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक समुद्घात
(31)	समोहया असमो.	समोहया असमोहया दोनों मरण मरते हैं।
(32)	च्यवन द्वार	मरकर मनुष्य तिर्यंच दोनों के 49 (46+3) ठिकानों में उत्पन्न होते हैं।
(33)	उपपात द्वार	सब प्राण, भूत, जीव, सत्व, बेइन्द्रिय कड़जुम्मा कड़जुम्मा अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुके हैं।

अवगाहना लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, अपहार संख्या स्थिति आहार समुद्घात बेइन्द्रिय आदि में जितनी जितनी होती है उतनी-उतनी समझना।

दूसरे उद्देशक में वचन योग विशेष कम होगा। शेष वर्णन एकेन्द्रिय के अनुसार ही हैं एवं 10 णाणत्ते (फर्क) है। चौथे आठवें दसवें उद्देशक में सम्यग्दृष्टि और ज्ञान नहीं कहना।

भवी अभवी के अंतर शतकों में सर्व जीव उत्पन्न हो चुके हैं इस बोल का कथन नहीं करना ऐसा 35 से 39 तक के सभी शतकों में यह ध्यान रखना चाहिये। विकलेन्द्रियों में संचिट्ठाणा- संख्यात काल है और असन्नी में अनेक करोड़ पूर्व है।

चालीसवां संज्ञी महायुग्म शतक

इस शतक में 21 अंतर शतक है। क्योंकि सन्नी पंचेन्द्रिय में लेश्या 6 है अतः समुच्चय जीव के 7, भवी के 7, अभवी के 7 यों 21 शतक के 11-11 उद्देशक होने से 231 उद्देशक है।

(1)	उपपात द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा संज्ञी पंचेन्द्रिय चारों गति से आकर उपजते हैं।
(2)	परिमाण द्वार	एक समय में कड़जुम्मा कड़जुम्मा 16, 32, 48 यावत् संख्य, असंख्य उपजे।
(3)	अपहार द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा एक समय में असंख्याता असंख्याता अपहरे तो असंख्याता उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते।
(4)	अवगाहना द्वार	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन।
(5)	बंध द्वार	7 कर्म की भजना (बंधक भी अबंधक भी) वेदनीय की नियमा (12वाँ गुण.) ही है।
(6)	वेदक द्वार	7 कर्मों के वेदक, मोहनीय की भजना (वेदक भी, अवेदक भी) साता असाता है।
(7)	उदय द्वार	7 कर्मों के उदय वाले, मोहनीय के उदय भी, अनुदय भी (उपशांत मोहादि गुणस्थान वाले अनुदयी होते हैं) दसवें गुणस्थान तक मोहनीय का उदय है।
(8)	उदीरणा द्वार	नाम और गौत्र के उदीरक, बाकी छः कर्मों के उदीरक भी अनुदीरक भी है। क्षीण मोहनीय गुणस्थान तक नाम और गौत्र की उदीरणा, प्रमत्त संयत तक आठों की, आयुष्य कर्म आवलिका मात्र रहे तब तक सात की, तीसरे में आठ की (मरण नहीं होता इसलिए) अप्रमत्त आदि चार में वेदनीय, आयु के सिवाय छः की, सूक्ष्म सम्पराय आवलिका मात्र रहे तब मोहनीय, वेदनीय, आयु छोड़ पाँच की, उपशांत मोह में पाँच की, क्षीण मोहनीय गुणस्थान तक समय आवलिका मात्र रहे तब नाम और गौत्र की। सयोगी केवली में भी इन दो की, अयोगी में उदीरणा नहीं होती।
(9)	लेश्या द्वार	छहों लेश्याएं होती हैं।
(10)	दृष्टि द्वार	तीन दृष्टि
(11)	ज्ञान द्वार	4 ज्ञान, तीन अज्ञान
(12)	योग द्वार	तीन योग

(13)	उपयोग द्वार	साकार उपयोग, अनाकार उपयोग
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा वर्ण नहीं। शरीर–औदारिक, वैक्रिय, आहारक,
		तैजस से 20 बोल, कार्मण शरीर में 16 वर्णादि बोल।
(15)	उच्छवास द्वार	उच्छवासक भी, निःश्वासक भी, नो उच्छवासक निःश्वासक भी है।
(16)	आहार द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी है।
(17)	विरति द्वार	विरति (सर्वविरति) भी, अविरति भी, विरताविरति भी है।
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय है, अक्रिय नहीं।
(19)	कर्मबंधक द्वार	सप्तविध, अष्टविध, षड्विध, एकविध कर्म के बंधक है, अबंधक नहीं।
(20)	संज्ञा द्वार	चारों संज्ञा
(21)	कषाय द्वार	चारों कषाय, अकषायी भी होते हैं।
(22)	वेद द्वार	तीनों वेद, अवेदी भी।
(23)	वेदबंध	तीनों वेद बांधते हैं, और नहीं भी बांधते हैं।
(24)	संज्ञी द्वार	संज्ञी है, असंज्ञी नहीं
(25)	इन्द्रिय द्वार	सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं
(26)	अनुबंध द्वार	जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अनेक सौ सागर साधिक काल तक रहते हैं।
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता।
(28)	आहार द्वार	नियमा 6 दिशा का, 288 बोलों का आहार लेते हैं।
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम।
(30)	समुद्घात द्वार	6 समुद्घात (केवली समुद्घात छोड़कर)।
(31)	समोहया असमो.	समोहया असमोहया दोनों मरण मरते हैं।
(32)	च्यवन द्वार	संज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर चारों गति में सब ठिकानों में (नारकी के सात पर्याप्त अपर्याप्त, ये 14 नारकी, 46 तिर्यंच, 3 मनुष्य और 98 देवता) (10 भवनपति, 8 वाणव्यंतर, 5 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर ये 49 के पर्याप्त अपर्याप्त) ये कुल 161 ठिकाणों में जाता है।
(33)	उपपात द्वार	सभी प्राण, भूत, जीव, सत्व कड़जुम्मा कड़जुम्मा रूप से पहले अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं।

16 महायुग्म और उनके एक एक उत्पात की अपेक्षा 33-33 द्वारों का वर्णन पूर्ववत् जानना। ये द्वार 35 वें शतक में कहे गये हैं।

इस सन्नी शतक में 12वें गुणस्थान तक के सभी सन्नी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य आदि का समावेश है। अतः कुछ निम्न द्वारों का वर्णन इस प्रकार है-

आगति- सभी जीव स्थानों से। कर्म बंध- 7 की भजना वेदनीय की नियमा (12 गुणस्थान ही है इसलिये)। कर्म उदय- 7 की नियमा मोहनीय की भजना। उदीरणा- 6 कर्म की भजना, नाम गौत्र की नियमा। ज्ञान - 4 ज्ञान 3 अज्ञान। विरति तीनों है। क्रिया-सक्रिय ही है। बंधक- सप्तविध, अष्टविध, छः विध (षडविध) और एक विध बंधक भी है अबंधक नहीं है। संज्ञा- 5, कषाय (अकषायी है) इसी तरह अवेदी सहित 4 वेद है। वेद के बंधक अबंधक दोनों है। सइन्द्रिय है। अनिन्द्रिय नहीं है। योग 3 है, अयोगी नहीं है। अनुबंध अनेक सौ सागर साधिक है। कायसंवेध- समुच्चय पंचेन्द्रिय होने से कायसंवेध नहीं होता है। एक दंडक हो तो कायसंवेध होता है, समुद्घात-6 गति-सर्वत्र।

(1)	अवगाहना	जघन्य होती है अंगुल के असंख्यातवें भाग की
(2)	बंध	आयु का अबंध, 7 कर्मों का बंध
(3)	वेदन	आठ कर्मों को वेदते हैं, साता असाता दोनों के वेदक
(4)	उदय	आठ कर्मों का उदय
(5)	उदीरणा	आयुष्य के अनुदीरक, वेदनीय के उदीरक अनुदीरक, 6 कर्म के उदीरक
(6)	दृष्टि द्वार	दो दृष्टि (सम, मिथ्या) पाई जाती है
(7)	योग द्वार	एक काययोग
(8)	श्वासोच्छवास	नो उच्छवासक नो निःश्वासक (उच्छवासक, निःश्वासक नहीं होते)
(9)	विरति	अविरति वाले होते हैं
(10)	बंधक	7 कर्मों के बंधक, आयुष्य के अबंधक
(11)	संज्ञा	चार संज्ञा (नो संज्ञा वाले नहीं)
(12)	कषाय	चार कषाय (अकषायी नहीं)
(13)	वेद	तीनों वेद वाले (अवेदी नहीं)
(14)	वेदबंध	तीनों वेद के बंधक, अबंधक नहीं
(15)	अनुबंध	जघन्य उत्कृष्ट एक समय का अनुबंध
(16)	स्थिति	एक समय की
(17)	समुद्घात	दो-वेदनीय और कषाय समुद्घात
(18)	मरण	समोहया असमोहया दोनों मरण नहीं मरते हैं।
(19)	च्यवन	उनका च्यवन (मरण) नहीं होता।

दूसरे उद्देशक में 17 बोलों में फर्क (णाणत्ता) होता है। यथा- 1. अवगाहन- जघन्य होती है। 2. आयु का अबंध, 7 का बंध। 3. वेदना- दोनों। 4. उदय-आठ ही कर्म का। 5. उदीरणा- आयु की नहीं। वेदनीय की भजना, शेष 6नियमा। 6. दृष्टि 2, 7. योग-1, 8. नो उश्वास निश्वास है। 9. अविरत ही होते हैं। 10. सप्तविध बंधक ही है। 11. संज्ञा 4, 12. कषाय 4, 13. वेद 3, 14. अनुबंध 1 समय ही। 15. स्थिति 1 समय। 16-समुद्घात 2, 17. तीन वेद के बंधक है, अबंधक नहीं। 18. मरण नहीं है। 19. गति भी नहीं है।

पहला तीसरा पांचवा उद्देशक एक समान है, शेष आठ उद्देशक एक समान है अर्थात् चौथा आठवां दसवां में भी कोई अंतर नहीं है।

एक युग्म के समान 16ही युग्म कहना किन्तु परिमाण द्वार में अपनी -अपनी राशि का भिन्न परिमाण कहना। यह प्रथम अंतर शतक पूर्ण हुआ।

कृष्ण लेशी अंतर शतक के प्रथम उद्देशक में 12 द्वार में फर्क होता है। यथा- 1. बंध, 2. वेदक, 3. उदय, 4. उदीरणा, 5. लेश्या, 6. बंधक, 7. संज्ञा, 8. कषाय, 9. वेद बंधक ये 9 द्वार बेइन्द्रिय के समान, 10. अवेदी नहीं तीन वेद 11-12 अनुबंध-स्थिति-एक समय और उद्गार। शेष द्वार सन्नी 33 सागर के प्रथम अंतर शतक के समान है। यह दूसरे अंतर शतक का प्रथम उद्देशक हुआ।

दूसरे उद्देशक में- 13 द्वार में फर्क (णाणत्ता) होता है- वह प्रथम शतक के दूसरे उद्देशक के समान जानना। उन द्वारों के

(1)	अवगाहना-	अंगुल के असंख्यातवें भाग
(2)	बंधक-	सात के बंधक, आयुष्य के अबंधक
(3)	उदीरणा-	छः कर्मों के उदीरक, वेदनीय के उदीरक-अनुदीरक दोनों, आयुष्य के अनुदीरक
(4)	दृष्टि-	दो (सम, मिथ्या)
(5)	योग-	एक काययोग
(6)	उच्छवास-	नो उच्छवासक नो निःश्वासक (उच्छवास की भी नहीं, निःश्वासक भी नहीं)
(7)	विरति-	अविरति
(8)	बंधक-	7 कर्म के बंधक, आयु के अबंधक
(9)	अनुबंध-	एक समय का
(10)	स्थिति-	1 समय की
(11)	समुद्घात-	2
(12)	समोहया असमोहया मरण नहीं	
(13)	च्यवन नहीं होता।	

नाम-1. अवगाहना, 2. बंध, 3. उदीरणा, 4. दृष्टि, 5. योग, 6. श्वास, 7. विरति, 8. बंधक, 9. स्थिति, 10. अनुबंध, 11. समुद्घात, 12. मरण, 13. गति।

शेष वर्णन प्रथम अंतर शतक के समान है।

कृष्ण लेश्या के समान नील लेश्या का शतक है किन्तु इसकी स्थिति अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर साधिक है। यहां साधिक स्थिति में पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक है और अनुबंध में अंतर्मुहूर्त्त और अधिक है जो उसी में समाविष्ट है।

(1)	उपपात द्वार-	आगति में 5 अणुत्तर विमान नहीं (वहाँ अभवी नहीं जाते)
(2)	दृष्टि-	एक मिथ्यादृष्टि
(3)	ज्ञान-	नहीं, अज्ञान 3 है
(4)	विरति-	अविरति होते हैं।
(5)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनेक सौ सागर साधिक
(6)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम (7वीं नरक)
(7)	समुद्घात-	पहले के पाँच समुद्घात
(8)	लेश्या-	छहों लेश्याएं
(9)	च्यवन-	पाँच अणुत्तर विमान छोड़कर (वर्जकर) च्यवन होता है।

अभवी कृष्णलेशी में तीन णाणत्ता है-

(1)	लेश्या-	एक कृष्ण लेश्या
(2)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर अन्तर्मुहूर्त साधिक
(3)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर

नीललेशी में तीन नाणत्ते-

(1)	लेश्या-	नीललेशी
(2)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर पल्योपम के
		असंख्यातवें भाग अधिक
(3)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर पल्य के असंख्यातवें भाग अधिक अन्य सारा अधिकार औघिक (अभवी के) की तरह (40-17-11)

अभवी कापोतलेशी में तीन नाणत्ते-

(1) लेश्या-कापोत

(2-3) अनुबंध और स्थिति- ज. 1 समय उत्कृष्ट तीन सागर पल्य के असंख्यात भाग अधिक अन्य अधिकार पूर्ववत् (श. 40 अं.श. 18-11)

अभवी तेजो लेश्या तीन नाणत्ते

(1) लेश्या- तेजो लेश्या

(2-3) अनुबंध और स्थिति- जघन्य एक समय उत्कृष्ट दो सागर पल्य के असंख्यातवें भाग अधिक शेष वर्णन पूर्ववत्
(40-19-11)

अभवी पद्म लेश्या तीन नाणत्ते (1) लेश्या-पद्म लेश्या

(2) अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर अन्तर्मुहूर्त अधिक

(3) स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर। अन्य वर्णन पूर्ववत् (40-20-11)

अभवी शुक्ल लेश्या-तीन णाणत्ता (1) लेश्या-एक शुक्ल लेश्या होती है

(2) अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 31 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक

(3) स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 31 सागर बाकी सारा पूर्ववत् (40-21-11)

40वें शतक के 21 अन्तर शतक और 231 उद्देशे पूर्ण

कापोत लेश्या शतक स्थिति अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट तीन सागर साधिक है। साधिक का अर्थ उपरवत् है।

तेजोलेश्या के शतक में स्थिति अनुबंध जघन्य एक समय है उत्कृष्ट 2 सागर साधिक है। शेष वर्णन कृष्ण लेश्या के समान है किन्तु इनमें नो संज्ञोपयुक्त भी होते हैं। साधिक का अर्थ उपरवत् है।

पद्मलेश्या के शतक में अनुबंध उत्कृष्ट दस सागर अंतर्मुहूर्त्त साधिक है। स्थिति उत्कृष्ट 10 सागर की ही होती है।

शुक्ल लेश्या का शतक प्रथम शतक के समान ही कहना किन्तु शुक्ल लेश्या का कथन करना, स्थिति उत्कृष्ट 33 सागर की। अनुबंध 33 सागर अंतर्मुहूर्त्त साधिक कहना।

इसी तरह सात भवी के शतक हैं किन्तु सर्व जीव उत्पन्न होने का द्वार नहीं कहना।

अभवी में 9 द्वार में अंतर (फर्क) है- 1. आगति- अणुत्तर विमान नहीं, 2. दृष्टि 1, 3. ज्ञान नहीं अज्ञान 3 हैं। 4. अविरत है। 5. स्थिति 1 समय और 33 सागर। 6. समुद्घात 5, 7. अनुबंध-1 समय और अनेक सौ सागर साधिक, 8. लेश्या 6, 9. गति- अणुत्तर विमान में नहीं। सर्व जीव उत्पन्न होने का द्वार नहीं कहना। भवी अभवी के लेश्या शतकों में स्थिति औघिक के (6 लेश्याओं के) दूसरे से सातवें अंतर शतक के समान कहना।

ये 21 अंतर शतक के 231 उद्देशक पूर्ण हुए।

इकतालीसवां राशि युग्म शतक

इस शतक में अंतर शतक और 11-11 उद्देशक नहीं है किन्तु केवल उद्देशक ही है- 1.समुच्चय, 2. भवी, 3. अभवी, 4. समदृष्टि, 5. मिथ्या दृष्टि, 6. कृष्ण पक्षी, 7. शुक्ल पक्षी इनमें 6 लेश्या होने से 7-7 उद्देशक है अतः 7×7 = 49 उद्देशक हुए। इनको चार राशि युग्म से गुणा करने पर 49×4 = 196 उद्देशक होते हैं।

राशि युग्म चार इस प्रकार है- 1.कृतयुग्म , 2. त्रयोज, 3. द्वापर, 4. कल्योज। सामान्य युग्म के समान ही ये राशि युग्म है और इनकी संख्या भी सामान्य युग्म के समान ही है।

राशि युग्म कृत युग्म नैरयिक की आगति- पूर्ववत् (प्रज्ञापनावत्) हैं। एक समय में 4-8-12 उत्पन्न होते हैं। सांतर निरंतर दोनों उत्पन्न होते हैं। सांतर में जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्य समय का अंतर होता है। निरंतर जघन्य 2 समय उत्कृष्ट असंख्य समय तक उत्पन्न होते हैं। एक समय में कोई भी एक युग्म ही होता है। दूसरा युग्म साथ में नहीं होता है। प्लवक की गति से एवं आत्म ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं, ये आत्म असंयम से उत्पन्न होते हैं। और असंयम से ही जीते हैं। सलेशी एवं सक्रिय ही होते हैं। अतः सिद्ध नहीं होते हैं।

इसी तरह तेवीस दंडक जानना। वनस्पति में 4-8यावत् अनंत उत्पन्न होते हैं शेष सभी में असंख्य उत्पन्न होते हैं।

मनुष्य में उत्कृष्ट संख्याता या असंख्याता उत्पन्न होते हैं। आत्म असंयम से उत्पन्न होते हैं किन्तु आत्म असंयम आत्म संयम दोनों से जीते हैं। इसी तरह सलेशी अलेशी और सक्रिय अक्रिय दोनों होते हैं। अक्रिय नियमा सिद्ध बनते हैं शेष भजना से सिद्ध होते हैं।

वैमानिक देव आत्म संयम से भी उत्पन्न होते हैं, असंयम से भी उत्पन्न होते हैं। यह पहला उद्देशा पूर्ण हुआ। दूसरा, तीसरा, चौथा उद्देशा समुच्चय त्र्योज, द्वापर कल्योज युग्म के राशि युग्म का है। उत्पात संख्या में अंतर है शेष वर्णन 24 दंडक का प्रथम उद्देशक के समान है।

लेश्या दृष्टि आदि जहां जितनी हो उस दंडक में उतनी पृच्छा करना। जिससे दंडक और जीव के बोल कम ज्यादा होंगे किन्तु प्रत्येक लेश्या के उद्देशक 4-4 होते हैं और चार उद्देशक है यों कुल 6×4+4 = 28 उद्देशक इसी प्रकार है। भवी के भी 28 उद्देशक इसी प्रकार हैं। अभवी में मनुष्य और नरक का कथन समान है केवल उत्कृष्ट संख्याता असंख्याता का फर्क है।

सम्यग्दृष्टि का कथन पहले उद्देशे के समान है। 28 उद्देशे भवी के समान है। मिथ्या दृष्टि का वर्णन अभवी के समान 28 उद्देशों में हैं। कृष्ण पक्षी के 28 उद्देशे अभवी के समान है। शुक्ल पक्षी के भवी के समान 28 उद्देशें हैं।

ये कुल 28×7 = 196 उद्देशक पूर्ण हुए।

यह 41 वां शतक पूर्ण हुआ।

विशेष– शतक 31 से 41 तक युग्म, श्रेणी, महायुग्म और राशि युग्म के कथन के साथ अनेक द्वारों से विषयों का वर्णन किया गया है। तत्त्व विषय इसमें अधिकतम उक्तपूर्व है। नया तत्त्व भी है जरूर किन्तु यह पूर्व शतकों की अपेक्षा इन ग्यारह शतकों में बहुत कम है। विशेष पद्धति से युग्म आदि के अवलम्बन से प्रायः उक्त पूर्व विषयों का बोध कराया गया है। अतः इनमें वह विशेष पद्धति, शतक उद्देशों का हिसाब, युग्म महायुग्म आदि की गणित ध्यान रखकर समझने योग्य है। उसी को समझते हुए कुछ नूतन तत्त्व सहज प्राप्त हो सकते हैं यह इन शतकों की विशेषता है।

32 शतक के बाद 33 से 39 शतक तक 7 शतक में अंतर शतक 12-12 है, 40 वें शतक में 21 अंतर शतक है 41 वें शतक में अंतर शतक नहीं है। इस प्रकार ये 32+(12×7) 84+21+1 = 138 कुल शतक है, 41 मूल शतक है।

उद्देशकों की संख्या 10, 12, 34, 11 आदि है, सब मिलाकर 1925 कही गई है किन्तु उपलब्ध 1923 ही होती है। दो संख्या का लिपि प्रमाद या काल दोष से अथवा समझ भ्रम से अंतर पड़ गया है।

गोशालक वर्णन का शतक पंद्रहवां एक दिन में अध्ययन करना चाहिये। शेष रह जाय तो दूसरे दिन आयंबिल करके पढ़ना चाहिये। और भी शेष रह जाय तो तीसरे दिन भी आयंबिल करके पढ़ना चाहिये।

नोट– विशेष जानकारी के लिये सैलाना से प्रकाशित विवेचन युक्त भगवती सूत्र के सात भागों का, बीकानेर से प्रकाशित भगवती सूत्र के थोकड़ों के 9 भागों का, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर से प्रकाशित विवेचन युक्त इस सूत्र का अध्ययन करना चाहिये।

।। व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र सारांश समाप्त ।।

आगम सारांश ग्रंथों के लेखक

परिचय

लेखक

वरिष्ठ स्वाध्यायी तत्त्व चिंतक

"जिन शासन रत्न"

श्री विमल कुमार नवलखा

प्रस्तुत 'जैनागम सारांश' (आगम बत्तीसी) को 4 भागों में विभक्त कर अपने आगम कौशल्य से ग्रंथ के रचनाकर तत्त्वचिन्तक आगमों के अध्येता श्री विमल कुमारजी नवलखा का जन्म वि.सं. २०११ के कार्तिक सुदी ५ ज्ञान पंचमी दि. १-११-१९५४ को भीलवाड़ा जिलान्तर्गत आसीन्द तहसील के जगपुरा ग्राम में हुआ।

पुण्योदय से आप अनेकों आचार्य एवं विद्वानों संत मुनिराजों एवं विदुषी साध्वी रत्नों के सम्पर्क में आये। गुरुदेवों के शुभाशीर्वाद से अपनी प्रामाणिकता के बल पर व्यावसायिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित होकर परिवार व समाज की सेवा में अग्रसर बनें। आपकी धार्मिक-भावना एवं श्रुत-सेवा की रूचि प्रबल से प्रबलत्तर होती गई।

सन् १९७५ में आप श्री स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा के सक्रिय एवं कर्मठ सदस्य बनें तथा पूरे भारतवर्ष में प्रत्येक राज्य के प्रमुख नगरों में पधारकर पर्युषण पर्वाराधनार्थ सेवाएं प्रदान की। जैन-समाज के लिए अति उपयोगी जैनागमों के हिन्दी सारांश तथा जैन तत्त्व दर्शन के दो खण्ड (भगवती, प्रज्ञापना एवं विविध सुत्तागमों के थोकड़े) तथा अन्तर्मन के मोती (पयुर्षण प्रवचनोपयोगी) जैनागमों में मध्यलोक एवं जैन धर्म में उत्कृष्ट तप संलेखना संथारा, जैनागमों में लोकस्वरूप आदि जैन-धर्म-दर्शन के लिए अप्रतिम देन है। आपकी इस श्रुत-सेवा से सम्पूर्ण जैन समाज गौरवान्वित हुआ है। श्रुत सेवा से प्रभावित होकर दिनांक 7 जनवरी 2024 को जोधपुर में विधायक श्री अतुल जी भंसाली द्वारा "जिनशासन रत्न" की उपाधि से अलंकृत किया है।

श्री विमल कुमारजी नवलखा के पुज्यनीय पिताजी श्रीमान् फतेहलालजी सा. नवलखा एवं मातृश्री श्रीमती उगमदेवीजी नवलखा भी अत्यन्त धर्म परायण, महान् व्यक्तित्व के धनी है। धर्मपत्नि श्रीमती सुशीलादेवीजी नवलखा की सेवा तो अतुल्य है। इन्होंने दो-दो मासखण की तपस्याएं भी की हैं। आज भी कीम पीपोदरा में जैन संतमुनिराजों एवं महासतियांजी की सेवा में अनवरत लगे रहते हैं। समाज की सेवा तो इस परिवार का प्रमुख गुण है। श्री विमलजी नवलखा कई वर्षों से दक्षिण गुजरात राजस्थान स्थानकवासी जैन महासंघ के मंत्री के रूप में समाज सेवा में अग्रसर हैं।

इनके पाँच पुत्र रत्न हैं। श्री विनय कुमार, तरूण कुमार, चेतन प्रकाश, विकास एवं लोकेश ये पाँचों ही सुपुत्र अत्यन्त धर्मानुरागी, निर्व्यसनी, सदाचारी और समस्त सद्गुणों से युक्त चरित्रनिष्ठ सुश्रावक युवा रत्न हैं। साधुसंतों की सेवा, समाज की सेवा तो मानों विरासत से मिले सद्गुण हैं। समाज सेवा में हमेशा अग्रसर रहता यह सम्पूर्ण परिवार वास्तव में समाज के लिए एक उदाहरण है, दृष्टान्त है। श्री विमलजी की दो बहिनें श्रद्धेया शीलप्रभाजी म.सा. एवं श्रद्धेया सत्यप्रभाजी म.सा. आचार्य श्री विजयराजजी म.सा. के सानिध्य में संयम-साधना में निरंतर अग्रसर है।

जिन शासन की सेवा में अग्रसर इस परिवार की पारिवारिक और सामाजिक समृद्धि हमेशा बनी रहे।

इसी आशा के साथ...